अपरिचित मुख

[उपन्यास]

□

आशुतोष मुखोपाध्याय

□

अनुवाद :

अलका मुखोपाध्याय

अपरिचित मुख

आशुतोष मुखोपाध्याय

हर मनुष्य के जीवन में विडम्बनाएँ होती हैं। यही घटना का रूप धर कर कहानी के ढांचे में उतार दी जाती हैं तो पढ़ कर पाठक का मन मसोसने लगता है। टीस उठती है और थोड़ी बहुत बेचैनी भी होती है।

लेकिन उनकी बेचैनी का अंदाज कौन लगाए, जिनके जीवन की घटनाएँ कहानी या उपन्यास की आधारशिला होती हैं ?....

....अपर्णा के जीवन की यह विडम्बना ही थी कि बहुत वर्षों तक अपने पति के साथ गृहस्थी कर के भी वह उसे बहुत बुरा व्यक्ति ही समझती रही थी। और जब वह मुहूर्त आ उपस्थित हुआ कि वह जीवन भर की व्यथा का बदला लेने को प्रस्तुत हुई तो उसके 'बुरे' पति ने ऐसा काण्ड कर दिखाया कि अपर्णा को लगा कि इतने वर्षों का परिचित पति का यह चेहरा बिल्कुल अनजाना और अपरिचित मुख है। और अपर्णा हताशा से पराजित हो गई थी, क्योंकि उसकी जीवन भर की धारणा टूटे कांच की तरह टुकड़े-टुकड़े हो बिखर गई थी।

अपर्णा के जीवन की यही विडम्बना इस उपन्यास की कथा है, जो जितनी रोचक है उससे अधिक विचित्र और साथ ही करुण भी। दर्पपूर्ण होने पर नारी का रूप इस 'अपरिचित मुख' में देखने को मिलेगा।

अपरिचित मुख

एक

उनतालीस वर्ष की आयु में भी अगर किसी महिला का यौवन अटूट रहे, अगर उसके रुचिशील पर सादे पहनावे के बन्धन में शरीर की वक्ररेखायें षोडशी की याद दिलाती हों, अगर उसके हंसने-बोलने में, भ्रू-भंगिमा की लीला में, होंठों के कम्पन में ऐसा कुछ हो जो हर देखने वाले पुरुष की दृष्टि को मदिर बनाये, और इसके साथ अगर और बहुत सारे 'अगर' जुड़े हों, मसलन महिला अगर सुन्दर न होते हुये भी श्रीमयी हो, शिक्षिता हो, मेधाविनी हो, सुसंस्कृत समाज में उठने-बैठने के कारण जिसकी बोध और रुचि में शालीनता और सौम्यता हो, अगर उसका बोध निर्बोधों की बोधबुद्धि जैसी तरल न हो, प्रखर और आत्मपरक हो, अगर उसे ऐसा कोई व्यक्ति मिला हो जो उसे अपने पति से अधिक प्रभावशाली प्रतीत होता हो, और बड़े लम्बे अर्से से चलती पति से ठण्डी लड़ाई के फलस्वरूप पति से असहयोग की भावना जड़ पकड़ गई हो, और—अन्त में, अगर इन्हीं महिला की एक इक्कीस वर्ष की कन्या हो, जिसका रिश्ता तय हो चुका हो, रात बीतने पर जिसका विवाह होने वाला हो, और अगर इस विवाह में सम्मिलित होने वाले आत्मीय जनों और अभ्यागतों का तांता बंध चुका हो, तो फिर, मतलब कि इतने सारे 'अगरों' से सुशोभिता महिला की मानसिक स्थिति और सन्तुलन का विश्लेषण करना क्या किसी विशेषज्ञ के लिये भी सम्भव है ?

विश्लेषण करने का प्रयास भी कभी किसी ने नहीं किया। किया था एक ने। एक बार। वे हैं समीरण दत्त। यह सज्जन वही भाग्यवान हैं जिन्हें यह महिला अपने पति से अधिक प्रभावशाली अपर गुणशाली मानती है। पर घर पर इतने मेहमानों, इतने उल्टे-सीधे कामों के बीच किसी व्यक्ति का अपनी भावनाओं को सुलझाये रखना ही सम्भव नहीं होता, दूसरे की मनःस्थिति का सफल विश्लेषण किस बूते पर करेगा ? और फिर जिन महिला की मानसिक स्थिति के विश्लेषण की समस्या है, इस भीड़-भाड़ में उन्हें निभृत में पाने की कल्पना करना भी कठिन है। वे तो एक झलक यहाँ तो एक झलक वहाँ दिखाई पड़ रही हैं। चकरघिन्नी की थिरकती हजार समस्यायें सुलझा रही हैं। पल भर को जो दीख रही हैं उसमें उनके चेहरे पर एक ही भाव स्थायी है—वह है उद्वेग। इस स्थिति में जो किया जा सकता है, समीरण दत्त वही कर रहे हैं। जब भी आँखें मिल रही हैं, दृष्टि-सेतु द्वारा आश्वासन पहुँचाने का प्रयास कर रहे हैं, 'इतना क्या चिन्तित होना ? सारा काम करीने से हो जायेगा।'

इसमें सन्देह है कि घर में उपस्थित लोगों में से और किसी को यह पता हो कि अपर्णा सोम उद्विग्न हैं। चिन्तित हैं। उनका दोष नहीं, कारण मामला चाहे कितना भी गम्भीर हो, घर पर अपर्णा सोम की आवाज कभी ऊंची न होती। उन्होंने अपने

अस्तित्व पर संयम की लगाम तान रखी है। आज, सुपर्णा की शादी के पहले दिन, सुपर्णा की माँ अपर्णा सोम उद्विग्न या उतावली जितनी हैं, थकी हैं उससे कहीं अधिक। अगर इस क्षण यह संभव होता कि वे अपनी सारी जिम्मेदारी उतार सकतीं, किसी ओर को सौंप कर आराम कर सकतीं तो शायद वे सबसे अधिक खुश होतीं। दोपहर के बाद से ही उन्हें लग रहा है कि उनका दम घुट रहा है। करें भी क्या? अकेली जान, कितना सम्हालें? कितने तरफ ध्यान दें? किसको-किसको बतायें उसका काम, क्या करें, कैसे करें! इतना बोझ! इतनी जिम्मेदारी! दिमाग झन्ना रहा है, यह तो बिल्कुल ही उचित है।

............बेटी उनकी है। उनकी बेटी की शादी है—अतः जिम्मेदारी भी उनकी ही है। कम से कम उनका ऐसा ही ख्याल है। उनके विचार में, इस परिवार में, ऐसा कोई नहीं जो इस जिम्मेदारी को निभाने में उनका साथी हो सकता है, सहचर हो सकता है।.......परिवार की लक्ष्मण-रेखा के बाहर एक हैं अवश्य जो यह कार्य कर सकते हैं, पर इस परिवार में रह कर, सिन्दूर की इन्दुलेखा धारण करते हुये उन पर कितना उत्तरदायित्व डाला जा सकता है? बाद की बात बाद में। बाद की बात मतलब कल की रात के बीतने के बाद। सुपर्णा की शादी का काम सम्पन्न हो जाने के बाद। सुपर्णा के विवाह का दिन वह दिन है जिसे सामने रख उन्होंने पहाड़ से ग्यारह लम्बे साल पार किये हैं। इस दिन ने उन्हें आशा की वह ज्योति दिखाई, साहस और शक्ति के शस्त्र दिये, जिनके बल पर उन्होंने ग्यारह वर्षों की सारी परेशानियाँ झेली हैं। रात बीतते ही वह दिन उदित होगा। उसके बाद क्या होगा, वह तो तब देखा जायेगा। इस एक बात पर अपर्णा का विश्वास दृढ़ है कि सुपर्णा के विवाह के पश्चात् एक उलटफेर होगा अवश्य। उन्हें यह भी विश्वास है कि उलटफेर कोई मामूली वजन का न होगा। उस उलटफेर के दरम्यान बाहरी व्यक्ति यह समीरण दत्त अपनी बलिष्ठ भुजायें बढ़ा कर उनकी सहायता करना कबूलेंगे या नहीं, इस पर अपर्णा ने कभी सोचने-विचारने या सन्देह प्रकट करने की आवश्यकता नहीं देखी। जरूरत पड़े तो वे बिना किसी साथी-सहचर के ही एकाकी जीवन बिताने का साहस रखती हैं। साहस ही नहीं, सम्पन्नता भी है। अगले कल के उत्सव समारोह के अन्त में दुनिया देखेगी (ठीक कब देखेगी यह अपर्णा सोम पक्का नहीं बता सकतीं, पर देखेगी अवश्य) कि बेटी की गृहस्थी की बेलें फैलने के पहले ही माँ की बसी-बसाई गृहस्थी उजड़ गई।.......उजड़ तो गयी है ग्यारह साल पहले ही, अब तो मात्र आनुष्ठानिक घोषणा होगी।

सुपर्णा या सुपी के हाथ पीले करने का चित्र बिल्कुल भिन्न ढंग का है। समाज ने इस उत्तरदायित्व के निभाने वालों की जो सीमा बाँधी है वह छोटी नहीं, फिर भी सबसे पहला अधिकार जिसका है वह है कन्या का पिता। अगर पिता पर माँ का विश्वास टोन गया हो, किसी कारणवश, तो बाध्य हो उसे ही इस कार्य को पूरा करने के लिये समरांगण में अवतीर्ण होना पड़ता है। कन्या के विवाह-क्षेत्र में अपर्णा

सोम की भूमिका कुछ ऐसी ही है। आज उन्हें जो इतनी हैरत हो रही है, उद्विग्नता से इतना घिर रही हैं उसका एकमात्र कारण यह कि उन्होंने कभी कल्पना भी नहीं की थी कि इस तरह नष्ट हो जायेंगे उनके सपने। शादी के एक दिन पहले से ही उनके बनाये प्लान, सहेज कर जोड़े इन्तजाम इस प्रकार तूफान की तेजी से उड़ा दिये जायेंगे। एक के बाद एक बाधा जब उनके आगे उपस्थित हो रही है तो पूरी ताकत से वे अपने को रोक रही हैं, समझा रही हैं, कहीं कोई परेशानी नहीं, सब काम ठीक-ठाक चल रहा है। चलता रहेगा।

'माँ, चेतला से मौसी का फोन है। कब से ढूँढ़ रही हूँ आपको। बड़ी देर से लाइन पर हैं मौसी।' समाचार दे कर वृन्दा फिर गायब हो गई। अपर्णा से दो-चार साल छोटी है, फिर भी 'माँ' कहती है। उसके मुख से माँ की पुकार सुनना अच्छा नहीं लगता अपर्णा को। लेकिन शुरू में जब उसे नहीं टोका तो इतने सालों बाद टोकने का कोई तुक नहीं। वैसे वृन्दा है बड़े काम की। अपर्णा उसे मानती हैं। घरेलू बातों में अकसर उसकी सलाह लेती हैं। आयु में समान है तो क्या, अनुभव उनसे अधिक है। फोन की सूचना दे अगर वह रुकी होती तो उसी से कह देतीं कि चेतला वाली मौसी से कह दे, बाद में फोन करने को। पर आज उसी बेचारी को फुर्सत कहाँ? दशभुजा बनी दस काम एक ही साथ सम्हाल रही है। एक काम पूरा कर दूसरा करने को दौड़ रही है। उसको जाते देखती रहीं अपर्णा सोम।

हद हो गई! किधर-किधर जायें एक साथ? लिस्ट हाथ में लिये हवन का सामान मिला रही थीं। कल सुबह ही पुरोहितजी यह सब देखेंगे। वे हैं भी लकीर के फकीर, किसी एक चीज में जरा-सी चूक होगी कि बस बिगड़ उठेंगे। उनकी बातों से लगता है कि हवन और पूजा-सामग्री की विशुद्धता पर ही पुपी के विवाहित जीवन का सुख-दुःख निर्भर करता है। इस लिस्ट के साथ सामान मिलाने के बाद और भी कई लिस्टों का मिलान करना है। फर्नीचर की लिस्ट, जेवर-साड़ियों की लिस्ट। शय्या-सामग्री की लिस्ट। बाप रे बाप! लड़की की शादी न हुई शामत आ गई! अगर उन्हें पहले पता होता कि इतना बखेड़ा होगा तो बेटी से साफ ही कह देतीं कि भई जाकर रजिस्ट्री करवा लो। मुझसे जो बन पड़ेगा धीरे-धीरे दे दूँगी। इस मामले में अपर्णा सोम संस्कार-मुक्त हैं। शादी होने से मतलब, चाहे जिस रीति से क्यों न हो। असल मेल तो मन का मेल है। वह ही तो रजिस्ट्री क्या और वैदिक क्या! मन का मेल न हो तो सारा ताम-झाम ही व्यर्थ है। उनकी अपनी शादी में न तो रीत-रस्म की कमी थी, न धूम-धाम की। बाईस वर्ष पहले की उस घटना के वृक्ष में क्या फल-फूल खिले हैं, वह तो सामने ही हैं। फिर भी, न जाने क्यों अक्ल मारी गई उनकी कि उन्होंने यह बखेड़ा पाल लिया।

महीना मार्गशीर्ष का है। कलकत्ते का क्षणिक जाड़ा चलने की तैयारी पर है, पर अभी भी पसीना टपकने लायक गरमी नहीं आई है। अपर्णा सोम के कानों के कोरों में और होंठ पर पसीने की बूँदें मगर चमक रही हैं। अगर वे सच्चे अर्थों में

गोरी होतीं तो इस वक्त उनका मुख लाल-लाल लगता। लम्बी-सी सांस भर इधर-उधर देखा। कोई दिखाई न पड़ा। मतलब ऐसा कोई जिससे वे कह सकतीं कि जाकर फोन सुन ले। बात कर ले।........झमेला क्या एक किस्म का है ? सुपी कहाँ गई ? फोन पर तो वह भी बात कर सकती थी ! रात बीतने पर जिसकी शादी है उसकी अक्ल की बलिहारी ! अपनी सहेलियों से हा-हा-ठी-ठी करने से फुर्सत हो तब तो कुछ करे !

जहाँ तक सामान का मिलान कर चुकी थीं उस जगह निशान लगा कर अपर्णा सोम उठीं। फोन है भी उधर के कोने वाले कमरे में, जिस कमरे में उनका बस चले तो, कदम न रखें। जिसमें कदम रखने की उनकी इच्छा नहीं होती। फोन था ऐसा ही, कोई जरूरी काम न पड़ते जहाँ वे कभी जातीं भी नहीं। फोन अगर कमरे से निकाल बाहर के बरामदे में लगवा लिया जाता तो शायद उनको उस कमरे में पाँव रखने की पखवाड़े भर में जरूरत न पड़ती। इसी कारण जब कभी सुनती हैं कि उनका फोन आया है, अपर्णा सोम चिढ़ जाती हैं। अब तक फोन उठवा कर बरामदे में लगवाने की बात दो बार कह भी चुकी हैं। पहले दिन बोली थीं, 'अगर मिस्त्री बुलवा फोन बरामदे में फिट करवा लिया जाता तो अच्छा होता।' फोन के मालिक अखबार पढ़ रहे थे। अखबार से मुँह उठा उनकी बात सुना भी उन्होंने। मालिक ही कहना पड़ेगा उन्हें, क्योंकि यह फोन उन्हीं के आफिस की देन है। अपर्णा की बात पूरी होते ही वे फिर अखबार में डूब गये।

........करीब छह महीने बाद अपर्णा सोम ने वही बात फिर कही थी। बात वही थी, कहने का ढंग फर्क था। कहा था कि दिन भर में बेटी के दस-पन्द्रह फोन आते हैं। यह भी कहा था कि किसी की उपस्थिति में सहेलियों से दिल खोल कर बात करने में झिझक होती है उसे। अन्त में कहा था, फोन बरामदे में लगवा देते तो अच्छा होता। बखेड़ा खत्म होता। उस दिन भी फोन के मालिक ने पत्रिका से ध्यान हटा उनकी बात सुन ली थी। फिर पहले दिन की तरह बिना बोले पत्रिका पढ़ने लगे थे।

इस घटना के करीब दो घण्टे बाद बेटी माँ के पास आई थी। कहा था उसने, 'माँ, तुमने पापा से कहा है कि फोन उनके कमरे में रहने से मुझे परेशानी होती है ?'

'हाँ। क्यों ?'

'पापा पूछ रहे थे।'

'तूने क्या कहा ?'

'मैंने कहा कि हाँ होती है बड़ी परेशानी। दिल खोल किसी से बोल-बतला नहीं सकती।'

बेटी को गौर से देखती रहीं अपर्णा। उन्हें बेटी की बात पर भरोसा न था। उन्हें पता है, पिता पर उसका स्नेह बहुत है। कौन जाने, उल्टी बात ही कह आई

हो। उसे भी तो पता है कि फोन कमरे से हटा देने पर माँ को उस कमरे में पाँव रखने की कभी जरूरत न पड़ेगी।

'क्या बोले ? हटवा देंगे वहाँ से ?'

'पत्थर हटायेंगे !' चिढ़ कर सुधी ने कहा था। 'पापा ने लम्बा-सा व्याख्यान दिया। बोले, फोन दिल खोल कर गप्पें मारने के लिए नहीं है। जरूरी बातों के लिये है। जरूरी बातें जो दो-चार मिनटों में पूरी हो जायें। फिर उन्होंने कहा कि शनि, रविवार के अलावा बाकी दिन तो सुबह के नौ बजे से शाम के सात बजे तक मैं घर पर नहीं रहता, फिर भी तुझे दिल खोल गप्पें मारने का मौका नहीं मिलता ?'

बेटी की बातें सुन अपर्णा के कान लाल होने लगे थे, इसलिये बात आगे बढ़ाने के बजाये वहाँ से हट जाना ही उचित समझा था उन्होंने। अपर्णा की यही एक परेशानी है। जैसे ही वे कोई अरुचिकर या अप्रीतिकर बात सुनती हैं उनके कान लाल होने लगते हैं। गरम होने लगते हैं। उनके बिना बताये ही लोग समझ जाते हैं। अगर यह न होता तो कभी किसी को उनके किसी कार्य से पता न चलता कि उनकी मनःस्थिति क्या है। जब ऐसा होता है वे सामने से हट जाती हैं। उस दिन भी हट गई थी। एकान्त में जाकर शान्त होने में उस दिन कुछ ज्यादा ही वक्त लगा था उन्हें। सोचा था, अगले ही दिन अपने लिये अलग फोन लगवाने की दरख्वास्त भेजेंगी। उन्हें मालूम है, आजकल नया फोन लगवाने के लिए बहुत पापड़ बेलने पड़ते हैं। पर, उन्होंने जो दरख्वास्त नहीं भेजी वह इस पापड़ बेलने से घबरा कर नहीं। किया इसलिये नहीं था क्योंकि तीन व्यक्तियों के परिवार में दो फोन जरा दृष्टिकटु हो जाता है। उनकी मनःस्थिति चाहे जैसी भी हो, उन्होंने सर्वदा सावधानी बरती थी कि किसी बाहर वाले को उनके घर में कोई बात ऐसी न लगे जिससे उसे सन्देह करने का या उँगली उठाने का मौका मिले। किसी के कौतूहल की वस्तु होना अपर्णा सोम को रुचिकर नहीं।

फोन पर बात करने जब आ रही थी अपर्णा सोम, तब बरामदा पार होते-होते उनके मुख की रेखायें कठोर होने लगी।। अच्छा ठीक है। कमरे में फोन रखने का सुख आज मिलेगा। कमरे में ही तो होंगे फोन के मालिक। उन्हें सुना-सुना कर बहन से दो-चार बातें ऐसी कहूँगी कि पानी-पानी हो जायेंगे सज्जन ! आज सुबह से जिस वजह से वे बौखलाई हैं, पर जिस मामले पर अब तक चुप रहने को मजबूर थी, उसी विषय पर बहन से बात करेंगी—फोन के मालिक सुनेंगे। सोमू से कहूँगी कि 'वैसे मैंने तुमसे पहले से आने को कहा था, पर अब हालत जिस तरह बिगड़ती जा रही है उसमें, मेरी समझ में तेरा पहले न आना ही ठीक होगा। घर में मेहमान ठसाठस भरे हैं। अभी और कौन-कौन आयेगा, पता नहीं। तू कल शाम को आना। खा कर चली जाना। रुकना नहीं। घर में बिल्कुल जगह नहीं।'

सोमू सगी छोटी बहन है। उससे यह बात वे अवश्य कह सकेंगी। बुरा नहीं मानेगी वह।........और फिर बुरा मानने को है क्या ? यहाँ की स्थिति से तो वह

अपरिचित नहीं। यह तो सभी को मालूम है कि मेहमानों का आना खुशी की बात है। वे खुद बड़े घर की बेटी हैं, लोगों के आने-जाने, सेवा-सत्कार में अभ्यस्त हैं। मगर, अगर कोई, महज उन्हें परेशान करने के लिये, उनसे बिना बताये मेहमानों की पल्टन खड़ी कर दे, तो वे उसे क्यों कर बर्दाश्त करें ? कोई इस स्थिति को सहन कर सकेगा ?

कमरे के सामने आ अपर्णा सोम ठिठक गईं। कुर्सी खाली पड़ी है। बिस्तरे पर भी कोई नहीं। वहीं से कमरे के चारों तरफ देखा उन्होंने। कहीं कोई नहीं। उन्हें आशा न थी कि कमरे में कोई होगा नहीं। आगे बढ़ीं।

'हैलो, कौन, सीमू ?'

....

'हाँ रे, बहुत व्यस्त थी। पूछती है कि किस काम से ? अरे, तू भी खूब है ! जानती नहीं, काम का न कहीं आदि है न अन्त ! और फिर मेरी सहायता करने वाला भी तो कोई नहीं। मगर तुझे क्या हो गया ? आई क्यों नहीं अब तक ?'

....

'हाय राम ! बुखार है ! बच्चे को ? इस मौसम में बुखार ? टीका लगवाया है क्या ?'

....

'अरे, इतनी लापरवाह है तू ? मौज-मस्ती करने से फुर्सत हो तब तो बच्चे की याद आये तुझे ! इतना भी क्या घूमते रहना कि तुझे बच्चे का ख्याल ही न रहे !'

....

'खैर, अब कर भी क्या सकती है ? अगर उसकी तबीयत में सुधार रहे तो कल सुबह आ जाना।'

....

'सुपी ? उसका पता वही जाने। सुबह से ही नीचे एक कमरे में चण्डाल-चौकड़ी जुटी है। किवाड़ बन्द कर अन्दर गुल-गपाड़ा हो रहा है। धन्य है भाई यह जमाना और इस जमाने की उपज !'

....

'क्या कहा तूने ?' अपर्णा सोम हँसने का प्रयास कर के बोलीं, 'तूने मुझे बूढ़ियों की पंक्ति में डाल दिया ?.......अच्छा। हाँ, ठीक है। छोड़ती हूँ। कल जल्दी आने की कोशिश करना।'

फोन रख चलने लगीं अपर्णा सोम। बहन असीमा की एक बात चुभ गई थी उन्हें। उन्होंने जब इस युग की उपज को धन्य कहा था तब असीमा ने पलट कर

कहा था कि दीदी अब तुम्हारा वाला युग तो रहा नहीं कि शादी के दस दिन पहले से लड़की रोना-धोना शुरू कर दे !

अपर्णा सोम की छोटी बहन सीमू या असीमा उनसे दस-बारह साल छोटी है। उनका कोई भाई नहीं। बहनें हैं तीन। अपर्णा बड़ी हैं। बचपन से ही असीमा का बड़ी बहन से बहुत लगाव है। लेकिन बहन से चाहे कितना भी लगाव क्यों न हो, जब जो जुबान पर आता है बोल देती है। न उम्र का लिहाज करती है, न रिश्ते का। जबान उसकी चलती भी खूब है। सीमा को हंसने की तो जैसे बीमारी ही हो। अपर्णा का विचार है कि इन दोनों ही बातों ने असीमा की शादी के बाद ही जोर पकड़ा है। मज़ाक का मूड जब चढ़ता है तो असीमा को याद ही नहीं रहता कि बड़ी दीदी उम्र में उससे कितनी बड़ी हैं। अभी उस दिन मचल कर बोली थी कि उसका दूल्हा कहता है कि देखने से बड़ी दीदी उससे दस साल नहीं, हद से हद दो साल बड़ी लगती हैं। मँझली दीदी की तो वे दीदी नहीं—छोटी बहन लगती हैं।

सुनते ही अपर्णा मारे शर्म के गड़ गईं। इसका एक विशेष कारण था। बात यह हुई थी कि असीमा के यह बात कहने के दस-पन्द्रह दिन पहले अपर्णा को जरा जुकाम-बुखार हो गया था। सूचना पा, शाम को, असीमा और उसके पति प्रशान्त उन्हें देखने आये थे। सुपर्णा उन दिनों दोस्तों के साथ दो दिन के लिये शान्तिनिकेतन गई हुई थी। घर के मालिक, यानी नरेन्द्र सोम अपने नियम के मुताबिक अपने कमरे में विराज रहे थे। एक बार आकर पूछने की जरूरत भी महसूस नहीं की थी। उन्हें तो शायद खबर भी न हो कि पत्नी की तबीयत ठीक नहीं। यही यहाँ स्वाभाविक था। बल्कि वे अगर तबीयत का हाल पूछने आते तो वही अस्वाभाविक होता। अस्वाभाविक ही नहीं, विडम्बना का कारण भी होता। दर्द के मारे अपर्णा का सिर फटा जा रहा था। सिरहाने बैठ माथे पर मलहम मल रहे थे समीरण दत्त। ऐसे वक्त में असीमा और प्रशान्त आ टपके।

....बात किसी से छिपी नहीं, पर फिर भी सभी कुछ हद तक अप्रस्तुत हो गये। इसी के कुछ दिन बाद सीमू का पति कहता है कि बड़ी दीदी सीमू से हद से हद दो साल बड़ी लगती हैं—और मँझली दीदी की छोटी बहन !

इस परिवेश में इस किस्म की बात सुन अपर्णा मारे शर्म के गड़ न जायें तो क्या करें ! वे कोई मूर्ख तो हैं नहीं। अक्ल असीमा-प्रशान्त को मिला कर जितनी होगी, उनके पास उससे अधिक ही है।....उस शाम बीमार बड़ी दीदी के सिरहाने बैठे समीरण बाबू को मलहम मलते देख उन्होंने घर जा कुछ बातचीत जरूर की होगी। उसी बात से बड़ी दीदी की उम्र को छिपाने वाली सेहत और गठन की बात चल पड़ी होगी।

बात चली होगी, इसका अनुमान इसलिये लगा सकती हैं अपर्णा क्योंकि असीमा के मन की गोपन कन्दराओं में पलती आशा से वे अच्छी तरह परिचित हैं। सीमू को आशा है, बड़ी दीदी के निष्फल विवाहित जीवन में फिर बहार आयेगी।

उसका ख्याल है, उसका अपना विवाहित जीवन हर अर्थ में सफल है और इस सफलता का श्रेय बड़ी दीदी को है। इस कारण असीमा और प्रशान्त सर्वान्तःकरण से कृतज्ञ हैं। असीमा ने प्रशान्त से अपनी खुशी से शादी की है। यह बात है काफी पुरानी, पर अपर्णा को लगता है कि कल की ही बात है। उनके घर जाने से चारों ओर सुख ही सुख दिखाई पड़ता है। अपर्णा जब भी जाती हैं, उनके सुखी जीवन को देख कर तृप्त होती हैं। उनकी सुखमय गृहस्थी को देख अपर्णा के माता-पिता भी बड़े सन्तुष्ट हुये थे और साथ ही बड़ी बेटी की विवेचनशीलता की प्रशंसा में मुखर हुये थे।

असीमा की शादी की बात पर पिताजी और माँ दोनों ही नाराज थे। बड़ी बेटी के असफल विवाह की चोट उनके मन में तब भी रीस रही थी। इस कारण बाकी दोनों बेटियों की शादी के मामले में वे हद से ज्यादा सतर्कता बरतना चाहते थे। परिवार रक्षणशील था। उसकी परम्परा में ऐसी शादियाँ तब तक हुई न थीं। असीमा के विवाह के मामले में वर प्रशान्त ही सबसे ज्यादा नापसन्द था उन्हें। यह उन दिनों की बात है जब प्रशान्त मेडिकल कालेज की पढ़ाई पूरी कर के निकला ही था। रोजगार के नाम पर कुछ भी नहीं था उसका। यह बात अपने में बाधक है, पर पिता-माता के मन में जो बात चुभ रही थी वह यह नहीं, कुछ और थी। प्रशान्त का घर अपर्णा के पीहर के मोहल्ले में ही था। उसके पिता को मुहल्ले के लोग अच्छी तरह जानते थे। अपर्णा के पिता भी पहचानते थे उन्हें। मुहल्ले के लोगों को यह तो पता न था कि वे आदमी कैसे हैं, पर यह बात सभी को मालूम थी कि वे शराब बहुत पीते थे। बाद में और भी बातें मालूम हुई थीं। खास कर उनके आर्थिक दैन्य की बात। प्रशान्त के पिता की आमदनी बुरी नहीं थी, पर जिसे शराब ने पीना शुरू किया हो उसकी आमदनी का ज्यादा या कम क्या? जो भी पाते उसका अधिकाधिक भाग सुरा-सेवन में ही खर्च हो जाता। यह एक ऐसा अपराध है जिसे कोई क्षम्य नहीं मानता। प्रशान्त जब डाक्टरी पास कर निकला तब तक उनकी यह लत उनके जीवन का अपरिहार्य अंग बन चुकी थी।

प्रशान्त और असीमा का मेल-मिलाप काफी दिनों से चल रहा था। कुछ दिनों तक बात दबी रही। लेकिन इस किस्म की बातें अधिक दिनों तक दबी नहीं रहतीं। जब किस्सा खुला, तब भी प्रशान्त डाक्टरी की पढ़ाई पूरी नहीं कर पाया था। अन्तिम वर्ष था उसका। होनी भी ऐसी कि असीमा के पिता ने ही देखा। पहले भी मुहल्ले के और लोगों ने उनसे यह बात दबी जुबान कही भी थी। तब उन्होंने यकीन तो किया ही नहीं था, नाराज हुये थे कहने वालों पर। उन्हें लगा था कि यह मुहल्ले-वालों की ईर्ष्या है। सीमू को प्रशान्त से बात करते देख वे ऊलजलूल बक रहे हैं। फिर भी—पिता के मन में कहीं पर तो जरा खटका लगा ही होगा। आखिर क्या काम उनकी लड़की का उस शराबी के बेटे से?

सीमू को बुला कर पूछा था, 'लोग ऐसा कह रहे हैं। क्या वजह है इसकी ?' घबरा कर असीमा भाग खड़ी हुई। उसकी इस प्रतिक्रिया से पिता विस्मित हुये थे। उन्होंने सोचा था, असीमा नाराज होगी। कहेगी, लोग बड़े नीच हैं। साधारण-सी बात को मरोड़ कर टेढ़ा बनाते हैं।

इसके कुछ दिनों बाद सीमू के पिता गाड़ी में बैठ कर कहीं जा रहे थे। विक्टोरिया के बगल से जाते वक्त उन्होंने गाड़ी की खिड़की से देखा सीमू और प्रशान्त हाथ पकड़े वहाँ टहल रहे हैं। पिता की आँखों के आगे अन्धेरा छा गया था। उनके सामने ही गाड़ी रुकवा सीमा को गाड़ी में बैठा लिया। उन्हें सामने देख उन दोनों के हाथ के तोते उड़ गये थे। गाड़ी में पिता ने कुछ भी नहीं कहा क्योंकि ड्राइवर था।

घर पहुँच माँ के सामने उन्होंने कैफियत तलब की। बहुत बिगड़े, गरजे, बरसे। प्रशान्त के शराबी पिता का कच्चा चिट्ठा खोला। ऐसे बाप का बेटा कितना गिरा हुआ हो सकता है यह बताया। वह खुद निहायत गिरा हुआ इन्सान है, नहीं तो डाक्टरी के अन्तिम वर्ष में पढ़ना-लिखना छोड़, सैर करने को समय निकाल सकता है ? यह सब कह कर बेटी पर फरमान जारी किया कि भविष्य में ऐसी मूर्खता न करे वह। पर इससे सुफल न मिला। वे मिलते रहे। पिता ने तो नहीं पर और लोगों ने उन्हें कई बार, कई जगह इकट्ठे देखा। सीमू से जब पूछा गया तो उसने अस्वीकार न किया। जब डाँटने लगे तब पिता को चकित होना पड़ा। सीमू ने स्पष्ट शब्दों में कहा, 'प्रशान्त बुरा नहीं। उसे जो जानता है कभी बुरा नहीं कह सकता।'

जब पिता कुछ कर न सके तब माँ बढ़ी। सीमू के कन्धे पकड़ झकझोर कर बोली, 'अच्छा हो या बुरा, उससे तेरा क्या लेना-देना ? इतना साहस तुझे कहाँ से हो गया ?'

माँ-पिता अपनी कन्या की जिद देख विस्मय से विमूढ़ रह गये। डराने-धमकाने से लाभ न हुआ। समझाने-बुझाने से भी कोई फायदा न हुआ। जब पिता को कुछ न सूझा तो वे बड़ी बेटी की शरण में गये। माँ ने अपर्णा से पहले ही बताया था। माता-पिता से रुठी होने के कारण अपर्णा ने इस मामले में पहले निरपेक्ष रहना ही उचित समझा था। बाहर से निरपेक्ष होते हुये भी चिन्ता तो थी ही। माता-पिता के सम्मिलित आवेदन पर उन्होंने गुस्सा थूक कर असीमा की गुत्थी सुलझाने का निश्चय किया। प्रशान्त क्या होगा, कौन जाने ? जिस परिवार में पैदा हुआ, अच्छा होने की उम्मीद करना ही फालतू होगा। अगर उस जैसे के साथ सीमू ने अपने को बाँध लिया तो भविष्य कैसा होगा ? अपर्णा काँप गईं। वे खुद ही तकदीर की मारी थी, उन जैसा कौन जानता था कि पति ठीक न होने पर स्त्री का हाल कैसा बेहाल हो जाता है ! यह सीमू इतनी मूर्ख क्यों है ? बड़ी बहन की दुर्दशा आँखों के आगे देख भी उसे अक्ल नहीं आई ?

अपर्णा ने असीमा को बुलवाया। आते ही रो-धो कर उसने आसमान सिर पर उठा लिया। 'क्यों सब लोग मिल उस बेचारे को बुरा कहते हो ? उसे तुम लोग

जानते नहीं, इसलिये ऐसा कह रहे हो। जानते तो कभी न कहते। वह अपने बाप की तरह बिल्कुल भी नहीं है। वह बहुत अच्छा है। बहुत ही अच्छा।' अपर्णा ने उसे बहुत समझाया। अपने फूटे भाग्य का उदाहरण दिया। अन्त में गुस्से में आकर बोलीं, 'माँ और पिताजी को इतना दुःख देना ठीक नहीं। वे कहते हैं कि अगर तू नहीं मानेगी तो वे तुझसे कोई सम्पर्क नहीं रखेंगे।' मगर असीमा नहीं मानी। न अनुनय से पसीजी, न धमकी से डरी।

जब यह सब हो रहा था तब प्रशान्त पढ़ाई पूरी करने में लगा था। बड़े सम्मान से डाक्टरी पास की उसने। परीक्षाफल निकलने के बाद सीमा उसे लेकर एक दिन अपर्णा के घर आई। तभी भी अपर्णा का गुस्सा उतरा न था, पर प्रशान्त को देखते ही पिघलने लगीं वे। आते ही प्रशान्त ने उनके चरण छुये। कहा, 'दीदी, मुझसे आपकी बहन ने सब कुछ बताया है। आप लोग जो कह रहे हैं, मानता हूँ उसमें कोई गलती नहीं, पर मेरी बात भी तो सुनेंगी आप? जिस कारण से आप अपनी बहन की शादी हमारे परिवार में करना नहीं चाह रही हैं, वही कारण मेरी माँ को जीवन भर सताता रहा। उन बेचारी का जीवन कितना हताश, कितना दुःखमय है, इसकी आप कभी कल्पना भी नहीं कर सकेंगी। और मात्र इसी कारण मेरे मन में शराब से घृणा है। कितनी घृणा है, यह मैं आपसे बता नहीं सकता। डाक्टरी की पढ़ाई के अन्तिम दिनों में अचानक यह देख कर मुझे बहुत रंज हुआ कि माँ मुझ पर अविश्वास करने लगी हैं। मुझसे रहा नहीं गया। मैं माँ को पूजाघर में ले गया। वहाँ ठाकुरजी को साक्षी बना मैंने माँ के चरण पकड़ प्रतिज्ञा की। कहा कि मजाक में भी अगर मैं शराब से हाथ लगाऊँ तो मुझ पर माँ का श्राप बरसे। सत्यानाश हो जाये मेरा। उसी दिन, उसी क्षण, मृत्यु हो मेरी। माँ निश्चिन्त हुई। मेरे जीवन की एकमात्र आकांक्षा है माँ का दुःख दूर करना। मेरी माँ ने बड़ी ग्लानि और लज्जा का जीवन जिया है, उनको सन्तोष पहुँचाना ही मेरा एकमात्र ध्येय है। आपकी बहन को मैं एक दिन माँ के पास ले गया था। उसे देख माँ कितनी आह्लादित हुईं, मैं आपसे कैसे बताऊँ! बड़े स्नेह से और आशा से वे इसकी बाट जोह रही हैं। उस दिन इसे अंक में दबाये वे आँसू पोंछती रहीं और बार-बार कहती रहीं, 'क्या तुम्हारे घरवाले राजी होंगे? क्या मेरे भाग्य में तुम्हें बहू बनाने का सुख लिखा होगा?' तो क्या दीदी, माँ की शंका ही सच होगी? माँ को जीवन भर दुःख उठाते देखा है मैंने। देखते-देखते अन्दर-बाहर खुद एक बहुत बड़ा घाव बन गया हूँ मैं। क्या इसके बाद भी आपके मन में यही आशंका बनी रहेगी कि मैं सीमू को तकलीफ दूँगा? अपनी माँ-सा जीवन जीने को बाध्य करूँगा।

प्रशान्त की आकुलता से अभिभूत हो गई थीं अपर्णा। जब वह अपनी बातें, अपनी माँ की बातें कह रहा था, अपर्णा का मन स्नेहसिक्त हो रहा था। जब प्रशान्त बोल रहा था, जब अपर्णा स्नेहसिक्त हो रही थीं, ऐन उसी वक्त छन्दपतन के प्रतीक बन वरेन्द्र सोम आकर दरवाजे पर खड़े हुये। उन पर निगाह पड़ते ही अपर्णा को

लगा था कि असीमा भाग्यशालिनी है। पोर्टिको के उस पार क्षण भर रुक कर धरेन्द्र होम चले गये। उनके जाने के बाद अपर्णा ने कहा था, 'मुझे क्षमा करो प्रशान्त। आज तक मैंने जो कुछ सोचा है या कहा है वह बिना जाने-सुने कहा है। परिस्थिति की असलियत आज पता चली। अब मैं ऐसा न कहूँगी। पिताजी को भी समझाऊँगी।'

पिता को समझाने का प्रयास अपर्णा ने सच ही किया था। नतीजा यह हुआ कि पिता क्रोधित हुये। उन्हें सन्देह होने लगा कि अपर्णा का अपना वैवाहिक जीवन बर्बाद हो जाने के कारण वे अब बहन को भी बर्बाद करने पर तुली हैं। अपर्णा की शादी माता-पिता की पसन्द से हुई थी। उसे सुख नहीं मिला। छोटी बहन को मनचाहा लिखा वह एक तो माता-पिता से बदला भी ले सकेगी, बहन को जो दुःख मिलेगा सो भी आनन्द का कारण होगा उसके। पिता ने स्पष्ट भाषा में कह दिया कि प्रशान्त से असीमा का विवाह वे नहीं करेंगे। अगर असीमा नहीं मानेगी तो उससे कोई सम्पर्क आगे से नहीं रखेंगे। असीमा को स्वतंत्रता है, वह चाहे जहाँ जाये, जो करे। मगर फिर उनकी ड्योढ़ी पर न चढ़े।

पिता का निश्चय सुन अपर्णा को बड़ा गुस्सा आया। असीमा से बोलीं, 'ठीक है सीमा, पिताजी राजी नहीं होते, न सही। तेरी शादी मैं अपने घर से करूँगी। प्रशान्त से कह देना मुझसे बात करने को। जो कहना होगा उसी से कह दूँगी।'

जहे किस्मत! अपर्णा को यह करना न पड़ा। जब किसी तरह बेटियाँ न झुकीं तब पिता ने हार मान कर अपने घर से शादी करने का निश्चय किया। उन्होंने कन्या-दान भी किया। भरसक धूम-धाम से हुई शादी। शादी तो कर दी पर उसके बाद कई साल तक बड़े चिन्तित रहे। अब उन्हें कोई खेद नहीं। प्रशान्त की प्रैक्टिस खूब जमी। विलायत जाकर वह स्पेशलाइज कर आया। उसके बाद से तो उसकी शोहरत में चार चाँद लग गये। अब तो माता-पिता सोचने लगे हैं कि भाग्य से और स्वभाव से छोटा दामाद ही सबके आगे है।

बड़ी दीदी के लिये असीमा के मन में बहुत पीड़ा है। कहती नहीं कभी भी कुछ, पर अपर्णा समझ जाती हैं। असीमा कई मामलों में बिलकुल मुक्त है संस्कारों से। उसके विचार में बड़ी दीदी के दुःखों का अन्त अवश्य होगा। समीरण दत्त से परिचय होने के बाद से उसके मन में यह धारणा जड़ पकड़ने लगी है। जब कभी मौका पाती समीरण बाबू की तारीफ करती। उनकी विद्वत्ता, निरहंकारिता और भी न जाने किन-किन गुणों की प्रशंसा करते न अघाती।

एक दिन अपर्णा ने असीमा के सामने ही समीरण बाबू से कहा था, 'क्या बात है जी? आपने सीमू को रिश्वत दी है क्या? जब देखिये वह आपकी तारीफों की पुल बाँधती रहती है।'

समीरण बाबू ने भी चुटकी ली थी, 'मेरी तारीफ तो वह जरूर करेगी। जौहरी की दृष्टि जो पाई है उसने! अब शायद उसके मन में खेद होता होगा कि इतनी जल्दी न की होती तो और भी कीमती नग पा सकती बेचारी!'

असीमा शर्माने के बजाये चटाक से बोली, 'बस जी बस ! ऐसा मजाक तो लोग छोटी सालियों से करते हैं । मैं तो अभी तक आपकी छात्रा की बहन हूँ ।'

अभी तक पर उसने इतना जोर दिया था कि अपर्णा को बहुत बुरा लगा था। समीरण बाबू भी झेंप से गये । अपर्णा को इतना बुरा इसलिये लगा था कि समीरण बाबू सच ही बहुत अच्छे हैं—अत्यन्त उदार, अति महान् । ऐसे व्यक्ति किसी भी प्रकार से अस्वस्ति हों यह अपर्णा नहीं चाहती थीं । उन्होंने निश्चय किया था कि सीमा को आगे ऐसा ऊलजलूल बकने से रोकेंगी । डांटेंगी । पर कभी वह कह न सकीं ।

हां, यही बात है । असीमा के मन की गोपन कन्दराओं में पलती आशा । बड़ी दीदी के दुःखों का अन्त होगा । उनके जीवन में बहार आयेगी । वरेन्द्र सोम असीमा को कभी पसन्द नहीं आये । जब वह भयानक हादसा हुआ, तब से तो उसकी ना-पसन्दगी क्रोध और घृणा में बदल गयी है । वह हादसा था भी वैसा ही, जितना क्रूर उतना भयावह । जिसके कारण वरेन्द्र सोम को मुजरिम के कटघरे में खड़ा होना पड़ा था । असीमा उस दिन बड़ी बहन के घर आई थी । बिफर कर कहा था, 'दीदी, तुम अब भी इस घर में क्या कर रही हो ? अब तुम्हें यहाँ नहीं रहना । मेरे साथ, मेरे घर चलो ।'

उस दिन अपर्णा नहीं गई थीं । जवाब भी नहीं दिया था । असीमा ने सोचा, बड़ी दीदी का इस वक्त भी इस घर में रहने की वजह कुछ और है । उसने अनुमान लगाया कि भावना के स्तर पर बड़ी दीदी को कहीं शरण मिली है । जैसी शरण की कामना हर नारी करती है, जिसे पाकर वह धन्य होती है, परिपूर्ण होती है । मन में यह बात गाँठ बाँध वह सीढ़ी चढ़ती दोतले पहुँची । समीरण बाबू के कमरे में । अपर्णा को इस बात का पता बाद में लगा था । कमरे में जा असीमा ने समीरण बाबू से कहा था, 'बड़ी दीदी अब क्या करें ? मैं आई थी उन्हें अपने घर लिवा जाने । पर वे राजी नहीं । आपसे कोई बात हुई है उनकी ?'

असीमा की बात सुन समीरण बाबू हक्का-बक्का रह गये थे । पर जो भी हो, विद्वान् हैं, बुद्धिमान भी । अतः असीमा को आश्वस्त करने के लिये हंस कर बोले, 'तुम्हारी दीदी सोच-समझ कर काम करती हैं । तुम्हारी तरह झक, या जिद, या क्रोध के बहाव में बहती नहीं । जो भी करना होगा उन्हें, काफी सोच-विचार के बाद ही करेंगी । तुम बेफिक्र रहो । जो होगा, ठीक ही होगा ।'

वह दिन और आज का दिन । समय खिसकता चला है । बीच में कई साल गुजर चुके हैं । समय का इस प्रकार व्यर्थ बीतना असीमा को बुरा लगता है । क्या कर रही हैं बड़ी दीदी ? क्या कर रहे हैं समीरण बाबू ? सम्मिलित रूप से कुछ करते क्यों नहीं ? सीमा के मन में पलती आशा की बेल अब शायद मुरझाने लगी है । अकसर वह चिढ़ जाती है । अपर्णा से भी और समीरणजी से भी । करीब दो साल

पहले उसने एक दिन कहा, 'इन्टीरियर डोर भी क्या कहता है ! एकदम दिल के छलोत । जबरदस्ती ध्यान बंद करो तो बैठूँ, नहीं तो समाधि टूटे ही नहीं ।'

अमीला अपर्णा के संस्कार की बात नहीं जानती । यह भी नहीं जानती कि किस मशीन में सफर गुजार रही है वे । इसी कारण उस पर नाराज हुई थी अपर्णा उस दिन । बोली थी, 'तेरा इन बातों से क्या काम ?'

उसके बाद बड़ी दीदी को देखने का अमीरचन्द बाबू को सनहून लगते देख उसके मन की मुस्कराती सत्ता फिर भी उठी थी । इसी कारण बड़ी दीदी के रूप-यौवन और स्वास्थ्य की बात मन पड़ी होगी । बड़ी दीदी को देख कर लगता ही नहीं कि अमीला से दस साल बड़ी है !

और आज ? अभी अमीला ने कहा कि अब क्या तुम्हारा जमाना रहा कि शादी के दस दिन पहले से रोना-धोना शुरू कर दे !

अपने कमरे के सामने से जाते जाते अपर्णा को इच्छा हुई कि कमरे में दर्पण के सामने खड़ी हो । देखने का मन था कि जमाना उन्हें पीछे छोड़ कितना आगे बढ़ा है । कितना पिछड़ गई हैं वे ? मगर अपर्णा ने अपने जीवन में इच्छा को प्रश्रय कम ही दिया है । आगे बढ़ी—यही जमाना पैसा है । विश्वास करता है । क्या बेटी की शादी है ।

उन्हें याद आई अचानक कि उन्होंने किसी को फोन करने को सोचा था—पर भूल गई । हाँ हाँ, पुरी को मधुपान में । आज का बहुत जरूरी है । इधर कुछ दिनों से ही ऐसा है । इसी कारण वे इतना भूल भी जाती हैं । सोचा था, फोन मिला कर पूछ लूंगी, होने वाले दामाद देवदत्त में कोई था नहीं । पहन, हाँ स्वयं ही तो पास है पुरी के होने वाले दूल्हे का ! जब जिसमें पुरी की शादी होगी । जमाना काफी बदल गया है । बदला न होता तो शादी के पांच दिन पहले वर मीटिंग एटेन्ड करने शहर छोड़ जाता है भला ? तब तक कल्पना न आता था । सोचना उन्हें परसों ही था । शादी-ब्याह के नाम से इसीलिए अपर्णा को इतनी चिढ़ है । शान्ति से घर पर रहा नहीं जाता इनसे । गुल पैन काटने दौड़ता है इन्हें । कब देश चला जाता है ? देश की दुर्दशा दूर करने का भूत जिसे सवार है, शादी करने की बात उसे कब पर याद रहे, यही गनीमत है ।

यह बात याद आते ही अपर्णा को अपने बचपन की एक बात याद आई । अपने माता-पिता के साथ कहीं शादी में गई थी । बारात किसी दूसरे शहर से आने वाली थी । शादी का मुहूर्त पार होने को आया पर वर का कहीं पता नहीं । कन्या के घर में रोना-पीटना शुरू हो गया । जब रात बीतने लगी तब सूचना मिली कि वर पक्ष शादी करने आने वाले थे सब आखिर में सूचना आई कि उनका प्रोमोशन हुआ है, फौरन ज्वाइन करना है । बड़े आफिसर तो वे ही, प्रोमोशन छोड़ जाते । 'गे

जाते ? शादी छोड़ प्रोमोशन सम्हालने चले गए थे वे। कन्यापक्ष वाले इन्तजार करने के अलावा क्या कर सकते थे, क्योंकि वरपक्ष से ऐसा ही कहा गया था। लड़की के पिता ने तब नया मुहूर्त निकलवाया जो पाँच दिन बाद पड़ा। तब निमंत्रितों से कहा गया कि खाना वे उसी दिन खा लें, रोने-धोने की जरूरत नहीं। शादी के दिन वे आकर फिर सम्मिलित हों।

कल अपर्णा की बेटी की शादी है, वर रंजन का पिछले कल तक पता न था। मालूम नहीं आज अभी तक आया या नहीं। ऐसे क्षण में बहुत पुराने की एक अशुभ स्मृति याद आते ही अपर्णा खीझ गईं। क्या यह आज ही याद आना था ? स्मृति को विस्मृति की गहराइयों में धकेल फेंका। आजकल यह क्या हो गया है उन्हें ? हर समय यह कैसा तनाव ? कैसी आकुलता ? ऊलजलूल चिन्ताओं का डिपो बन गया है उनका दिमाग।

छोड़ो। हटाओ। गोली मारो। जैसा होगा देखा जायेगा। बाद में फोन कर पता कर लिया जायेगा। उन्हें पता है, उनका स्वभाव ही है व्यर्थ की बातों में दिमाग खपाना और परेशान होना।

ओफ, यह क्या हुआ ? फेहरिस्त में जहाँ निशान लगाना था वह जगह कहाँ गई ? कितनी दूर मिलाया था सामान ? अब तो ख्याल भी नहीं रहा। अब सारा सामान फिर शुरू से मिलाना पड़ेगा। तबीयत इतनी खिसिया गई कि मन होता है सब कुछ उठा कर बाहर फेंक दें।

'माँ ! क्या कर रही हैं आप यहाँ ? वहाँ सब लोग आपको पूछ रहे हैं !' यह वृन्दा की आवाज थी। वृन्दा काम खूब करती है, पर जबान भी उसकी बड़ी तेज है !

अपर्णा ने क्रोध से कहा, 'देखती नहीं है, लड्डू खा रही हूँ छिप कर ? कौन पूछ रहा है भला ?'

वृन्दा जान गई, 'माँ' का मिजाज ठिकाने नहीं। नरम हो बोली, 'सामान-वामान, बच्चे-कच्चे ले वर्धवान से मँझली बुआ आई हैं। आते ही बाबूजी को पूछने लगीं, आपको पूछने लगीं।'

अपर्णा के हाथ से सामान की लिस्ट फिसल गयी। सामान मिलाने की बात भूल गईं वे। वृन्दा को देखती रहीं। लेकिन वे वृन्दा को देख नहीं रही थीं। खीझ और क्षोभ की लहरें उठने लगीं मन में।—तो यह बात है ! पग-पग पर अपमानित करने के लिये यह षड्यंत्र रचा गया है ! अभी कुछ देर पहले सुबह इसी तरह बच्चों को साथ ले एक ननद बागबाजार से और दूसरी बेलियाघाटा से आई हैं। टालीगंज से बीबी-बच्चों के साथ देवर भी आये हैं दोनों। अब तक अपर्णा सोच रही थीं कि भतीजी की शादी के कारण यह लोग हालचाल पूछने आये हैं। कुछ देर में चले जायेंगे। पर शाम होने के पहले ही उन्हें अपनी गलती का भास हुआ। यह सारी पल्टन एक दिन पहले से शादी में शरीक होने जुटी है। यह तो जाहिर ही है कि यह लोग यों ही चले नहीं आये हैं। बाकायदे निमंत्रण दिया गया होगा। दो छोटी ननदें

तो पहले ही आई थी, अब बीच वाली का भी आगमन हो गया। सबसे बड़ी वाली कूचबिहार में रहती हैं। अब वे भी आ जायें तो ताज्जुब क्या ?

'क्यों जी भाभी रानी, तुम यहाँ हो ? घर में मेहमान आये हैं और मियाँ-बीवी दोनों नदारद ! मुझे देख तुम्हें बहुत ताज्जुब हो रहा है न ? सोचा नहीं था कि मैं आ पाऊँगी ?' यह है बर्धमान वाली ननद धीरा। नाम के साथ धीरा के स्वभाव का कोई मेल नहीं। चार ननदों में धीरा ही सबसे अधिक बोलती है—और कड़ुवी बोलती है। फिर उस पुराने घावों से ग्लास मिलना नहीं होता। मगर पहले, जब शादी नहीं हुई थी तब हर वक्त सतर्क रहना पड़ता था कि न मालूम कब कौन-सी गाली दाग दे। अब उम्र के पाँच बरस हैं। स्वास्थ्य भी पहले सा उज्ज्वल नहीं। फिर भी जबान की तेजी में कोई अन्तर नहीं आया है।

अपर्णा मुस्कराई। उनको कभी किसी ने उत्पृथमित होते नहीं देखा है। इस-लिये आज भी धीरा को उनकी इसी मुस्कराहट में मेजबानी की कमी महसूस न हुई। मरती में हंसके से कहा, 'बड़भागी मैं! बड़ी तकदीर मेरी बेटी की कि तुम आईं! बच्चे कहाँ ?'

'सब आये हैं। उनका आना नहीं आया है। कल अदालत में मुकदमा लगा है एक बहुत बड़ा। उसे पूरा किये बिना वकील साहब नहीं आ सके। कहा है कल शाम को आयेंगे। यह भी कहा है कि परसों मुझे और बच्चों को लेकर वापस भी चले जायेंगे। वे तो मुझे आज भी नहीं भेजना चाह रहे थे, कह रहे थे कल शाम को साथ ही चल चलेंगे। मुझे बड़ा गुस्सा आया। मैंने कहा, भैया इतने प्यार से कह गये हैं—ज्यादा नहीं तो एक दिन पहले तो मैं जाऊँगी ही।'

इतनी दूर! मन में निमंत्रण नहीं, स्वयं जाकर कह आये हैं! यहाँ के घर का हाल किसी से छिपा नहीं। अवश्य ही ऐसे बना सँवार कर कहा होगा, ऐसी बातें बनाई होंगी कि सब लोग गदगद भागते चले आये हैं। नहीं तो यों ही यह लोग इस तरह नहीं आते। उन्हें नीचा दिखाने के लिये ही किया है यह सब। सोच रहे होंगे कि बिना बताये सब को बुला मेरी नाक कटा कर मजा देखेंगे। खूब जानती हैं अपर्णा परेन्द्र घोष को! फिर भी साम्य तो बनाये रखना ही है। सन्तुलन खोना नहीं है। सहजता बनाये रखने के लिये प्रयास करती रही अपर्णा।

हँस-हँस कर धीरा और भी कुछ कहने का उपक्रम कर रही थी। वृन्दा सामने ही खड़ी थी। धीरा ने उसे एक फटकार बतायी, 'हम ननद-भावज की बातों के बीच तुम क्या में हड़दी बनी क्या सुन रही हो ? जाओ अपने काम से।'

लज्जित हो हट गई वृन्दा। उसे जाते देख धीरा बोली, 'यह तो तुम्हारी वृन्दा है न भाभी ? खा-खाकर भैंस जैसी हो गई है बिल्कुल !'

धीरा का यह कहना भी अपर्णा को बुरा लगा। जवाब न दिया उन्होंने। धीरा और करीब आई। 'भैया दिखाई नहीं पड़ते। कहाँ हैं वे ?'

'देख तो रही हो मेरे पल्ले से बँधे नहीं हैं तुम्हारे भैया। यहाँ तो मैं ही हूँ। इधर ढूंढ़ने से भैया कहाँ मिलेंगे ?'

कहने को कह दिया अपर्णा ने। पर बात जबान से निकलते ही मन कड़वा होने लगा। नहीं, उन्होंने मज़ाक नहीं किया था। मज़ाक के मूड में वे थीं ही नहीं। फिर भी ननद तो ननद ही है। वह इसे मज़ाक मान लेगी। लिया भी। बोली, 'हाय! मर जाऊँ मैं! आज बड़ी खुश हो तुम! मारे उल्लास के अपर्णा से लिपटने लगी वह। 'क्या बताऊँ भाभी, उस दिन जब बिना पूर्व सूचना के भैया आये न, उन्हें देख मेरा दिल धक् से रह गया। मैंने सोचा न जाने क्या कहने आये हैं। पर भगवान् की कृपा, वे सुपी की शादी की बात बोले। सुन कर मैं तो नाच उठी। फिर भैया बार-बार कहने लगे, जरूर आना। मेरी यही एक ही बच्ची है। उसकी शादी में अगर पहले न आई तो फिर जीवन भर न बोलूंगा तुमसे। दो-चार दिन पहले से आना। रहना। सारा काम करवाना। भैया की बातें सुनते ही भाभी मेरे दिल पर से पत्थर उतर गया। मुझे विश्वास हो गया, भगवान् ने मेरी सुन ली है। तुम्हारे और भैया के बीच पनपती गड़बड़ी का अन्त हो गया है। अगर ऐसा न होता तो भैया इतने उत्साह से भला बेटी की शादी की तैयारी करते ? बुलाने जाते हमें ?'

अपर्णा ने सामान की लिस्ट में ध्यान देने का व्यर्थ प्रयास शुरू किया। उन्हें लगा कि उनके शरीर का सारा खून सिर पर चढ़ रहा है। धीरा को उनके इस बेहाल हाल का पता नहीं चल रहा है।

खुशी से डगमगाती धीरा कहती चली, 'मगर मैं भी कोई दुध-मुँही बच्ची नहीं। बीबी भी हूँ। कामयाब वकील की। भला मैं बिना सुराग लगाये चुप कैसे बैठती। मैंने कहा—'भैया, सब मान गई। सुपी का व्याह है, तुम्हारी एक ही बच्ची है, नहीं जाऊँगी तो तुम मुझसे बात नहीं करोगे, पर भाभी का हाल क्या है ? तुम्हारे बीच होता झमेला निपट तो गया न ?' भैया ठहाका लगा कर बोले, 'जा कर देख लेना अपनी आँखों से।' हाय भाभी क्या कहूँ तुमसे, उसी दिन से आने के लिये तड़पने लगी मैं। आज तुम्हें बताऊँ भाभी, हमारे घर के पास 'इच्छा पूरण' ठाकुरजी का मन्दिर है। मैं वहाँ जाकर मानता कर आई थी कि हे इच्छा पूरणजी, तुम मेरे भैया-भाभी का मेल करा दो, मैं पूजा करूँगी। भैया की बात सुन मैं वहाँ पहले पूजा करने गई, फिर यहाँ आई। समझीं तुम ?'

'नहीं, नहीं, नहीं, मैंने कुछ नहीं समझी। कुछ समझना चाहती भी नहीं। यह सब षड्यंत्र है। धोखा है। फरेब है। मुझे नीचा दिखाने की साजिश है। घृणा है मुझे तुम सब से, तुम्हारे भैया से। दूर हो जाओ तुम सब मेरी आँखों के आगे से। बिना तुम्हारी सहायता के भी मैं अपनी बेटी के हाथ पीले कर सकूँगी। तुममें से किसी की जरूरत नहीं मुझे। दूर हो जाओ। अभी तुम सब दूर हो जाओ यहाँ से।'

यह अपर्णा ने कहा नहीं था। यह थी उनकी आत्मा की पुकार जो मन-मस्तिष्क को मथ कर निकलने के लिये तड़प रही थी। पर उनके होंठ न खुले, जबान न हिली,

उसकी और दोनों बुआयें, उन्होंने भी अगर यही धारणा बना ली हो तो ताज्जुब क्या ? यह आदमी इतना बड़ा फरेबी है कि इन लोगों को, सबों को यही सुझा दिया है। उसने इन लोगों के मन में यह गलत धारणा डाल दी है कि पत्नी से खटपट खत्म हो गई है। अब वे एकमन हो सप्रेम जीवन जी रहे हैं। यह समझ कर धीरा जब पूजा देकर यहाँ आई, तो औरों ने ऐसा ही क्यों न सोचा होगा। वरेन्द्र सोम ने यह फरेब क्यों किया ? उसे तो यह खूब अच्छी तरह मालूम होगा कि उसने चाहे जो भी कहा हो, चार-पाँच घण्टे जो भी यहाँ रहेगा उसे यहाँ के चादर में पचास छेद दिखाई ही देंगे। तब क्या उन्हें यहाँ की स्थिति का सही हाल समझते देर लगेगी ? लेकिन उससे क्या फर्क पड़ेगा इस आदमी को ? अब उसके माथे पर नये सिरे से कौन सा कलंक लगेगा ? लगेगा भी तो उस जैसे बेशर्म को फर्क क्या पड़ेगा ?

देवी-देवता पर अपर्णा को कभी भी अधिक विश्वास या निर्भरता न थी। अब तो जरा भी नहीं। जब आयु कम थी तब परेशानी में होने पर भूले-भटके भगवान् को याद कर लिया करतीं, फिर भूल भी जातीं। उन दिनों देवता पर निर्भरता या विश्वास भले ही न रहा हो, पर संस्कार और परिवार के प्रभाव के कारण दुर्बलता थी। इसके लिये उनके माता-पिता जिम्मेदार थे। काफी सुखी और खुशहाल होने के बावजूद उनको देवता पर, दैवी-शक्ति पर अखण्ड विश्वास था। माँ तो नित्य पूजा किये बिना सुबह पानी भी नहीं पीती थीं। अपर्णा और उनकी बहनें इस पर माँ का कितना मजाक बनातीं। अपर्णा जब नौ साल की थीं तब उन्हें टाइफायड हो गया था। उन्हें तब का विशेष कुछ याद नहीं, माँ से सुनी बातें याद हैं सिर्फ। उन दिनों टाइफायड बड़ी मारक बीमारी मानी जाती थी। आज उसका इलाज जितनी खूबी से होता है तब यह सम्भव न था। अकसर बीमारी टेढ़ी हो जाती तब बचने की उम्मीद छोड़ देते लोग। रोना-पीटना शुरू हो जाता। अपर्णा ने सुना है कि उनकी बीमारी ने भी बड़ा विकराल रूप धारण किया था। डाक्टर पर भरोसा न कर माँ ने गुरु को स्मरण करना श्रेय समझा था। माँ को पता भी न था, उन दिनों गुरुजी किस तीर्थ का पर्यटन कर रहे हैं। एक सुबह देखा गया कि बिना किसी सूचना के गुरुजी आ गये। बोले, 'पिछले कुछ दिनों से मन बड़ा उचाट था। देवप्रयाग में था मैं। तबीयत इतना घबराने लगी कि मैं तीर्थाटन छोड़ कलकत्ते लौट आया। यहाँ पहुँचते ही पता चला क्यों मन उचाट था। आने के साथ ही महायज्ञ शुरू करवाया।' अपर्णा की माँ का कहना था कि उसी दिन से अपर्णा की हालत में सुधार आने लगा। उसके बाद से वे फिर कभी किसी बीमारी का शिकार नहीं हुई।

इन्हीं कारणों से बचपन से ही भगवान् पर विशेष आस्था नहीं भी थी तो क्या, संस्कारों की कायल थीं वे। उसके बाद से उनके जीवन में कैसे-कैसे तूफान आये, कैसा-कैसा बवण्डर मचा। उनके थपेड़ों में पड़ कर रही-सही आस्था भी गायब हो गई। लेकिन आज लग रहा है कि उनका विश्वास निर्मूल नहीं हुआ है। हुआ होता तो ऐसी अद्भुत आकांक्षा मन में क्यों उठ रही है ? कौन सी आकांक्षा है वह ? उसकी

तो काट लिये। सिर्फ इस दिन की बाट जोहने के लिये सहज स्वाभाविक जीवन जीने का ढोंग रचती रहीं। वरेन्द्र सोम के साथ एक ही छत के नीचे रहती रहीं। अपना सुख न देखा। स्वार्थ न देखा। किसी को यह दिखाना या समझाना संभव नहीं कि यह सहावस्थान कितना कष्टप्रद है, कितना पीड़ादायक! कल का दिन बीतने पर अपर्णा की कैद की अवधि पूरी होगी। क्या उसके बाद वे कभी पलट कर इस जीवन में आयेंगी? आना चाहेंगी?

नहीं। नहीं। नहीं।

चिन्ता के बुलबुलों को मन में ही दबा कर उठीं अपर्णा सोम।

दो

बरामदे के बीचोंबीच पहुँची थी अपर्णा सोम कि वृन्दा ने उन्हें रोका। बोली 'माँ, यह जो इतने लोग आये हैं इनके खाने, नाश्ते का क्या इन्तजाम होगा? यह जं ठीके का रसोइया रखा है, वह तो शाम के बाद ही आयेगा। है भी बिल्कुल बूढ़ा इतने लोगों का खाना वह बना भी पायेगा?'

वृन्दा की बात सुन अपर्णा जहाँ थीं वहीं रुक गईं। कुछ कह नहीं सकीं। जं जवाब देने का मन हुआ, वह वे कह कैसे सकती थीं? एक बार तो मन में हुआ कि वृन्दा को ही डाँट दें। कहें, 'क्या हो गया है तुझे? हर वक्त एक न एक समस्या खड़ी करती रहती है? तू भी क्यों मरी जा रही है? जिसके मेहमान हैं ये लोग, उसी को समाधान निकालने दे न!' मगर यह वे कैसे कहें? एक तो, वृन्दा के हर मामले में सिर खपाने के कारण उन्हें काफी सहूलियत होती है। दूसरे, यह तो धरेन्द्र सोम का उनकी नाक नीची करने की साजिश है ही, इस पर कहना क्या? वे तो जानती ही हैं कि इन्तजाम न होने से मेहमान नाराज होंगे ही, इस किस्म की बातें कही ही जायेंगी। मगर यह सब वे इतना सुन चुकी हैं कि अब इससे उनके लिये कुछ फर्क नहीं पड़ता। फिर भी अचानक ऐसी विपत्ति का सामना अगर किसी को करना पड़े तो वह अवश्य ही परेशान होगा। नाराज होगा।

वृन्दा ने मालकिन को चुप रहते देख कर कहा, 'चिन्ता न हो, मैं ही सम्हाल लूंगी। अकेले उस बूढ़े महाराज से सारा होगा भी नहीं। मगर माँ, किसी को बाजार भी तो भेजना पड़ेगा। वक्त रहते अगर सब्जी-भाजी नहीं मँगायी जायेगी तो बनेगा क्या? बाजार तो हमारी मर्जी से खुलता नहीं।'

'तेरे बाबूजी कहाँ?'

'बाबूजी तो करीब घण्टे भर पहले बाहर गये।' माँ ने आज बाबूजी को क्यों पूछा? वृन्दा के मन में यह सवाल चक्कर काटने लगा। उसने आज तक कभी उन्हें बाबूजी को पूछते नहीं देखा था। पर इस वक्त बहुत काम है, इस प्रश्न पर विचार करने को समय नहीं। वह बोली, 'बाबूजी घर पर रहते तो भी क्या होता? बाजार का काम तो उनसे होता नहीं। सामान मँगाना हो तो रुपये दीजिये। वह आदमी जब आ ही गया है तो उसी को भेज कर मँगा लेती हूँ।'

अगर अपर्णा का दिमाग इतना भन्नाया न होता तो वे इसी बात से समझ जातीं कि वृन्दा किसके आने की बात कह रही है। मगर इस वक्त तो सभी कुछ उन्हें अजीब-सा लग रहा है। बोलीं, 'कौन आया है?'

कपट रोष से मन में छलकती खुशी को दबाते हुये वृन्दा बोली, 'अरे वही— इन लोगों का बाप।'

तो काट लिये। सिर्फ इस दिन की बाट जोहने के लिये सहज स्वाभाविक जीवन जीने का ढोंग रचती रहीं। वरेन्द्र सोम के साथ एक ही छत के नीचे रहती रहीं। अपना सुख न देखा। स्वार्थ न देखा। किसी को यह दिखाना या समझाना संभव नहीं कि यह सहावस्थान कितना कष्टप्रद है, कितना पीड़ादायक! कल का दिन बीतने पर अपर्णा की कैद की अवधि पूरी होगी। क्या उसके बाद वे कभी पलट कर इस जीवन में आयेंगी? आना चाहेंगी?

नहीं। नहीं। नहीं।

चिन्ता के बुलबुलों को मन में ही दबा कर उठीं अपर्णा सोम।

दो

बरामदे के बीचोबीच पहुँची थी अपर्णा सोम कि वृन्दा ने उन्हें रोका। बोली, 'माँ, यह जो इतने लोग आये हैं इनके खाने, नाश्ते का क्या इन्तजाम होगा ? वह जो ठीके का रसोइया रखा है, वह तो शाम के बाद ही आयेगा। है भी बिल्कुल बूढ़ा। इतने लोगों का खाना वह बना भी पायेगा ?'

वृन्दा की बात सुन अपर्णा जहाँ थी वहीं रुक गईं। कुछ कह नहीं सकीं। जो जवाब देने का मन हुआ, वह वे कह कैसे सकती थीं ? एक बार तो मन में हुआ कि वृन्दा को ही डाँट दें। कहें, 'क्या हो गया है तुझे ? हर वक्त एक न एक समस्या खड़ी करती रहती है ? तू भी क्यों मरी जा रही है ? जिसके मेहमान हैं ये लोग, उसी को समाधान निकालने दे न !' मगर यह वे कैसे कहें ? एक तो, वृन्दा के हर मामले में सिर खपाने के कारण उन्हें काफी सहूलियत होती है। दूसरे, यह तो वरेन्द्र सोम का उनकी नाक नीची करने की साजिश है ही, इस पर कहना क्या ? वे तो जानती ही हैं कि इन्तजाम न होने से मेहमान नाराज होंगे ही, दस किस्म की बातें कही ही जायेंगी। मगर यह सब वे इतना सुन चुकी हैं कि अब इससे उनके लिये कुछ फर्क नहीं पड़ता। फिर भी अचानक ऐसी विपत्ति का सामना अगर किसी को करना पड़े तो वह अवश्य ही परेशान होगा। नाराज होगा।

वृन्दा ने मालकिन को चुप रहते देख कर कहा, 'चौका न हो, मैं ही सम्हाल लूँगी। अकेले उस बूढ़े महाराज से सारा होगा भी नहीं। मगर माँ, किसी को बाजार भी तो भेजना पड़ेगा। वक्त रहते अगर सब्जी-भाजी नहीं मँगायी जायेगी तो बनेगा क्या ? बाजार तो हमारी मर्जी से खुलता नहीं।'

'तेरे बाबूजी कहाँ ?'

'बाबूजी तो करीब घण्टे भर पहले बाहर गये।' माँ ने आज बाबूजी को क्यों पूछा ? वृन्दा के मन में यह सवाल चक्कर काटने लगा। उसने आज तक कभी उन्हें बाबूजी को पूछते नहीं देखा था। पर इस वक्त बहुत काम है, इस प्रश्न पर विचार करने को समय नहीं। वह बोली, 'बाबूजी घर पर रहते तो भी क्या होता ? बाजार का काम तो उनसे होता नहीं। सामान मँगाना हो तो रुपये दीजिये। वह आदमी जब आ ही गया है तो उसी को भेज कर मँगा लेती हूँ।'

अगर अपर्णा का दिमाग इतना भन्नाया न होता तो वे इसी बात से समझ जातीं कि वृन्दा किसके आने की बात कह रही है। मगर इस वक्त तो सभी कुछ उन्हें अजीब-सा लग रहा है। बोलीं, 'कौन आया है ?'

कपट रोष से मन में छलकती खुशी को दबाते हुये वृन्दा बोली, 'अ इन लोगों का बाप।'

इन लोगों का बाप, यानी वृन्दा के बच्चों का पिता निरंजन। वृन्दा के तीन समर्थ बेटे हैं और एक बेटी। तीनों लड़के कारखानों में काम करते हैं। अच्छी भली आमदनी है। बड़े दो लड़कों की बहुएं आ गई हैं। वृन्दा की बेटी सुन्दर है। उसकी भी खाते-पीते घर में शादी हो गई है। निरंजन खुद भी किसी दफ्तर में बैरा है। अतः सौभाग्यवती वृन्दा का किसी के घर दासीत्व करना लाजिमी नहीं। निरंजन या उसके बेटों की इच्छा भी नहीं कि वह नौकरी करे। पर वृन्दा की फटकारों ने उन्हें चुप करा दिया है। उसने दलील दी कि जब वह जवान थी, जब उसके खेलने-खाने के दिन थे, तब तो उसे दूसरों का जूठन उठा दिन बिताने पड़े थे। निरंजन की नौकरी कभी रहती, कभी नहीं। आमदनी जो होती उसका बहुत हिस्सा चरस-गांजे का धुंआ बन कर उड़ जाता। उस जमाने में वृन्दा की आमदनी से गृहस्थी चली, बच्चे पले, बड़े हुये। अब बड़ा प्यार उमड़ रहा है! उसे मालूम है कि उसकी नौकरी छुड़वा, उसकी आजादी छीन यह लोग उसको घर में बांध कर बेटों-बहुओं की खिदमत करवाना चाहते हैं। ऐसे प्यार को वह जूती की नोंक पर रखती है। वगैरह-वगैरह। वृन्दा ने खुद ही यह अपर्णा से बताया है। अपर्णा ने अपने कानों से वृन्दा को अपने परिवार वालों से जूती की नोंक वाली बात कहते सुना है। महीने में दो-एक बार मां से मिलने आते हैं वृन्दा के बेटे। उस वक्त वृन्दा 'मलिका टोरिया' का रोल अदा करती हुई उन्हें तरह-तरह के प्रवचन पिलाती है। निरंजन से बात करने में उसकी कठोरता और भी स्पष्ट होती है। बेटे महीने में दो बार आते हैं, तो निरंजन हफ्ते में तीन बार आ कर बीबी के हाल पूछ जाता है। निरंजन देखने में काफी अच्छा है। जब बैरे की वर्दी नहीं पहने रहता तो उसे बैरा समझना मुमकिन नहीं। लेकिन उस बेचारे की तकदीर का कहा क्या जाये! वह यहां आता है बीबी की नाराजगी बर्दाश्त करने। कई बार वृन्दा का गरजना-चिंघरना इतनी जोर-शोर से होता है कि अपने कमरे में बैठी अपर्णा को भी सुनाई पड़ जाता है। जब कभी मर्जी होती है तो छुट्टी ले वृन्दा दो-एक दिन के लिये पति-पुत्र की गृहस्थी देख आती है। जब भी जाती है दोतल्ले के बरामदे से अपर्णा उसे देखती रहती हैं। देख कर उन्हें हंसी आती है। वृन्दा राजराजेश्वरी-सी आगे-आगे चली जा रही है, और पीछे-पीछे चल रहा है उसका अनुगत पति। दो दिन, एक दिन वहां रह कर जब लौटती हैं वृन्दा, तब उसके हावभाव से लगता है कि वहां जा उसने उन लोगों को कृत-कृत्य कर दिया है।

वृन्दा के जीवन की एक घटना जब कभी अपर्णा को याद आती है तो उन्हें बड़ी हंसी आती है। हंसी आती है, साथ ही अजीब-सी कसक भी उठती है। उस बार वृन्दा न जाने क्यों रूठ गई थी। मान-भंजन के प्रयास में निरंजन, तीन बेटे और बहू सारे प्रयास कर हार चुके थे। वृन्दा नहीं मानी थी। अपर्णा को वृन्दा के इस असाधारण कोप का कारण नहीं मालूम था। इतना ही जानती थीं कि कहीं पर कुछ गड़बड़ है। वृन्दा हरवक्त नीम चढ़ी करेला बनी रहती। हरेक से फुंफकार कर बोलती। अपर्णा ने देखा कई दिन लगातार निरंजन दफ्तर से सीधे यहीं आ रहा है।

चेहरे पर हवाइयाँ उड़ती रहती हैं। आ कर निरंजन ऊपर नहीं आता, नीचे ही चुपचाप बैठा रहता है। वह जब तक रहता है वृन्दा नीचे नहीं जाती। अपर्णा इतना तो समझ ही गईं थीं कि झगड़ा चल रहा है। कारण मालूम न कर सकी थीं। इच्छा थी कि कारण पता लगायें। पूछने में उन्हें संकोच हो रहा था। निरंजन को दो दिन इन्तजार कर चले जाते देख एक दिन उन्होंने कहा, 'क्या बात है वृन्दा, निरंजन नीचे बैठा है, तू जा सुन आ, उसे क्या काम है ?'

काम रोक कर वृन्दा सीधी खड़ी हुई। अपर्णा पर दृष्टि रखा। देखा ही नहीं, भस्म कर डाला मालकिन को। धड़धड़ाती हुई नीचे उतर गई। दस मिनट बाद उसी तेजी से वापस आ बुहारे कमरे को फिर से बुहारने लगी। बरामदे से अपर्णा ने देखा, सड़क पर खड़ा निरंजन उदास आँखों से उनके मकान को देख रहा है।

निरंजन की हालत पर अपर्णा को बड़ा दुःख हुआ। वापस कमरे में आ वृन्दा से बोलीं, 'क्या मामला है वृन्दा ? तीन दिन से निरंजन आ कर लौटा जा रहा है। इधर तू हर वक्त सुलग रही है। हुआ क्या है ?'

झाड़ू पटक सीधी हुई वृन्दा। तैश से भर कर जो बोली, उसे सुन अपर्णा हक् रह गईं। वृन्दा बोली, 'मेरे सुलगते रहने से आपको कौन सी तकलीफ हो रही है ? अगर मेरे सुलगते रहने से काम में कोई गफ़लत हुई हो तो झाड़ू मार कर निकाल दीजिये मुझे।'

वृन्दा कमरे से चली गई। अगले दिन से उसके बेटों ने चक्कर लगाना शुरू किया। तीनों बेटे बारी-बारी से घण्टा भर बैठे रहते। फिर विफल हो कर लौट जाते। वृन्दा उनसे बात तक न करती। करती भी तो पाँच मिनट से ज्यादा नहीं। इसके बाद एक दिन ससुराल से उसकी बेटी आ पहुँची। बेटी माँ के पास न जा अपर्णा की शरण में आई। वृन्दा के क्रोध का कारण उससे पता चला। बात यह हुई कि साहब के परिवार के साथ निरंजन पन्द्रह दिनों के लिये काशी-हरद्वार हो आया है। वृन्दा का इन दोनों जगहों को देखने का बहुत शौक है। यह जानते हुये भी निरंजन उसे छोड़ कर चला गया। कहा कि मालिक का हुक्म है, जाना ही पड़ेगा। असल में, मुफ्त में सैर करने की लालच न छोड़ सका था वह। उसे क्या पता था कि वृन्दा को पन्द्रह दिन की छुट्टी मिलेगी ? फिर, जब खुद मालिक जा रहे हैं, वह वहाँ अपनी घरवाली को कैसे ले जाय ? मगर वृन्दा कुछ भी सुनने को तैयार नहीं। इसी गलती के कारण उसने पति-पुत्र-परिवार सब का त्याग किया है। वृन्दा का कहना कि निरंजन के मालिक के घर में एक विधवा आयी है, यही कोई बीस साल की, वह भी साथ गई थी, उसी के लालच से निरंजन वृन्दा को भूल कर उछलता-कूदता मालिक के साथ चला गया था। निरंजन को उसने आखिरी दिन धमकाया है। कहा है अगर फिर कभी आयेगा तो वृन्दा अदालत जा कर अपनी शादी खारिज करायेगी।

अपर्णा ने सुना। सुन कर उनकी समझ में न आया कि वृन्दा की बेटी कैसे आश्वस्त करें और कैसे वृन्दा को शान्त करें।

इन लोगों का बाप, यानी वृन्दा के बच्चों का पिता निरंजन। वृन्दा के तीन समर्थ बेटे हैं और एक बेटी। तीनों लड़के कारखानों में काम करते हैं। अच्छी भली आमदनी है। बड़े दो लड़कों की बहुएँ आ गई हैं। वृन्दा की बेटी सुन्दर है। उसकी भी खाते-पीते घर में शादी हो गई है। निरंजन खुद भी किसी दफ्तर में बैरा है। अतः सौभाग्यवती वृन्दा का किसी के घर दासीत्व करना लाजिमी नहीं। निरंजन या उसके बेटों की इच्छा भी नहीं कि वह नौकरी करे। पर वृन्दा की फटकारों ने उन्हें चुप करा दिया है। उसने दलील दी कि जब वह जवान थी, जब उसके खेलने-खाने के दिन थे, तब तो उसे दूसरों का जूठन उठा दिन बिताने पड़े थे। निरंजन की नौकरी कभी रहती, कभी नहीं। आमदनी जो होती उसका बहुत हिस्सा चरस-गांजे का धुंआ बन कर उड़ जाता। उस जमाने में वृन्दा की आमदनी से गृहस्थी चली, बच्चे पले, बड़े हुये। अब बड़ा प्यार उमड़ रहा है! उसे मालूम है कि उसकी नौकरी छुड़वा, उसकी आजादी छीन यह लोग उसको घर में बांध कर बेटों-बहुओं की खिदमत करवाना चाहते हैं। ऐसे प्यार को वह जूती की नोंक पर रखती है। वगैरह-वगैरह। वृन्दा ने खुद ही यह अपर्णा से बताया है। अपर्णा ने अपने कानों से वृन्दा को अपने परिवार वालों से जूती की नोंक वाली बात कहते सुना है। महीने में दो-एक बार मां से मिलने आते हैं वृन्दा के बेटे। उस वक्त वृन्दा 'मलिका टोरिया' का रोल अदा करती हुई उन्हें तरह-तरह के प्रवचन पिलाती है। निरंजन से बात करने में उसकी कठोरता और भी स्पष्ट होती है। बेटे महीने में दो बार आते हैं, तो निरंजन हफ्ते में तीन बार आ कर बीवी के हाल पूछ जाता है। निरंजन देखने में काफी अच्छा है। जब बैरे की वर्दी नहीं पहने रहता तो उसे बैरा समझना मुमकिन नहीं। लेकिन उस बेचारे की तकदीर का कहा क्या जाये! वह यहां आता है बीवी की नाराजगी बर्दाश्त करने। कई बार वृन्दा का गरजना-बिफरना इतनी जोर-शोर से होता है कि अपने कमरे में बैठी अपर्णा को भी सुनाई पड़ जाता है। जब कभी मर्जी होती है तो छुट्टी ले वृन्दा दो-एक दिन के लिये पति-पुत्र की गृहस्थी देख आती है। जब भी जाती है दोतले के बरामदे से अपर्णा उसे देखती रहती हैं। देख कर उन्हें हंसी आती है। वृन्दा राजराजेश्वरी-सी आगे-आगे चली जा रही है, और पीछे-पीछे चल रहा है उसका अनुगत पति। दो दिन, एक दिन वहां रह कर जब लौटती है वृन्दा, तब उसके हावभाव से लगता है कि वहां जा उसने उन लोगों को कृत-कृत्य कर दिया है।

वृन्दा के जीवन की एक घटना जब कभी अपर्णा को याद आती है तो उन्हें बड़ी हंसी आती है। हंसी आती है, साथ ही अजीब-सी कसक भी उठती है। उस बार वृन्दा न जाने क्यों रूठ गई थी। मान-भंजन के प्रयास में निरंजन, तीन बेटे और बहू सारे प्रयास कर हार चुके थे। वृन्दा नहीं मानी थी। अपर्णा को वृन्दा के इस असाधारण कोप का कारण नहीं मालूम था। इतना ही जानती थीं कि कहीं पर कुछ गड़बड़ है। वृन्दा हरवक्त नीम चढ़ी करेला बनी रहती। हरेक से फुंफकार कर बोलती। अपर्णा ने देखा कई दिन लगातार निरंजन दफ्तर से सीधे यहीं आ रहा है।

चेहरे पर हवाइयाँ उड़ती रहती हैं। आ कर निरंजन ऊपर नहीं आता, नीचे ही चुपचाप बैठा रहता है। वह जब तक रहता है वृन्दा नीचे नहीं जाती। अपर्णा इतना तो समझ ही गईं थीं कि झगड़ा चल रहा है। कारण मालूम न कर सकी थीं। इच्छा थी कि कारण पता लगायें। पूछने में उन्हें संकोच हो रहा था। निरंजन को दो दिन इन्तजार कर चले जाते देख एक दिन उन्होंने कहा, 'क्या बात है वृन्दा, निरंजन नीचे बैठा है, तू जा सुन आ, उसे क्या काम है?'

काम रोक कर वृन्दा सीधी खड़ी हुई। अपर्णा पर दृष्टि रखा। देखा ही नहीं, भस्म कर डाला मालकिन को। धड़धड़ाती हुई नीचे उतर गई। दस मिनट बाद उसी तेजी से वापस आ बुहारे कमरे को फिर से बुहारने लगी। बरामदे से अपर्णा ने देखा, सड़क पर खड़ा निरंजन उदास आँखों से उनके मकान को देख रहा है।

निरंजन की हालत पर अपर्णा को बड़ा दुःख हुआ। वापस कमरे में आ वृन्दा से बोलीं, 'क्या मामला है वृन्दा? तीन दिन से निरंजन आ कर लौटा जा रहा है। इधर तू हर वक्त सुलग रही है। हुआ क्या है?'

झाड़ू पटक सीधी हुई वृन्दा। तैश से भर कर जो बोली, उसे सुन अपर्णा हक्क रह गईं। वृन्दा बोली, 'मेरे सुलगते रहने से आपको कौन सी तकलीफ हो रही है? अगर मेरे सुलगते रहने से काम में कोई गफलत हुई हो तो झाड़ू मार कर निकाल दीजिये मुझे।'

वृन्दा कमरे से चली गई। अगले दिन से उसके बेटों ने चक्कर लगाना शुरू किया। तीनों बेटे बारी-बारी से घण्टा भर बैठे रहते। फिर विफल हो कर लौट जाते। वृन्दा उनसे बात तक न करती। करती भी तो पाँच मिनट से ज्यादा नहीं। इसके बाद एक दिन ससुराल से उसकी बेटी आ पहुँची। बेटी माँ के पास न जा अपर्णा की शरण में आई। वृन्दा के क्रोध का कारण उससे पता चला। बात यह हुई कि साहब के परिवार के साथ निरंजन पन्द्रह दिनों के लिये काशी-हरद्वार हो आया है। वृन्दा का इन दोनों जगहों को देखने का बहुत शौक है। यह जानते हुये भी निरंजन उसे छोड़ कर चला गया। कहा कि मालिक का हुक्म है, जाना ही पड़ेगा। असल में, मुफ्त में सैर करने की लालच न छोड़ सका था वह। उसे क्या पता था कि वृन्दा को पन्द्रह दिन की छुट्टी मिलेगी? फिर, जब खुद मालिक जा रहे हैं, वह वहाँ अपनी घरवाली को कैसे ले जाय? मगर वृन्दा कुछ भी सुनने को तैयार नहीं। इसी गलती के कारण उसने पति-पुत्र-परिवार सब का त्याग किया है। वृन्दा का कहना कि निरंजन के मालिक के घर में एक विधवा आयी है, यही कोई तीस साल की, वह भी साथ गई थी, उसी के लालच से निरंजन वृन्दा को भूल कर उछलता-कूदता मालिक के साथ चला गया था। निरंजन को उसने आखिरी दिन धमकाया है। कहा है अगर फिर कभी आयेगा तो वृन्दा अदालत जा कर अपनी शादी खारिज करायेगी।

अपर्णा ने सुना। सुन कर उनकी समझ में न आया कि वृन्दा की बेटी को कैसे आश्वस्त करें और कैसे वृन्दा को शान्त करें।

वृन्दा को शान्त करने का उपाय ऊपर वाले ने ही किया। हफ्ता भी न बीता था कि लड़के ने आ कर बताया कि निरंजन बुखार ले आफिस से आया है। इस वक्त एक सौ चार है। होश नहीं। आँय-बाँय बक रहा है।

मान-कोप चूल्हे में झोंक वृन्दा दौड़ी गई। तीन-चार घण्टे बाद लौट आई। बिफरती, पाँव पटकती। बोली, 'क्या बताऊँ माँ, बेईमान हैं सब। जैसा बाप वैसे बेटे। बुखार-सुखार कुछ नहीं। जरा सी हरारत है। उसी में कम्बल ओढ़े पड़ा कराहने का स्वांग भर रहा है। मैं बेवकूफ इनकी चालबाजी समझी नहीं। जाना ही नहीं था मुझे। खैर।'

लेकिन एक बात है। उसी दिन से वृन्दा का क्रोध शान्त हुआ। वह फिर पहले जैसे हँसने लगी। दौड़-दौड़ कर काम करने लगी। अपर्णा ने देखा। खुश हुईं। पर पीड़ा की एक कसक ने उनकी अन्तरात्मा को चीर कर चीथड़े कर दिये।

वृन्दा ने धीमी आवाज में कहा, 'वह बेशर्म दौड़ा आया है पूछने कि माँ को कोई जरूरत है या नहीं ? कह रहा था कि आप चाहें तो कल छुट्टी ले लेगा। मगर माँ, आपने उससे एक बार अपनी बेटी की शादी का जिक्र तक नहीं किया। आखिर मेरी भी तो कोई इज्जत है !'

अपर्णा सच ही बहुत शर्मिन्दा हुईं। वृन्दा ने ठीक ही कहा है। उसका बुरा मानना स्वाभाविक है। वह साधारण आया-दाई नहीं। इस परिवार में उसकी भी कुछ हैसियत है। अपर्णा ने मौका सम्हाला। वृन्दा को डाँट कर बोलीं, 'तू तो घर की है ! तू ने क्यों नहीं याद दिलाई मुझे ? देख तो रही है कि किस कदर परेशान हूँ मैं ! सुधारना नहीं था मेरी गलती तुझे ?'

वृन्दा को सिर ढँकते देख अपर्णा ने पलट कर देखा। समीरण दत्त पीछे खड़े हैं। रबर की चप्पलों के कारण उनके आने का पता न चला था। सड़क की उल्टी तरफ वाली ब्लाक में दो मकान आगे उनका फ्लैट है। इसी आडम्बरहीनता से ही वे यहाँ आते-जाते रहते हैं। आज तो सुबह से कई चक्कर लगा गये हैं। कुछ देर पहले अपर्णा ने उन्हें नीचे बैठक में देखा था। उनके देवरों से बातचीत कर रहे थे। वे उन्हें जानते हैं। भाई के पुराने दोस्त हैं, जानेंगे क्यों नहीं ? दोस्ती पुरानी जरूर है, पर गाढ़ी कभी न थी। वरेन्द्र सोम विज्ञान के छात्र थे। समीरण दत्त पढ़ते थे फिलासफी। पढ़ाई पूरी कर वरेन्द्र सोम ने ऐसे पेशे या नौकरी की तलाश की जिसमें चांचल्य है। आगे बढ़ने की, होड़ लगाने की उत्तेजना है। जीवन में मादकता है। जितने मेधावी वे छात्र जीवन में थे वैसी सफलता उन्हें नहीं मिली। समीरण दत्त ने अध्यापन के शान्त वातावरण को अपना लिया। अब वे डाक्टर समीरण दत्त कहलाते हैं।

समीरण दत्त अपने विषय के ख्यातिमान अध्यापक हैं। सर्वभारतीय सम्मेलनों में उनको विशेष रूप से बुलाया जाता है। शादी के बाद सम्मिलित परिवार में वरेन्द्र सोम अधिक दिन न रह सके थे। यह सब को पता है कि उनके अलग घर बसाने के पीछे अपर्णा की बहुत देन थी। जो भी हो, पुश्तैनी घर छोड़ वे जब गृहस्थी बसाने

इसी तब मनोरंजन दत्त के मकान के इकतल्ले में दो कमरे लिये थे उन्होंने। फ्लैट का पता बताने से गृहस्थी जमवाने के काम में उन्होंने काफी सहयोग दिया था। इस मकान में वे उसके कई साल बाद आये। जब शादी हुई थी अपर्णा सत्रह साल की थीं। बेटी का जन्म एक साल बाद हुआ था। जब वे मनोरंजन दत्त के फ्लैट में आये तब मुन्नी छह महीनों की थी। बच्ची अक्सर बीमार रहती। अपर्णा का स्वास्थ्य भी ठीक नहीं रहता। परिवार से अलग होने के कारण नरेन्द्र की माँ या भाइयों का इनकी नई गृहस्थी में आना-जाना नहीं के बराबर था। उन दिनों नरेन्द्र और अपर्णा को मनोरंजन पर बहुत निर्भर करना पड़ता था। उन दिनों मनोरंजन की माँ भी थीं। वे भी इनके लिये बहुत कुछ करतीं। बच्ची की हर जरूरत को पूरा करतीं। उनकी सलाह के बिना अपर्णा कुछ भी न करतीं। उन दिनों नौकरी की खातिर नरेन्द्र को अक्सर दौरे पर जाना पड़ता। तब तो अपर्णा को मनोरंजन और उनकी माँ के भरोसे ही रहना पड़ता। मुहल्ले के लोग कभी-कभार आते। मनोरंजन दत्त से उनका परिचय तभी हुआ था।

फिर हँसती हुई वृन्दा देवी से हट गई। उसका इस तरह इठलाना कर चली जाना अजीब-सा लगा अपर्णा को। क्या वृन्दा निरंजन को न बुलाने के कारण नाराज है? वैसे आचार-आचरण की वह विनम्र कभी भी नहीं रही, पर आज की ठेंगी कुछ ज्यादा ही लगी अपर्णा को। यह भी हो सकता है कि उसकी बात बीच में रुक गई, इसलिये नाराज है वह। या ऐसा भी हो सकता है, यह बात अपर्णा को पहले भी लगी है कि इस शान्त-स्वभाव अल्प-भाषी अध्यापक महोदय वृन्दा को अच्छे नहीं लगते।

यह बात अपर्णा को उस दिन भी लगी थी जिस दिन मनोरंजन बाबू ने उनके माथे पर मलहम मला था। उस रात अपर्णा के सर में बहुत दर्द था। बेटी शान्ति-निकेतन गई थी। जब मीनू और प्रशान्त ने आकर मनोरंजन बाबू को सिरहाने बैठे बेताब देखा था। मनोरंजन बाबू ने उस दिन जो कुछ किया था बड़ी सहजता से किया था। पर अपर्णा उसे उतनी सहजता से ले नहीं सकी थीं। उन्हें सबसे ज्यादा परेशानी यह सोच कर हो रही थी कि उनकी असहजता मनोरंजन बाबू पर प्रकट न हो जाये। उन्होंने जब सुना कि अपर्णा के सिर में दर्द है तो चौंक निःसंकोच से माथे पर हाथ रख ताप का परीक्षण किया। फिर इधर-उधर कुछ टटोलने लगे। रिलीफ बाम की शीशी दीख पड़ते ही उठा लाये। फिर बिना कहे सुने, कुर्सी खींच सिरहाने बैठ मालिश करने लगे। वैसे उन्होंने यह नहीं पूछा कि मालिश की जरूरत है या नहीं, वैसे ही यह प्रश्न भी उनके मन में नहीं आया कि ऐसा करना शोभनीय है या नहीं। अपर्णा ने आँखें खोल दो-एक बार देखा। चेहरे पर निःसंकोच के अलावा कुछ नहीं देखा। वृन्दा ने दो बार उन्हें उस तरह बैठ मालिश करते देखा। एक बार बिना जाने किसी काम से आई थी और एक बार किसी काम से आकर भी चौखट के बाहर से मुड़ कर चली गई थी। उसके बाद कई दिनों तक वृन्दा ने सीधे मुँह बात नहीं किया था। अपर्णा को बहुत गुस्सा आया था, पर कुछ कुछ कह नहीं सकी थीं। वैसे

इस बात का कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं है कि वृन्दा समीरण बाबू को पसन्द नहीं करती। समीरण बाबू के विषय में अच्छा या बुरा वह एक शब्द भी नहीं बोलती। फिर भी अपर्णा को लगता है। जैसे आज लगा।

वृन्दा के जाते ही समीरण बाबू ने मुस्करा कर धीरे से कहा, 'कौन-सी नई समस्या आ खड़ी हुई इस वक्त ? दिमाग इतना झन्नाया क्यों है ?'

बिफर कर अपर्णा ने कहा, 'यह भी बताना पड़ेगा ? यहाँ तो समस्या ही समस्या है ! ममता के मारे बहन-भाई सभी को बुला लाये हैं। मुझे बताया तक नहीं। उनका क्या कसूर ? बुलाया है उन्हें, चले आये हैं। अब जिम्मेदारी मेरी हो गई है। इतने सारे लोग, कहाँ रहेंगे, क्या खायेंगे, अभी तक कुछ भी ठीक नहीं।'

किसने उन पर यह मुसीबत मढ़ी है समीरण दत्त को समझने में जरा भी देर नहीं लगी। कुछ देर बाद वे बोले, 'रहने का इन्तजाम तो मेरे घर में भी हो सकता है। पुरुषों को सब हमारे घर भेज दो। पर खाने-पीने का इन्तजाम''''कहो तो हरि को ले कर एक बार बाजार हो आऊं ?'

क्रोध भूल हँस पड़ीं अपर्णा। यह बात उनकी, रुपये-पैसे होते हुये भी जिनका रहने-खाने का ठिकाना नहीं, हर बात के लिये जिन्हें नौकर हरिदास पर निर्भर रहना पड़ता है, खाना परोस कर सामने दे दो तो खा लिया, नहीं तो चुपचाप बैठे इन्तजार करते रहेंगे। सुबह से अपर्णा बहुत बार नीचे आई थीं। जितनी बार समीरणजी को देखा था, पाया था, कि वे बड़ी उतावली से अपर्णा को देख रहे हैं। अपर्णा के मन में उमड़ता उद्वेग केवल इन्हीं ने समझा है। मौका पाते ही ऊपर आये हैं पूछने कि उनके करने लायक कोई काम है या नहीं। वे ही एकमात्र हैं जो इस बात को समझ रहे हैं कि इतनी बड़ी जिम्मेदारी निभाने में अपर्णा को कितनी परेशानी हो रही है।

अपर्णा ने गाम्भीर्य से कहा, 'आप जायेंगे बाजार ? तब तो बहुत ही अच्छा होगा। तो फिर वृन्दा से कहूँ कि थैली-वैली दे दे आपको। लेकिन एक बात है। बाजार कहाँ है ? मालूम है आपको। ऐसा तो न होगा कि सामान लेकर आप कल सुबह वापस आयेंगे ? अपर्णा की इस चुटकी के पीछे एक मजेदार स्मृति है। बहुत दिन पहले की बात है। तब समीरणजी की माँ जीवित थीं और अपर्णा-वरेन्द्र उनके एकतले के किराये-दार थे। हरिदास छुट्टी पर घर गया हुआ था, एवज में नया नौकर काम कर रहा था। माँ का एक व्रत उपस्थित हुआ। पूजन-सामग्री की लिस्ट बना कर माँ ने बेटे से कहा कि लिस्ट मिला कर सामान ले आये बाजार से। माँ का हुक्म है, अतः समीरण बाबू चल पड़े। सुबह के गये-गये दोपहर के दो बजने लगे, उनका पता ही नहीं। माँ बेचारी रोनी-रोनी होने लगीं। छुट्टी थी नहीं उस दिन, माँ को लगा बेटा बाजार की खरीदारी भूल कालेज न चला गया हो। दो बजे के बाद पसीने से तर-बतर समीरणजी दिखाई पड़े। पीछे टोकरी सिर पर लादे एक मजदूर चला आ रहा था। पूछने पर पता चला कि बाजार की राह में एक मित्र मिले थे। घण्टे भर वो उन्हीं से बात करने में लग गये। यह मित्र बाहर कहीं रहते हैं, अतः इतने दिन पर मिलने पर बात तो करनी ही

थी। फिर जब बाजार पहुँचे तो यही नहीं तय कर पाये कि कौन सा सामान किस दूकान में मिलेगा। कुली से पूछ-पूछ कर एक ही चीज के लिये पांच-सात दूकानों के चक्कर लगाये। घर से चलते वक्त पेन्सिल ले जाना भूल गये थे, इसलिये खरीदी चीजों पर निशान नहीं लगा पा रहे थे। क्या-क्या खरीदा, याद ही न रहा। सामान खोलने पर देखा गया, कुछ सामान आया ही नहीं था और कुछ के चार-चार बण्डल थे। जब माँ बिगड़ने लगी तब समीरण बोले, 'मैं क्या करता ? कुली से पूछा फलानी चीज ली है या नहीं ? वह ठीक से बता नहीं पाया, तो मैंने फिर ले लिया।'

इतने तनाव के बावजूद भी अपर्णा इस तरह मजाक कर पा रही हैं, देख *समीरणजी को सन्तोष हुआ।* मुस्करा कर बोले, 'बात तो सही है। पर मुझे भी तो कुछ करना चाहिये! कहाँ तक तुम्हें परेशान होते देखूं ? न तुम्हारा दिमाग ठिकाने है न तबीयत। कई बार देखा बात करते वक्त भी हाँफ रही हो।'

अपर्णा की दृष्टि उनके मुख पर ठहरी। इनकी बात सुन कर कैसा-कैसा सा होने लगा मन। किसकी बेटी की शादी है और फिक्र किसे सता रही है! *फिक्र जिसे करनी चाहिये उसे तो एक ही फिक्र है, कैसे उन्हें परेशान करे। खैर। कोई बात नहीं।* बहुत समय बीता है, कल का दिन और बीत जाये। फिर सारी बातों का जवाब एक साथ देंगी। इतने दिनों से जो इतना कुछ सहती आ रही हैं, सारे का जवाब एक ही दिन एक ही साथ दे देंगी। फिर जो होगा देखा जायेगा। बोली आप फिक्र न करें। मैं बिल्कुल ठीक हूँ। हाँफने की बात जहाँ तक है, इतनी बार सीढ़ी चढ़ने-उतरने से कुछ तो फर्क पड़ेगा ही। आप बिल्कुल निश्चिन्त होकर बैठिये, नहीं तो घर जा आराम फर्माइये.....'

बात पूरी करते-करते अपर्णा की दृष्टि समीरणजी को छोड़ सामने को प्रसारित हुई। ऐसा क्यों हुआ, वे कह नहीं सकतीं। जबान पर आई बात आधी दूर आकर रुक गई। देखा बरामदे के दाहिने ओर कमरों में जो कमरा बाद में है उसके अधखुले किवाड़ की आड़ में दो ननदें खड़ी हैं। आँखें उनकी इधर ही लगी हैं। आँखों में उनके कौतूहल है या उद्विग्नता यह अपर्णा तय नहीं कर पाई।

समीरणजी नीचे चले गये। अपर्णा नीचे जाते-जाते फिर रुक गई। वृन्दा के पति निरंजन से बात करनी है। उसे कहने जाने की सोच रही थी। लेकिन अभी समीरण जी नीचे गये हैं। वे भी जायें तो ननदें पता नहीं इसका क्या मतलब निकालेंगी। अपने पर बड़ी कोफ्त आई उन्हें। बस एक ही दिन का तो मामला है! फिर कौन किसको पूछेगा! अब भी उन्हें यह चिन्ता सता रही है कि ननदें क्या कहेंगी? कल सुपी की शादी के पहले तक, सुपी के कारण ही उनके हाथ-पाँव बँधे हैं। तब तक चुप रहना ही है। सीढ़ी पर खड़ी होकर ही ननदों से पूछा, 'कुछ कहोगी ?'

धीरा आगे बढ़ी। पूछने लगी, 'यही तो समीरण बाबू हैं न भाभी ?'

किसी और वक्त धीरा ने यह सवाल किया होता तो अपर्णा जवाब न देतीं।

इस बात का कोई प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं है कि वृन्दा समीरण बाबू को पसन्द नहीं करती। समीरण बाबू के विषय में अच्छा या बुरा वह एक शब्द भी नहीं बोलती। फिर भी अपर्णा को लगता है। जैसे आज लगा।

वृन्दा के जाते ही समीरण बाबू ने मुस्करा कर धीरे से कहा, 'कौन-सी नई समस्या आ खड़ी हुई इस वक्त ? दिमाग इतना झन्नाया क्यों है ?'

बिफर कर अपर्णा ने कहा, 'यह भी बताना पड़ेगा ? यहाँ तो समस्या ही समस्या है ! ममता के मारे बहन-भाई सभी को बुला लाये हैं। मुझे बताया तक नहीं। उनका क्या कसूर ? बुलाया है उन्हें, चले आये हैं। अब जिम्मेदारी मेरी हो गई है। इतने सारे लोग, कहाँ रहेंगे, क्या खायेंगे, अभी तक कुछ भी ठीक नहीं।'

किसने उन पर यह मुसीबत मढ़ी है समीरण दत्त को समझने में ज़रा भी देर नहीं लगी। कुछ देर बाद वे बोले, 'रहने का इन्तज़ाम तो मेरे घर में भी हो सकता है। पुरुषों को सब हमारे घर भेज दो। पर खाने-पीने का इन्तजाम····कहो तो हरि को ले कर एक बार बाज़ार हो आऊँ ?'

क्रोध भूल हँस पड़ीं अपर्णा। यह बात उनकी, रुपये-पैसे होते हुये भी जिनका रहने-खाने का ठिकाना नहीं, हर बात के लिये जिन्हें नौकर हरिदास पर निर्भर रहना पड़ता है, खाना परोस कर सामने दे दो तो खा लिया, नहीं तो चुपचाप बैठे इन्तजार करते रहेंगे। सुबह से अपर्णा बहुत बार नीचे आई थीं। जितनी बार समीरणजी को देखा था, पाया था, कि वे बड़ी उतावली से अपर्णा को देख रहे हैं। अपर्णा के मन में उमड़ता उद्वेग केवल इन्हीं ने समझा है। मौका पाते ही ऊपर आये हैं पूछने कि उनके करने लायक कोई काम है या नहीं। वे ही एकमात्र हैं जो इस बात को समझ रहे हैं कि इतनी बड़ी जिम्मेदारी निभाने में अपर्णा को कितनी परेशानी हो रही है।

अपर्णा ने गाम्भीर्य से कहा, 'आप जायेंगे बाजार ? तब तो बहुत ही अच्छा होगा। तो फिर वृन्दा से कहूँ कि थैली-वैली दे दे आपको। लेकिन एक बात है। बाजार कहाँ है ? मालूम है आपको। ऐसा तो न होगा कि सामान लेकर आप कल सुबह वापस आयेंगे ? अपर्णा की इस चुटकी के पीछे एक मजेदार स्मृति है। बहुत दिन पहले की बात है। तब समीरणजी की माँ जीवित थीं और अपर्णा-वरेन्द्र उनके एकतले के किरायेदार थे। हरिदास छुट्टी पर घर गया हुआ था, एवज में नया नौकर काम कर रहा था। माँ का एक व्रत उपस्थित हुआ। पूजन-सामग्री की लिस्ट बना कर माँ ने बेटे से कहा कि लिस्ट मिला कर सामान ले आये बाजार से। माँ का हुक्म है, अतः समीरण बाबू चल पड़े। सुबह के गये-गये दोपहर के दो बजने लगे, उनका पता ही नहीं। माँ बेचारी रोनी-रोनी होने लगीं। छुट्टी थी नहीं उस दिन, माँ को लगा बेटा बाजार की खरीदारी भूल कालेज न चला गया हो। दो बजे के बाद पसीने से तर-बतर समीरणजी दिखाई पड़े। पीछे टोकरी सिर पर लादे एक मजदूर चला आ रहा था। पूछने पर पता चला कि बाजार की राह में एक मित्र मिले थे। घण्टे भर तो उन्हीं से बात करने में लग गये। यह मित्र बाहर कहीं रहते हैं, अतः इतने दिन पर मिलने पर बात तो करनी ही

थी। फिर जब बाजार पहुँचे तो यही नहीं तय कर पाये कि कौन सा सामान किस दूकान में मिलेगा। कुली से पूछ-पूछ कर एक ही चीज के लिये पांच-सात दूकानों के चक्कर लगाये। घर से चलते वक्त पेन्सिल ले जाना भूल गये थे, इसलिये खरीदी चीजों पर निशान नही लगा पा रहे थे। क्या-क्या खरीदा, याद ही न रहा। सामान खोलने पर देखा गया, कुछ सामान आया ही नही था और कुछ के चार-चार बण्डल थे। जब माँ बिगड़ने लगी तब समीरण बोले, 'मैं क्या करता ? कुली से पूछा फलानी चीज ली है या नही ? वह ठीक से बता नही पाया, तो मैंने फिर ले लिया।'

इतने तनाव के बावजूद भी अपर्णा इस तरह मजाक कर पा रही हैं, देख समीरणजी को सन्तोष हुआ। मुस्करा कर बोले, 'बात तो सही है। पर मुझे भी तो कुछ करना चाहिये। कहाँ तक तुम्हें परेशान होते देखूं ? न तुम्हारा दिमाग ठिकाने है न तबीयत। कई बार देखा बात करते वक्त भी हाँफ रही हो।'

अपर्णा की दृष्टि उनके मुख पर ठहरी। इनकी बात सुन कर कैसा-कैसा सा होने लगा मन। किसकी बेटी की शादी है और फिक्र किसे सता रही है! फिक्र जिसे करनी चाहिये उसे तो एक ही फिक्र है, कैसे उन्हें परेशान करे। खैर। कोई बात नही। बहुत समय बीता है, कल का दिन और बीत जाये। फिर सारी बातों का जवाब एक साथ देंगी। इतने दिनों से जो इतना कुछ सहती आ रही हैं, सारे का जवाब एक ही दिन एक ही साथ दे देंगी। फिर जो होगा देखा जायेगा। बोली आप फिक्र न करें। मैं बिलकुल ठीक हूँ। हाँफने की बात जहाँ तक है, इतनी बार सीढ़ी चढ़ने-उतरने से कुछ तो फर्क पड़ेगा ही। आप बिल्कुल निश्चिन्त होकर बैठिये, नही तो घर जा आराम फर्माइये.....'

बात पूरी करते-करते अपर्णा की दृष्टि समीरणजी को छोड़ सामने को प्रसारित हुई। ऐसा क्यों हुआ, वे कह नही सकती। जबान पर आई बात आधी दूर आकर रुक गई। देखा बरामदे के दाहिने ओर कमरों में जो कमरा बाद में है उसके अघखुले किवाड़ की आड में दो ननदें खड़ी हैं। आँखें उनकी इधर ही लगी हैं। आँखों में उनके कौतूहल है या उद्विग्नता यह अपर्णा तय नही कर पाईं।

समीरणजी नीचे चले गये। अपर्णा नीचे जाते-जाते फिर रुक गईं। वृन्दा के पति निरंजन से बात करनी है। उसे कहने जाने की सोच रही थी। लेकिन अभी समीरण जी नीचे गये हैं। वे भी जायें तो ननदें पता नही इसका क्या मतलब निकालेंगी। अपने पर बड़ी कोफ्त आई उन्हे। बस एक ही दिन का तो मामला है! फिर कौन किसको पूछेगा! अब भी उन्हे यह चिन्ता सता रही है कि ननदें क्या कहेंगी? कल सुपी की शादी के पहले तक, सुपी के कारण ही उनके हाथ-पाँव बँधे हैं। तब तक चुप रहना ही है। सीढ़ी पर खड़ी होकर ही ननदों से पूछा, 'कुछ कहोगी ?'

धीरा आगे बढ़ी। पूछने लगी, 'यही तो समीरण बाबू हैं न भाभी ?'

किसी और वक्त धीरा ने यह सवाल किया होता तो अपर्णा जवाब न देतीं

सिर्फ देखतीं उसे। उनके नुकीले जवाब से एकदृष्ट होकर देखना अधिक प्रभावकारी होता। धीरा की सहजता आसानी से दरक जाती। अपर्णा जानती हैं कि इन्हें यानी समीरणजी को केन्द्र बना उनके ससुराल में किसी जमाने में बहुत तूफान मचा था। कहने वालों ने क्या नहीं कहा, क्या नहीं अनुमान किया। अपर्णा ने कहा कुछ नहीं, 'हां' में सिर हिला दिया।

धीरा बोली, 'कितना बदल गये हैं समीरण बाबू! अब तो बूढ़े लगने लगे हैं। कानों के आगे-पीछे तमाम सफेद बाल चमक रहे हैं।'

इतने कामों के बीच जब दिमाग खराब हुआ जा रहा है तब धीरा को आलोचना के लिये यही विषय मिला! अपर्णा का धैर्य टूटने लगा। इससे कहीं अच्छा होता अगर धीरा अपने मन में आई बात साफ-साफ कह देती। अगर सीधे से पूछती, 'क्यों भाभी, इनसे तुम्हारी उस पुरानी दोस्ती का अब क्या हाल है?' या कहती, 'क्यों भाभी, तुम्हारी उनकी दोस्ती कैसी चल रही है?' तो इससे अच्छा होता। सो नहीं कहा उसने। चालाकी पर उतर आई धीरा। अपर्णा ने सौम्यता से कहा, 'यह ऐसी चिन्ता की कौन-सी बात है? आयु तो बढ़ती ही है सभी की। कि नहीं?'

'नहीं....बात यह है कि इन्हें तो बहुत दिन बाद देखा न। पहचान नहीं पा रही थी।....भाभी, भैया कहां छिप गये, बताओ न?'

आजकल अपर्णा किसी को देखते ही बड़ी गहराई तक उसके मन में उतर जाती हैं। नहीं कहने पर भी मन की बात समझ जाती हैं। धीरा के इस अन्तिम वाक्य ने बहुत कुछ बताया उन्हें। छोटी ननद तो सुबह से ही आई है। उसने कुछ देखा, बहुत कुछ अनुमान लगाया होगा। फिर धीरा के आने पर बहनों ने इस पर आलाप-आलोचना किया होगा। जिस खुशी से डगमगाती वर्धवान से चली थी धीरा, अब उसमें दरार ही दरार नजर आ रही है अपर्णा को। उनकी इच्छा हुई, कहें, धीरा, तुम जो सोच कर वर्धवान से चली थी वह गलत है। अब जो देख रही हो वही सच है। तुम्हारे भैया का हाल मुझे पता नहीं। पता रखना जरूरी भी नहीं समझती मैं। तुम्हें उन्होंने बुलाया है। मैंने नहीं। उनके बुलाने के पीछे उद्देश्य था, मुझे नीचा दिखाना। वे इस वक्त घर पर तो नहीं हैं पर जहां भी हैं वहीं से मेरी परेशानी का आनन्द उठा रहे हैं। पर यह वह कैसे कहें? कहना किसी प्रकार भी उचित नहीं। अपर्णा ने नहीं कहा। बोलीं, 'तुम्हारे भैया ने मुझसे बताया नहीं।'

धीरा को और कुछ कहने या सुनने का अवकाश न देकर अपर्णा सीढ़ी से उतरने लगीं। गुस्से से कान जले जा रहे हैं। पानी से धोतीं तो राहत मिलती। अपर्णा को एक बार यह भी लगा कि हो सकता है, उनका अनुमान गलत है। ननदें कुछ देख नहीं रही थीं। सोच भी नहीं रही हैं कुछ। हो सकता है उन्हें समीरणजी से सीढ़ी पर बात करते देख वे आगे न बढ़ इन्तजार कर रही थीं। अपर्णा एकाएक बिफर उठीं। इस बार अपने पर। यह क्या तमाशा है! जो चाहे देखे। जो चाहे

बात करे। उन्हें क्या तकलीफ है ? बेकार की बातों को सोच कर चिन्तित होने का क्या तुक है ?

नीचे पहुँचते ही उन्हें सामने वाले बन्द कमरे से गाने की आवाज के साथ और भी आवाजें सुनाई दीं। कोई एक लड़की एक बहुत ही सस्ता सा फिल्मी गीत गा रही है और बाकी हुल्लड़ मचा रही हैं। खुली हुई खिड़की से अपर्णा ने अन्दर झाँका। पाँच-छह लड़कियाँ हैं अन्दर। अजीब मदमस्ती से हुल्लड़बाजी कर रही हैं। सरगना है सुपी की वह सहेली जिसका नाम झुमुर है। सुपी की यह 'एक दिल, एक जान' सहेली अपर्णा को बिल्कुल अच्छी नहीं लगती। इस शादी से झुमुर को सबसे ज्यादा खुशी है। उसका रास्ता साफ जो हुआ जा रहा है!

झुमुर की राह साफ होने की बात जो अपर्णा के मन में आई इसका कारण है। करीब दो महीने पहले सुपी ने चहकते हुये उनसे कहा था, 'तुम तो माँ, पापा के सिन्हा को इतना नागवार समझती हो। लेकिन झुमुर तो उसके पीछे दीवानी हुई जा रही है! जब कभी सिन्हा की बात चलती है वह उनकी कितनी तारीफ करती है। आज सुना झुमुर के पिता सिन्हा को घर पर बुला खाना-वाना खिला रहे हैं।'

पापा के सिन्हा यानी विकास सिन्हा। यह वही है, स्कूल की पढ़ाई पूरी कर जो वरेन्द्र सोम के दफ्तर में एल० डी० क्लर्क की हैसियत से दाखिल हुआ था। उन दिनों दफ्तरी बैरे की तरह 'सोम साहब' की फाइलें उठा कर यहाँ आया करता। उसे देख कर लगता कि वह सोम साहब के विनीत सेवक के अलावा कुछ नहीं समझता अपने को। धीरे-धीरे उसने इण्टर पास किया। ग्रेजुयेट बना। साथ ही दफ्तर की परीक्षाओं में उत्तीर्ण हो अब जूनियर आफिसर का पद संभाल रहा है। वरेन्द्र सोम उसे बहुत स्नेह करते हैं। इज्जत भी। एकमात्र इसी कारण अपर्णा उसे बिल्कुल पसन्द नहीं करतीं। सुपी के पिता में पलने वाली आकांक्षा का पता चलते ही उनका मन और भी कठोर हो गया है। उस छोकरे का इतना साहस! बौना चला है चाँद पकड़ने!....खैर, अब फिक्र नहीं, दोनों की आशाओं का अन्त कर दिया है उन्होंने।

झुमुर के पापा वरेन्द्र सोम के दफ्तर के अन्य विभाग के अधिकारी हैं। उन्होंने अगर विकास को अपनी कन्या के योग्य समझा है तो अपर्णा को नाराज होने का कोई कारण नहीं। पर सुपी की बात सुन उन्हें बहुत बुरा लगा था। उस दिन उन्हें झुमुर और उसके पिता, दोनों ही बड़े सस्ते किस्म के इन्सान लगे थे। अगर वे जरा शान्त होकर सोचतीं तो बुरा लगने का कारण स्पष्ट होता। विकास उन्हें अच्छा नहीं लगता, महज इसीलिये न कि वरेन्द्र उसे मानते हैं। अपर्णा को खुशी तब होती जब वरेन्द्र सोम के पसन्द किये लड़के को सारी दुनिया रिजेक्ट करती।

सुपी की बात सुन उन्होंने तेज हो कर कहा था, 'तेरा क्या जाता है? कोई बुलाये, कोई खाना खिलाये, तेरा क्या बनता-बिगड़ता है?'

'मेरा क्या बनेगा-बिगड़ेगा माँ, मैंने सुना, तुम्हें बता दिया। झुमुर का ख्याल है कि मैं उसके राह को रोड़ा हूँ, इसलिये मुझे सुना-सुना कर यह सब कहती है।'

अपर्णा का पारा और चढ़ा, 'झुमुर ऐसा सोचती है ! क्यों सोचती है भला ? रंजन की बात वह जानती नहीं क्या ?'

'माँ, तुम तो कुछ समझती नहीं !' सुपी ने झुंझला कर कहा, 'झुमुर की समस्या में नहीं, विकास सिन्हा खुद ही है। वह आस लगाये बैठा है कि तुम या मैं शायद मत पलट दूं।'

अपर्णा के गम्भीर मुख पर संशय और सन्देह की रेखायें वक्र हुई। 'तू या मैं शायद मत पलटूं ? यह आशा है उसकी ? मगर यह तुझे कैसे मालूम ? किसने कहा ? उसने ?'

सुपी जवाब दे नहीं सकी थी। हिचकिचाते हुये बोली थी, 'न-न, वह क्यों कहता ? देख तो रही हो, अभी भी हरदम पापा के पास आता-जाता रहता है। इसी से तो साफ जाहिर होता है।'

इस घटना के कुछ दिन पहले एक शाम बेटी से बहुत नाराज हुई थीं अपर्णा। रात के नौ बजे के बाद जब उससे जिरह किया था तब कलई खुली थी। खुलती न अगर शाम को रंजन आया न होता। अगर रंजन न आया होता तो अपर्णा सोचती— रंजन के साथ ही गई है कहीं। अपर्णा की एक सुविधा है, सुपी के पेट में बात छिपती नहीं। जहां जरा जाँच-पड़ताल किया कि सच्चाई उगल देती है। उस दिन जब कठोर हो कर पूछा था कि कहां गई थी तब वह बोली थी, पिक्चर देखने। ऐसा अपराधिनी-सा मुंह बना कर बोली थी कि अपर्णा को उसमें काला नजर आया था। शाम वाली शो में सुपी अक्सर पिक्चर जाती है, आज उसका मुंह उतर क्यों गया ? मुखमुद्रा और भी कठोर बना कर अपर्णा ने पूछा, 'और कौन गया था साथ ?' माँ की मुद्रा और स्वर से सुपी सावधान हो गई। वह जान गई कि माँ से कोई बात छिपी नहीं। इसलिये झूठ न बोल उसने दूसरे पर दोष डाल सच ही बताया। बोली, 'मैं क्या करती ? तीन टिकट ले झुमुर आई। बोली, उसने तीन टिकट लिये हैं। तू नहीं जायेगी तो उसका टिकट का पैसा बर्बाद होगा। चली चल। इसमें मेरी कौन सी गलती है ?' बिना बताये भी अपर्णा समझ गई थीं कि टिकट विकास लाया था। बेटी की रुचि का रुख देख घृणा से भर गया था अपर्णा का मन। उसी के कुछ दिन बाद जब सुपी उनसे झुमुर के विकास से प्रेम की बात हंस-हंस कर बताने लगी तब तो उनके तन-बदन में आग ही लग गयी थी। अगर सुपी ने बताया न होता कि विकास यहां हर वक्त आता है, माँ-बेटी के मत-परिवर्तन की आस लगाये बैठा है, तो झुमुर को यह सब मालूम कैसे होता ? यह सुपी का ही काम है। सहेलियों के बीच यह सब कह अपनी कीमत बढ़ा रही है। अपनी बेटी है तो क्या ? अपर्णा आँख बन्द कर के तो रहती नहीं। बेटी के चाल-चलन, उसके रंग-ढंग सभी से वाकिफ हैं वे। उसकी एक ही चाह है। वह यह कि, वह पसन्द करे या न करे, मगर लड़के उसको पसन्द करें, उसके लिये आह भरें, हाय लैला, हाय लैला करते फिरें। यही चाहती है वह, और कुछ नहीं। चाहेगी भी क्यों नहीं ? देखना तो होगा किस बाप की बेटी है वह !

आज, इस वक्त, उसी झुमुर को सस्ता फिल्मी गीत गाती सुन अपर्णा का पारा फिर चढ़ गया। आजकल की लड़कियाँ किस क़दर बेशरम हैं! जिस गीत के शब्द ऐसे भद्दे और सुर ऐसा बाजारू, गले से इनके वह निकला कैसे? यह तो ऐसा गीत है जिसे गाने के पहले आदमी मारे शर्म के मर जाये! घर पर इतने लोग आये हैं। नौकर लोग हैं। बाहरी आदमियों का आना-जाना चल ही रहा है। सभी सुन रहे हैं और इन्हें न लाज है न हया! अपनी बेटी पर भी खिसिया गईं वे। यह तो अच्छी बात है, शादी तेरे मन की है, खुश है तू, बड़ी अच्छी बात है, मगर उस खुशी को इस तरह इजहार करने की क्या जरूरत आ पड़ी है? देख रही है तेरी खुशी के लिए माँ दुनिया-आसमान एक कर सामान जुटा रही है, रात-दिन एक कर काम कर रही है। तुझसे इतना भी नहीं होता कि माँ के पास बैठे, दो बात करे, हाथ बटाये?

बेटी की बात सोचते-सोचते अपर्णा के स्मृति-पटल पर बाइस साल पहले की एक घटना की स्मृति उज्ज्वल हुई। घर में मेहमान ठसाठस भरे। इस शादी से चौगुना ताम-झाम। हरेक के हाथ में कोई न कोई काम। सारा घर अस्त-व्यस्त। इस भीड़-भाड़, हो-हल्ले के बीच एक लड़की जिसकी आयु है सत्रह साल, जिसका नाम है अपर्णा, सुबह से रो-रो कर बेहाल हो रही है। इतना बड़ा महल सा मकान मगर रोने के लिये उसे एक एकान्त कोना मिल पाना कठिन हो रहा है। जी भर कर रो लेने के लिये बेचारी लड़की एक बार इस कमरे में छिपती, एक बार उस कमरे में।

सत्रह वर्षीय अपर्णा के मन में उस वक्त जो भावनायें समाई थी उनमें प्रमुख था भय और माता-पिता के प्रति क्षोभ। भय से अधिक क्षोभ। इसी कारण रो भी रही थी इतना फूल-फूल कर। बेचारी ने अभी हाल स्कूल की अन्तिम परीक्षा पास की है। कालेज में दाखिला भी नहीं हुआ। इतने ही देर में माता-पिता बेटी को ठिकाने लगाने के लिये तैयार हो गये? क्यों? क्योंकि वर की मौसी को यह लड़की बहुत अच्छी लग गई है। वर की मौसी का कन्या के घर आना-जाना था। अगर मालूम होता कि वे इसलिये इतनी बार आती हैं तो वह उन्हें ऐसा मजा चखाती कि वे भी याद रखतीं। मगर तब वे सीधी थीं। कच्चे उम्र की नादान लड़की! मौसी के इस 'अच्छी लगने' के पीछे क्या कारण है यह तो बाद में पता चला। शादी का साल बीतते न बीतते वो बड़ी सफाई से पता चला। लड़के वाले लड़के की चालचलन से त्रस्त थे। सोचा था कि छोटी आयु में शादी कर देने से शायद सुधर जाये लड़का। इसी का, उनकी तरफ से मौसी ने जाल बिछाया था।

जाल बिछाने की बात, लड़के को सुधारने की बात अपर्णा क्यों, उसके माता-पिता ने भी कल्पना न की थी। वे तो यही सुन विगलित हुये थे कि उनकी सत्रह वर्षीया कन्या को किसी ने पसन्द किया है। उनकी बेटी सुन्दर तो नहीं कही जा सकती, पर श्रीमयी अवश्य है। लड़की लंगड़ी-लूली नहीं, कानी-बहरी नहीं, फिर भी उसके माता-पिता ने रुकना जरूरी न समझा। पहली बात जो चली तो लड़की को

पार करने को तैयार हो गये। इतनी भारी पड़ने लगी थी अपर्णा उनको ? लड़का भी ऐसा कोई तीसमारखाँ नहीं। एम० एस० पास कर जूनियर काडर में लगा है। प्रोवेशन के बाद आफिसर ग्रेड में जायेगा। कन्या के माता-पिता को इसी लालच ने फँसा लिया था। वैसे उनकी आर्थिक स्थिति लड़के वालों से कहीं ज्यादा पुख्ता थी। लड़के वालों ने जब सुना कि अपर्णा के पिता धनी हैं तब खूब बड़ा मुँह खोल कर माँगें पेश की थीं। यह नहीं कहा कि आपकी बेटी पसन्द है मुझे, बस उसी को दे दीजिये, हमें और कुछ नहीं चाहिये।

जीवन के आरम्भ में कन्या के पिता पढ़ाई पूरी कर किसी दफ्तर में साधारण नौकरी करते थे। अपनी स्थिति से सन्तुष्ट न होने के कारण उन्होंने एक दोस्त की साझेदारी में एक टूटी-फूटी ट्रक खरीदी थी। खरीदी भी थी कर्ज ले कर। लक्ष्मी प्रसन्न हुई थीं। देखते-देखते ट्रकों की संख्या बढ़ती गई। जब एक पुरानी ट्रक के बदले चार नई ट्रकें चलने लगीं तब वे प्रौढ़ हो चुके थे। उस वक्त दोस्त की सलाह मान नौकरी छोड़ पूरी तरह व्यापार में लग पड़े वे। देखते-देखते वे और भी सम्पन्न हुये। समृद्ध हुये। लेकिन एक बात नहीं बदली। प्रौढ़ावस्था तक नौकरी करने के लिये हो या और किसी कारणवश हो, विश्वविद्यालय की डिग्री और ऊँचे नाम वाली नौकरी के प्रति उनका मोह बना ही रहा। अगर बात ऐसी न होती तो सत्रह साल की लड़की को पार करने के लिये इतने उतावले क्यों होते!

अपर्णा ने इतनी बारीकी से जो सोचा, इन निष्कर्षों पर जो पहुँचीं तो वह बहुत बाद में। शादी के दिन यह सब नहीं आया था दिमाग में। शादी के थोड़े ही दिन बाद से सोचने का जो क्रम चल निकला था उसके फलस्वरूप उनकी जो हालत हुई थी वह तो वे ही जानती हैं। अपनी शादी के दिन की यादें इतनी प्रत्यक्ष हुईं आज अपनी बेटी और अपनी मनस्थिति के अन्तर पर विचार करते-करते। उस दिन पिता-माता पर क्षोभ था, बिछुड़ने का दुःख था, नये लोगों का भय था। तीनों ही असह्य थीं। और आज सुपी को देखो। यह सच है कि समय बदल गया है। सुपी भी सत्रह साल की नहीं। फिर भी, कुछ तो सोचा होता!

सुपी और उसकी सहेलियों को बन्द कमरे में हुड़दंग मचाती छोड़ अपर्णा आगे बढ़ीं। चौक पार कर चौके के सामने पहुँचते ही पाँव रुक गये उनके। वरेन्द्र सोम खड़े हैं चौके के अन्दर। स्मृति जितनी दूर जाती है उसमें टटोल कर देखा, याद नहीं पड़ा कि वरेन्द्र सोम कभी चौके में आये हों। सामने पड़ी है एक ढेर सब्जी और बहुत सारी मछली। निःशब्द खड़ी है वृन्दा। उसके पीछे निरंजन। ठीके पर काम करने आये बूढ़े रसोइये के बगल में एक और भी कोई खड़ा है।

किसी को कुछ कहना न पड़ा। एक नजर डालते ही अपर्णा को सारी बात का पता चल गया। आज गृहस्वामी खुद गये थे बाजार। किसी से कोई प्रत्याशा न कर। यह जो आदमी खड़ा है यह भी रसोइया ही होगा, बण्डी के नीचे से जनेऊ झाँक

रहा है। बूढ़े महाराज की सहायता करने आया है। अवश्य ही बूढ़ा ही लाया है उसे, नहीं तो वृन्दा को पता रहता।

वरेन्द्र सोम मुड़े। परिपूर्ण दृष्टि से अपर्णा को देखा। अपर्णा ने उस दृष्टि का प्रत्युत्तर देना आवश्यक न समझा। तीव्र दृष्टि से वृन्दा के पीछे खड़े निरंजन को ढूंढ निकाला। बोलीं, 'मैं तुम्हीं को तलाश रही थी निरंजन। आज से तुम यहीं रहो। कल छुट्टी ले लो। बहुत काम है।'

कृतार्थ निरंजन विनय से झुक गया।

'और सुनो,' अपर्णा ने सारी त्रुटि को एक साथ सुधारने का प्रयास करते हुए कहा, 'बेटों-बहुओं, बेटी-दामाद सबसे मेरी तरफ से जाकर कह देना कि कल वे सब आयें, दिन भर-रात भर रहें, खाना खायें। देखना, भूल मत जाना।'

वृन्दा बहुत खुश हुई। बाबूजी सामने खड़े हैं इसलिए खुशी प्रकट न कर पा रही थी। निरंजन एक बार फिर विनयपूर्वक झुका।

बिना एक भी शब्द बोले वरेन्द्र सोम चलने लगे। अगर यह लोग, वृन्दा वगैरह न भी होते तो भी अपर्णा उनकी तरफ न देखतीं। चले जाने के बाद भी नहीं। यह वही आदमी है न जो अपर्णा को सूचना दिये बिना ही अपने बहन-भाइयों को बुलावा दे आया है। वैसे वरेन्द्र ने अपने लोगों को बुलावा दिया है, अपर्णा ने अपने लोगों को। दोनों में किसी ने एक दूसरे को बताना जरूरी नहीं समझा कि किसने किसे बुलाया किसे नहीं। आज अपर्णा ने उस आदमी पर प्रकट कर दिया कि ये वृन्दा और उसके घर वालों को अपना ही मानती हैं।

यह तो ठीक है कि किसने किसे बुलाया, दूसरे को नहीं मालूम, पर ऐसा नहीं कि निमंत्रितों की सम्भाव्य संख्या पर कोई बात नहीं हुई आपस में। चार दिन पहले अपर्णा वरेन्द्र के कमरे में गई थीं। कहा था, 'केटरर आया है। उसे आज ही बताना पड़ेगा कि कितने लोगों का इन्तजाम करना है। तुमने कितने लोगों को बुलाया है?'

वरेन्द्र से न पूछना अस्वाभाविक होगा इतना ज्ञान अपर्णा में था। वरेन्द्र ही इस प्रश्न के लिए तैयार नहीं थे। कुछ देर सोचते रहे वे। फिर पलट कर प्रश्न किया, 'बरात के साथ कितने लोग आयेंगे?'

अपर्णा ने चिढ़ कर जवाब दिया था, 'मुझे पता है बराती कितने आयेंगे। तुम अपनी बताओ।' मतलब यह कि उन्होंने वरेन्द्र सोम को स्पष्ट रूप से बता दिया कि उनसे बात करने की उनकी रुचि नहीं। जितना कम बोलना पड़े, जितना कम सम्पर्क रखना पड़े उतना ही अच्छा।

फिर सोचने लगे वरेन्द्र सोम। एक संख्या भी बतायी अपने निमंत्रितों की। संख्या सुन कर अपर्णा की भौंहों पर तनाव स्पष्ट हुआ। उन्होंने सोचा नहीं था कि वरेन्द्र इतने लोगों को बुला लेंगे। शहर के सबसे कीमती और सबसे ख्यातिशील को खाना बनाने-परोसने का काम सौंपा गया है। समीरण बाबू ने उनकी रसा की है इस

मामले में। इस केटरर का पता उन्हीं ने बताया। अपर्णा को भी एक बहुत बड़े झंझट से छुटकारा मिला। ऐसे कार्यों में लोग खर्च का ख्याल कर निमंत्रितों की संख्या पर नियंत्रण रखते हैं। इधर वरेन्द्र सोम ने तो सारी दुनिया को बुला लिया लगता है। फिर भी अपर्णा ने कोई बहस नहीं छेड़ी। संख्या सुन कर बिना एक भी शब्द बोले चुपचाप चली गईं। जा कर केटरर से जो भी कहना था कह दिया।

वरेन्द्र सोम के चौके से चले जाने के बाद वृन्दा की जबान चली, 'देखिये माँ, बाबूजी कितना सामान लाये हैं। इतना सारा होगा भी क्या? कुछ पता न चला कब बाजार गये। इधर मैं फिक्र के मारे मर रही थी कि क्या होगा, कैसे होगा। अब आप बताइये, इसमें से क्या-क्या बनवाऊँ?'

अपर्णा चिढ़ी तो थीं ही। बिफर कर बोलीं, 'जो मर्जी हो बनवा; जो मर्जी हो फेंक दे।'

लौट पड़ीं वे। अभी फौरन माथे पर, कानों पर ठण्डे पानी का लेप लगाना पड़ेगा। वृन्दा के सामने यह संभव नहीं क्योंकि वह मुँहजली जानती है उनके इस भेद को। कब और क्यों उनके माथे और कानों में जलन होती है, नसें चरकने लगती हैं। बड़े बहादुर समझने लगे हैं अपने को जो जाकर बाजार से सामान ले आये। कभी किया भी है यह सब कि आज ही करेंगे? बाजार से सामान ले आये तो कौन से फाक्ते मार लिये? और कुछ करना नहीं पड़ेगा? इसी से मेहमाननवाजी हो जायेगी पूरी!

अपर्णा व्यर्थ ही नाराज नहीं हो रही थीं। वाजिब कारण थे इसके। सुपी के ब्याह के उपलक्ष में अब तक जितना खर्च हुआ है उसमें जेवर के पैसों के अलावा वरेन्द्र सोम ने एक कौड़ी भी नहीं निकाली है। सारे पैसे अपर्णा खर्च कर रही हैं। वैसे यह कोई बात नहीं। वे इस खर्च के लिये तैयार थीं। जेवर के लिये भी। मज़े की बात यह है कि महोदय से जब खर्च के विषय में पूछा गया था तब तो खूब लम्बी-चौड़ी बातें सुना गये थे। इधर शादी सिर पर है, पर खर्च करने के नाम पर मुँह पर ताला डाले बैठे हैं। बीस-पचीस रुपयों की सब्जी-भाजी ला कर तारीफ बटोरने का इरादा है!

तीन

इस शादी को ले कर दोनों में और भी काफी बातें हुई थीं। अपर्णा और सुपी दोनों ही इस बात को खूब अच्छी तरह से जानती हैं कि वरेन्द्र सोम इस शादी से राजी नहीं। वे क्यों राजी नहीं, यह भी मालूम है उन्हें। वरेन्द्र सुपी की शादी किसी और से करना चाहते थे। वे चाहते थे अपने अनुगत अनुचर विकास सिनहा को दामाद बनाना। अभी भी विकास वरेन्द्र सोम के अधीन ही काम करता है। उन्हीं के संग दौरे पर जाता है, दफ्तर की फाइलें ढो कर घर पर भी काम करने आता है। दो डिपार्टमेण्टल परीक्षायें पास कर वह क्लर्क से जूनियर आफिसर हो गया है। तब से वरेन्द्र उससे बहुत सन्तुष्ट हैं। उनका अपना ख्याल है कि विकास जीवन में और बहुत उन्नति करेगा, आगे बढ़ेगा। यह बात उन्होंने सुपी से एक बार कहा भी था।

विकास जूनियर आफिसर होने पर भी जब अक्सर घर आने लगा और उसके प्रति जब वरेन्द्र का आचरण पहले से अधिक सौहार्दपूर्ण होने लगा तभी अपर्णा का माथा ठनका था।

शुरू में जब विकास आता तब उस पर दृष्टि ही नहीं जाती थी। यह बात भी बाद में सुनी थी कि वह क्लर्क है। शक्ल-सूरत में तो वह अपर्णा को बैरा लगा था। तब विकास की आयु बहुत कम थी। नौकरी करने लायक बड़ा ही नहीं हुआ था। सुपी तब फ्राक पहनती थी। पढ़ती थी सातवीं जमात में। अपर्णा को यह बहुत दिन पहले ही पता चल गया था कि विकास देखने में जितना सीधा और बुद्धूनुमा लगता है, असलियत में वैसा है नहीं। न वह सीधा है, न बुद्धू। है काफी घण्ट। सुपी अक्सर उसकी शिकायत करती। कहती जब माँ या पापा सामने नहीं होते तब वह उससे छेड़खानी करता है। एक दिन सुपी ने उसे बुद्धूराम कहा था, जिसके कारण उसने सुपी को आधे घण्टे तक हाथ पकड़ कर बिठा रखा था। न हाथ छोड़ा, न उठने दिया। उस दिन, उस समय अपर्णा घर पर नहीं थी। सुपी के पिता भी विकास पर घर की रख-वाली का भार सौंप कर बाहर गये थे कुछ देर के लिये। बुद्धूराम कहने का बदला विकास ने मौका पा उसी दिन इस तरह लिया था। विकास का क्रुद्ध होना अन्याय नहीं, क्योंकि उन दिनों सुपी बड़ी ही शरीर थी। हर वक्त ही कोई न कोई हुल्लड़-हुड़दंग मचाये रहती। विकास को नीचा दिखाने का कोई मौका चूकने न देती। जब तब चिढ़ाती, बुद्धू-सुद्धू न जाने क्या-क्या कहती। कह कर भाग खड़ी होती। अपर्णा अगर देख लेतीं या सुन पातीं तो सुपी को डाँटतीं, सजा देतीं। एक दिन उन्होंने सुना, सुपी कुछ दूर खड़ी हो विकास से कह रही है, 'ए जी, जैसे पापा की फाइलें ढोते हो वैसे मेरा बस्ता स्कूल पहुँचाने ले आने का काम कर दिया करोगे? राजी हो तो मैं [illegible] माँ से कह कर कुछ पैसे दिलवा दूँगी।'

उस दिन अपर्णा ने सुपी को बड़ी कड़ी सजा दी थी। सज़ा विकास के अपमान की बात सोच कर नहीं, सुपी उद्दण्ड होती जा रही है यह सोच कर दी थी।

सुपी जब दसवीं या ग्यारहवीं में पढ़ती थी तब एक दिन विकास पर बहुत नाराज हुई थीं अपर्णा। उन दिनों सुपी एक नृत्य-संस्था से युक्त थी। काफी अच्छा नाचती थी। यहाँ-वहाँ जलसों में उसकी तारीफ भी होने लगी थी। इस तारीफ से सुपी फूली न समाती। अपने को नृत्य-जगत् की एक विशेष हस्ती मानने लगी थी। उन दिनों बेटी की चाल-ढाल देख अपर्णा शंकित हो रही थीं। जब कभी कहीं से नृत्य-प्रदर्शन का निमंत्रण आता सुपी उल्लसित होती। मना करने से झगड़ने पर उतारू होती। मुहल्ले के आवारा छोकरे उससे परिचित होने को बेताब रहते। न अंकुश से उसे रोक पातीं, न प्यार से। ज्यादा बोलतीं तो बेटी पलट कर पूछती, 'लड़कों से बात करने से होता क्या है ? इतनी दकियानूसी क्यों हो तुम ?'

ऐसी अति-उग्र आधुनिका सुपी ही एक दिन आकर माँ से बोली, 'देखो माँ, यह जो पापा का सिन्हा है न, उससे कह दो जरा सँभल कर चले। उसका साहस दिन पर दिन बढ़ता ही जा रहा है। अगर वह सीधे से नहीं मानेगा तो साफ ही कहे दे रही हूँ कि पापा से उसकी हरकतों की बात बता दूँगी। अगर पापा ने कुछ इन्तजाम किया तो ठीक है, नहीं तो मैं उसे किसी दिन एकाध हाथ जड़ दूँगी।'

सुपर्णा के क्रोध का कारण अपर्णा को पता चला। सुपी और उसकी दो सहेलियाँ नाच के स्कूल से लौट रही थीं। रास्ते में विकास मिल गया। सुपी का ख्याल है कि मिलना इत्तफ़ाक से नहीं हुआ। वह जान-बूझकर वहाँ खड़ा था। उसे देख कर इशारे से बुलाया। सहेलियों को खड़ी कर वह आगे बढ़ी। सोचा था विकास ने किसी जरूरी काम से बुलाया है। पास जाते ही बोला, 'एक दिन अपना नाच दिखाओगी मुझे ?' इस पर गुस्सा नहीं आया था सुपी को। नाच तो देखने की ही चीज है, वह भी देखेगा। उसने कहा था, 'ठीक है, अब जब कोई फंक्शन होगा तो बताऊँगी। इसके जवाब में उस छोकरे ने जानती हो माँ, क्या कहा ? कहा, फंक्शन-वंक्शन नहीं। टिकट खरीद कर ही अगर देखना है तो उससे भी बड़े कलाकारों का नाच देखा जा सकता है। घर पर एकान्त में उसे नाच कर दिखाना होगा। जब माँ-पापा घर पर न रहें।' उसका प्रस्ताव सुन सुपी ने उससे कहा है कि वैसा नाच देखने के लिये तपस्या करना पड़ेगा। सुन कर विकास ने पूछा, 'कैसी तपस्या करवाना चाहती हो ?' उसके इस प्रश्न से चिढ़ कर सुपी ने उसे बुद्धू कहा। इस पर उसने सरे आम सुपी का अपमान किया। आगे बढ़, सहेलियों से कहा, 'तुम दोनों चली जाओ, सुपी मेरे साथ जायेगी।' विस्मित हो सहेलियाँ जब चलने लगीं तो घबरा कर सुपी उनके पीछे दौड़ पड़ी। पर विकास ने उसकी कलाई पकड़ ली, उनके साथ जाने न दिया। उसी तरह घसीटता हुआ सौ दो सौ गज ले आया। सुपी ने उससे हाथ छोड़ने को बहुतेरा कहा, माँ का नाम ले डराया भी। पर वह नहीं माना। हँसता रहा। राह चलते कितने ही लोगों ने देखा, पर उसे जरा भी फिक्र नहीं। सुपी ने जब भी

कुछ कहा उसने हंस कर कहा, 'नाराज होती रहो, हाथ नहीं छोड़ूंगा। अगर हंस कर कहोगी तो छोड़ दूंगा।'

सुन कर अपर्णा को बहुत गुस्सा आया था। आने की बात भी थी। सुपर्णा तो आयु के उस सन्धि-स्थल से गुजर रही थी जब माँओं को बहुत सावधान रहना पड़ता है। विकास इतना साहस करेगा, इस बात की उन्होंने कभी कल्पना भी न की थी। उन्होंने उसी दिन निश्चय किया था कि आगे जिस दिन विकास घर पर आयेगा उसी दिन उसे वरेन्द्र सोम के सामने ही ऐसी फटकार बतायेंगी कि छट्ठी का दूध याद आ जायेगा उसे।

अफसोस है वह मौका ही कभी न आया। इस घटना के दो-चार दिन बाद सुपी बीमार पड़ गई। उन दिनों उसके पिता दौरे पर थे। समीरनजी भी किसी कॉनफरेंस में भाग लेने कलकत्ते से बाहर गये हुये थे। उन दिनों विकास ने बड़ी सहायता की थी। बिना बुलाये आया। डाक्टर बुलाना, दवा लाना, रिपोर्ट लाना, जो कुछ करना था बड़ी एकाग्रता से करता रहा। इतनी तन्मयता से करता रहा जैसे कोई अनुगत सेवक हो। यहां तक कि रात को रहने को भी तैयार था। अपर्णा ने उसकी जरूरत न समझी थी। जो भी हो, उस बार अपर्णा ने उसे माफ़ कर दिया था।

विकास सिन्हा के जूनियर आफिसर बन जाने के बाद से उसमें बड़े विकट परिवर्तन दिखाई पड़े। यहां तक तो खैर ठीक ही था कि उसके पहनावे में, बात-चीत के तौर-तरीकों में परिवर्तन आते। पर उत्कण्ठा की बात यह नहीं, कुछ और थी। अपर्णा को लगा कि दीन-दरिद्र भिखारी का बेटा रातों रात किसी नवाब-बादशाह का बेटा बन गया है। घर के मालिक ने उसकी जो खातिर करना शुरू किया कि रुकना ही भूल गये। कम से कम माँ बेटी को ऐसा ही लगा। वैसे अपर्णा के आगे वह पहले जैसा विनय का अवतार ही बना रहता।

छुट्टी के दिनों में विकास का इस घर पर आना अवश्य कर्तव्य-सा हो गया है। मजेदार बात यह है कि वह जब भी आया होता है सुपी के पिता बार-बार बेटी को कमरे में बुलाते हैं। छोटी-मोटी फर्मायशें करते रहते हैं। पिता की इस नई आदत से सुपी कभी हंसती, कभी कुढ़ती। विकास के लिये चाय-काफी मंगवाते, और तो और, उसके पढ़ाई-लिखाई का हाल भी विकास के आने पर उसके सामने ही पूछते। अगर कुछ करने या कहने को न रहता तो अपनी किताब, कापी या किसी खोई हुई वस्तु को तलाश देने की मांग करते। उसके जूनियर आफिसर बन जाने की खुशखबरी उन्होंने सुपी को हंस-हंस कर उसके सामने ही सुनायी थी। इतने उल्लास से बोले थे, जैसे सुपी के लिये भी यह बड़ी ही खुशी की बात है। इस उल्लास में उन्होंने एक दिन विकास को घर पर खाने को बुलाया। यह तो कहना न पड़ेगा कि घर की मालकिन की न तो वरेन्द्र सोम में रुचि है न उनके मेहमान में, अतः गृहिणी का दायित्व सुपी को ही पालन करना पड़ा। मतलब यह है कि खाने के वक्त उसी को

पिता और विकास का साथ देना पड़ा। मुद्दे की बात यह है कि विकास इस घर में आता-जाता तो है बरसों से, पर नरेन्द्र सोम के आचरण में परिवर्तन हुआ है उसके जूनियर आफिसर बन जाने के बाद से ही।

इसका कारण समझ पाने योग्य बुद्धि माँ-बेटी दोनों में है। सुपी हँसती। अपर्णा बौखलातीं।

विकास के जूनियर आफिसर हो जाने के बाद सुपी ने फिर कभी माँ से उसकी शिकायत नहीं की थी। उसकी आँखें चमकती रहतीं जब वह विकास का मजाक बनाती। अपर्णा के लिये यही सबसे चिन्ता की बात हो चली थी। वैसे चिन्ता का यही एक कारण न था। सुपी ने और भी कई काम कर डाले जिससे अपर्णा चिन्तित थीं। उन सब अजीबोगरीब काण्डों से विकास का कोई लेना देना न था। मगर वे बातें ऐसी ही थीं, कि अपर्णा की नींद हराम हो गई थी, खान-पान जहर हो गया था। बेटी पर उनका विश्वास डोल गया था। अब तो ऐसा हो गया है कि बेटी की आँखों को चमकते देखते ही वे दिल थाम लेती हैं। बाज वक्त उन्हें शक होता है कि उनकी आँख बचा कर सुपी विकास को बढ़ावा दे रही है।

आफिसर हो जाने के थोड़े दिन बाद विकास ने एक दिन एकान्त पा सुपी को घेरा था। इसके पहले, कई बार कह चुका था कि उसे कुछ कहना है। मौका पाते ही कहा था, 'तुम्हारे परिवार के कारण मेरी इतनी बड़ी उन्नति हुई, और तुम्हें जरा भी खुशी नहीं ?

भोलेपन से सुपी बोली, 'हमारे परिवार, मतलब पापा और मेरे लिये ?'

'नहीं। तुम्हारे परिवार, मतलब तुम्हारे और तुम्हारी माँ से है।'

'क्या मतलब ?'

'मतलब यह है कि तुम दोनों मुझे आदमी का दर्जा देना ही गवारा नहीं समझती थीं। इसीलिये मैंने जिद पकड़ कर इण्टर और बी० ए० किया। विभागीय परीक्षाओं में बैठा। सुपी है महादुष्ट। यह सुन उसने अजीब नाटक रचा। आँखें फैला मुँह खोल विकास को देखती रही। उसे इस तरह देखती देख विकास ने पूछा, 'क्या हो गया ! ऐसे क्या देख रही हो ?'

'नहीं, देख नहीं रही हूँ। आदमी का दर्जा देने का प्रयास कर रही हूँ।'

'सफलता मिल रही है ?'

'कैसे मिले ? जितना ढूंढ़ती हूँ आदमी उतना ही सिंह दिखाई पड़ता है। पिंजड़े में बन्द सिंह*।'

बाद में सुपी ने हँस-हँस कर माँ को यह बात जब बतायी अपर्णा गम्भीर हो गईं। उन्हें हँसी नहीं आई। क्रोध से जल-भुन गईं। सबसे पहले जो सन्देह उनके मन में झाँकने लगा, वह था घर में सुपी के साथ उसे एकान्त मिला कैसे ? अगर वह

---

* सिन्हा नाम सिंह का प्रतिरूप है। यह उसी पर व्यंग्य है।

कहता भी है कि उसे कुछ कहना है तो सुपी उसे कहने का मौका क्यों देती है? आफिसर हो गया है तो कौन सा सुर्खाब हो गया है? अपर्णा अगर चाहें तो अभी भी उसे दो-चार खरी-खोटी सुना सकती हैं। पर अपनी बेटी ही अगर रंगीलेपन पर उतारू हो तो पराये लड़के को कुछ कहने का क्या तुक?

हँसी रोक सुपी ने माँ से बड़े भोलेपन से पूछा था, 'अच्छा माँ, यह सिंह आफिसर हो अपने को क्या सोचने लगा है? चाहता क्या है यह? आजकल पापा उसकी इतनी खातिरदारी क्यों करने लगे हैं? जानती हो तुम कुछ?'

कठोर हो अपर्णा ने जवाब दिया था, 'कहना यही चाहती है न कि तेरी समझ में कुछ नहीं आता?'

चोरी पकड़ जाते ही सुपी खिसक गई थी। फिर एक दिन सुपी भागी-भागी माँ के पास आई, 'माँ, ओ माँ, सिंहजी आये हैं। वृन्दा कह रही है कि पापा घर पर नहीं हैं, सुन मुझे बुला रहे हैं। क्या बात है माँ? पापा के आफिस के कागजात मुझे देने-समझाने का मन है क्या उनका?'

अपर्णा गम्भीर हुईं। बेटी के शरारती की आड़ से झाँकती मुस्कराहट उनसे छिपी न रही। बोलीं, 'तुझे कालेज नहीं जाना है?'

'है माँ।'

'जाकर सुन आ। घण्टे भर गप मारने में मत लगा देना। याद रहे कालेज जाना है।'

'अरे वाह! तुमने मुझे उस शेर-बबर से गप मारते कब देखा है?' कहते-कहते सुपी हँस कर लोट गई। 'क्या बताऊँ माँ, तुम्हें, मारे डर के मैंने तुमसे कहा नहीं था, आजकल सिंहजी से मेरी ट्राम में उतरते-चढ़ते मुठभेड़ होती रहती है। अभी पिछले सोमवार को कालेज से बाहर आते ही देखा कि वे कालेज के फाटक के बाहर खड़े हैं। लगता है आफिस से डुबकी लगाई थी। मैंने जब पूछा तब बोले कि आफिस के काम से उधर आये थे, और इत्तेफाकन जब मुलाकात हो ही गई तब टैक्सी से घर छोड़ने का आफर दिया।'

'तूने क्या किया?'

'मैं क्या करती?' दुधमुँही बच्ची सी सुपी बोली, 'करने का मौका ही कहाँ दिया? सामने से जाती टैक्सी रोक लिया था न!'

अपर्णा को उस दिन सचमुच बड़ा क्रोध आया था। बेटी पर भी, विकास पर भी। उस वक्त सुपी ने माँ के गले से झूलते हुए कहा था, 'तुम चली जाओ न माँ, मेरे बदले! प्लीज माँ! जाकर कह दो मुझे कालेज जाना है। खाने बैठी हूँ।'

इतने क्रोध में भी अपर्णा मुस्करा पड़ी थीं। मुस्कराई थीं बेटी की बात सुन। 'मेरे बदले तुम जाओ!' क्या कहने बेटी के! यह भी कोई बात हुई। पर मामला हँस कर टालने वाला नहीं था, इसलिये गम्भीर होकर बोलीं, 'तूने मुझे है? तू सिखायेगी और मैं उसी सिखाई से झूठ बोलूँगी।'

कारण जो भी रहा हो, उस दिन सुपी विकास के सामने माँ को ही भेजना चाह रही थी। बोली, 'तुम तो माँ लकीर की फकीर हो। सच-झूठ की यह बारीकी कैसे ठीक है ? तुम्हें झूठ बोलना नहीं पड़ेगा। चली मैं खाने।'

अपर्णा को ही नीचे, विकास की बात सुनने जाना पड़ा था।

बेटी के बदले माँ को सामने देख विकास की समझ में न आया क्या करे। झेंप मिटाने के लिये चरण छूने को बढ़ा। अपर्णा इससे भी न पसीजीं—तन कर खड़ी रहीं। बोलीं, 'ठीक है। बैठो।'

उन्होंने विकास से झूठ नहीं कहा। कहा, 'सुपी कालेज की तैयारी कर रही है। उससे क्या काम है तुम्हें ?'

विकास का विडम्बना-जटित मुख देख उन्हें हँसी आ सकती थी। दया आ सकती थी। पर नहीं। उन्हें न हँसी आई, न दया। स्वर भी ममत्व से पगा नहीं, धीर मगर कठोर ही रहा। मात खाये शेर-सा मिमिया कर विकास कहने लगा, 'काम तो जी, कोई खास नहीं। इधर से जा रहा था, सोचा'''। मगर, ये-ये, मतलब, सुना था उसका क्लास तो ग्यारह बजे से है।'

'किसने कहा है ?'

'जी'''जी वो, आपकी बेटी ने ही बताया था।'

उसकी आँखों में कठोरता से देखती रहीं अपर्णा। बोलीं, 'तुम्हें आफिस जाना है ?'

'जी, आज ही दौरे से आया हूँ न। आज आफ है।'

अपर्णा ने एक भी शब्द न कहा। विचारक की निर्मम, निष्पलक दृष्टि से बेधती रहीं उसे। विकास जान गया कि यहाँ रुकना खतरे से खाली नहीं। अतः अपनी जान छुड़ा कर चलता बना।

अपर्णा का क्रोध और भड़का जब वे ऊपर जाने को मुड़ीं। देखा, बेटी किवाड़ की आड़ में खड़ी है। उनके आते ही मारे हँसी के बेहाल होने लगी वह।

'हँसती क्यों है ?'

बड़ी कठिनाई से हँसी रोक वह बोली, 'हाय माँ, यह शक्ल-सूरत देख तुम बिना हँसे कैसे रह पा रही हो ?'

बेटी पर अत्यन्त कठोर दृष्टि डाल अपर्णा बोलीं, 'बेवकूफ बना रही है मुझे। कालेज का बहाना बना मुझे यहाँ भेज अब तू शक्ल-सूरत देखने आई है ? वाह !'

सुपी को कोई माफिक जवाब न सूझा। बोली, 'तुम्हें भी माँ समीरण चाचा की तरह कालेज में अध्यापक होना चाहिये था।' कह कर वह भाग गई।

अगर ऐन मौके पर यह नाम सामने न आता तो शायद अपर्णा बेटी की खबर लेतीं। उनको सुपी की यह चपलता बिलकुल अच्छी नहीं लगती। अपनी बेटी है तो क्या, इस बात को वे कैसे नकार जायें कि सुपी का बढ़ावा पा कर ही लड़के आगे बढ़ते हैं। छोटी-छोटी अरुचिकर घटनायें तो उसके स्कूल छोड़ने के बाद से ही घटती

चली आ रही है। इन सब बातों के लिये वे एक ही व्यक्ति को जिम्मेवार ठहराती हैं। बेटी के बाप को। बाप की रगों में बहते खून को।

जो भी हो, उस दिन की घटना से भी विकास का धीरज न टूटा। वह डटा रहा। अपने बास, यानी इस परिवार के मुखिया के पास उसका आना-जाना कम नहीं हुआ, बल्कि कुछ बढ़ गया। सुपी के बी० ए० पास हो जाने की बात मालूम होते ही वह इतने फूल और इतनी मिठाई ले बधाई देने आया कि वरेन्द्र सोम तक विव्रत हुये। उसका ऐसा करना किस हद तक अवांछित और दृष्टि-कटु है यह बात अपर्णा ने उन दोनों को अपनी बर्फीली दृष्टि से साफ ही समझा दिया था।

फिर अपर्णा विकास की ओर मुड़ीं। यह सारा नाटक सुपी के कमरे में हुआ था। मिठाई और फूल ले विकास सुपी के कमरे में गया ही था। उसके पीछे वरेन्द्र सोम आये थे। अन्त में अपर्णा। उन्होंने पूछा, 'इतना सब किसलिये लाये हो ?'

हकलाते हुये विकास ने कहा था, 'जी, यह जो सुपी इतनी अच्छी तरह पास हुई हैं, इसलिये····'

'अच्छी तरह ? सुपी अच्छी तरह तो पास नहीं हुई है विकास—बस, फेल नहीं हुई, यही कहा जा सकता है।'

थूक निगलते, हकलाते हुये इसके जवाब में विकास ने जो कहा उसे सुन अपर्णा को यही न समझ आया कि उन्हें हँसना चाहिये या उसकी मूढ़ता पर सिर पीटना। कहा, 'जी, बात ऐसी है, वो-वो कह रही थीं कि पास नहीं होगी, फिर भी हो गई, इसलिये अच्छी तरह पास हुई है कह रहा हूँ।'

अपर्णा को खटका लगा। लगा कि यह विकास जितना सीधा लगता है, वास्तव में उतना सीधा है नहीं। वे उसे देखती रहीं। वरेन्द्र सोम सावधान की मुद्रा बनाये खड़े रहे। सुपी का दिल काँप रहा था। न मालूम क्या हो ! न मालूम आज माँ क्या कहें ! ऐसा हो सकता है कि उपहार के लिये न हो, पापा पर अपना क्रोध उतारने के लिये ही माँ आज इसे कुछ ऊँचा-नीचा कह दें।

लेकिन नहीं। अपर्णा ने ऐसा नहीं किया। अपनी मर्यादा के मामले को खूब जानती हैं वे। उन्होंने सिर्फ इतना ही कहा कि साधारण स्थिति से उन्नति किये हो-यह बड़ी खुशी की बात है। और आगे बढ़ो, हमें और खुशी होगी। पर यह सब करने का प्रयास मत करो। इसमें तुम्हारा कोई कल्याण नहीं।

कह कर, किसी पर ध्यान न दे, चली गई थीं।

इसके कुछ ही दिन बाद सुपी एक दिन उफनती-बिफरती माँ के सामने जा कर बोली, 'माँ, मेरी शादी का सारा इन्तजाम हो गया है। उठो, शंख बजाओ, आरती सजाओ।'

अपर्णा ठगी-सी रह गईं। यह तो साफ ही था कि बेटी गुस्से

सब कह रही है, पर उनके विमूढ़ होने का कारण था उसकी निर्लज्जता। यह आजकल की लड़कियां कितनी बेशरम हो गई हैं कि उन्हें पता ही नहीं, क्या कहना है क्या नहीं।

उन्हें इस तरह देखते हुये देख बेटी और भी चिढ़ी। बोली, 'इस तरह देख क्या रही हो ? जानती नहीं हो, सिंह से शादी कर सिंहनी होने चली हूँ मैं ?'

सुपी की बात सुन, उसका हाल देख अपर्णा को हंसी आने लगी। हंसना उचित न होगा, सोच उन्होंने मामला संभालने के प्रयास में कहा, 'ठीक से बता तो सही कि बात क्या है ? यह तुझसे किसने कहा ? विकास ने ?'

अपर्णा की बात पर सुपी और भी बिफरी थी। 'वह कहेगा मुझसे ? इतना साहस है उसमें ? कहता तो धता न बता देती ? उसने पापा से कहलवाया है। पापा ने मुझसे कहा। पापा ने मुझे बुलाया था। गई तो कहने लगे कि सिंह जैसा अव्वल आदमी दिया ले कर ढूंढ़ने पर भी नहीं मिलेगा। बहुत ही साधारण स्थिति से उबर कर इतना आगे आया है। वह और भी बहुत आगे बढ़ेगा, उन्नति करेगा। इसने जो भी किया है वह मेरे लिये। मुझे प्राप्त करने के लिये। अतः अगर मैं एक बार हरी झण्डी दिखाऊं तो पापा फटाफट सारा इन्तजाम कर डालेंगे।""तुम्हें कुछ भी खर्च करना नहीं पड़ेगा। सस्ते ही मुक्त हो सकोगी।'

सुनते-सुनते अपर्णा के मुख की रेखायें कठोर होती गईं। दृष्टि बर्फ से भी शीतल और पैनी हुई। उन्हें लगा बेटी की शादी के मामले में पिता का यह हस्तक्षेप निर्लज्ज दुःसाहसिकता के अलावा कुछ भी नहीं। बेटी से बोलीं, 'तू अपने काम से जा। मैं देखती हूँ।'

कन्या के इस विराग का कारण जानती हैं अपर्णा। इधर कुछ दिनों से एक लड़के के साथ उसका मिलना-जुलना बहुत बढ़ गया है। सुपी माँ के मन की शंका को भांप कर मौके-बेमौके उसकी तारीफ करती रहती है। कहा एक दिन, 'तुम तो माँ, मुझे अभी निरी बच्ची ही समझती हो। घर पर वह जब आयेगा, देखना।""आज के दिन ऐसा तेज-तर्रार आदमी दिखाई ही नहीं पड़ता। इतनी सी उम्र पर कितना नाम, कितनी ख्याति ! व्याख्यान जब देता है न, रोंगटे खड़े हो जाते हैं। उसके दिये व्याख्यान का विवरण अक्सर अखबारों में निकलता है। देखा नहीं तुमने कभी ? रंजन। रंजन बोस। तुमने कभी नहीं देखा ?'

परेशानी छिपाती अपर्णा बोली थीं, 'मानती हूँ। पर यह तो बता कि तुमसे उसकी जान पहचान कैसे हो गई ?'

उच्छ्वसित हो सुपी ने जो बताया वह यह कि देश के लिये सर्वदा कार्यरत होते हुये भी रंजन बोस में कला-बोध की कमी नहीं। हो भी क्यों ? उसमें विद्वत्ता की कमी तो नहीं। एम० ए० पास है। वह भी किसी ऐरे-गैरे कालेज में पढ़ने वाला, नकल से पास नहीं। किसी नामी कालेज में जब बी० ए० में पढ़ता था, तभी राजनीति की चपेट में आ पढ़ना छोड़ दिया था। तब माता-पिता ने कितने आवेदन-निवेदन

किये। वह न माना। नहीं ही माना। एक बार जब लम्बे अर्से के लिये जेल में था तब पिता ने मिलने आ कर बड़े खेद से कहा था कि क्या बताऊँ तुमसे, क्या किया तूने? बड़ी आशा थी कि तू कम से कम पढ़ाई तो पूरी करेगा। वह भी नहीं किया तूने!

इस पर बेटे ने आश्वासन दिया कि दुःखी मत हो। मैं आपकी इच्छा पूरी कर देता हूँ। बस, फिर क्या था! एक साल बाद आनर्स के साथ बी० ए० किया, फिर एम० ए०। बाप से जा कर कहा, 'अब तो खुश हैं न? अब क्या कहेंगे आप? काम्पीटीशन में बैठने? नौकरी करने? यह सब न होगा मुझसे। मुझे मेरी राह पर चलने दीजिये।'

सुपर्णा से परिचय हुआ था महाजाति सदन में। उस दिन वहाँ उसके नृत्य का प्रोग्राम था। रवीन्द्रनाथ की 'चण्डालिका' थी उस दिन। चण्डालिका के रूप में सुपी का नृत्य देख चण्ड-रूपी रंजन का कठोर मन मोम-सा पिघल गया था। उस दिन सुपी का काम हुआ भी बहुत अच्छा था। हर देखने वाले ने तारीफ की थी। रंजन ने आगे आ कर परिचय किया। प्रशंसा की। उस दिन से सुपी के साथ उसका परिचय जितना हो रहा है, उसके चरित्र के पन्ने उतने खुल रहे हैं। और सुपी? वह तो जितना देख रही है अवाक् होती जा रही है।

माँ से इस बातचीत के बाद सुपी ने देर न की थी। माँ से मिलाने रंजन को घर लाई थी। यह कहना ठीक न होगा कि उससे बात कर अपर्णा प्रभावित नहीं हुई थी। उसके बात करने के ढंग से वह बड़ा ही लापरवाह किस्म का लगा, लगा कि उसके लिये घर-परिवार, समाज-संस्कार कुछ भी अहमियत नहीं रखते। फिर भी उसमें कुछ है जिससे उस पर ममता आती है। उसे करीब बैठा बात करने को इच्छा होती है। पहले ही दिन उसने अपर्णा को 'माँ' कह कर पुकारा। कहा, 'देश की हर माँ की दृष्टि में मैं निकम्मा हूँ, आवारा हूँ। आपकी बेटी मेरी आवारगी और निकम्मेपन के बीच से मोती खोज निकालने के फेर में है। आप अभी से सावधान हो जायँ तो अच्छा हो।'

अपर्णा स्वभाव से गम्भीर और स्वल्प-वाक् हैं। इस तरह की बातें सुनने का अभ्यास नहीं उन्हें। पहले उन्हें विस्मय हुआ, फिर कुछ आनन्द भी आया। सुन्दर है रंजन। बड़ी चमकीली हैं उसकी आँखें। दृष्टि स्वच्छ है। केश घुँघराले [illegible] मुस्कराहट थिरकती रहती है। अपर्णा ने पूछा, 'देश की माँओं के [illegible] कारण क्या है रंजन?'

हँस कर रंजन बोस ने जवाब दिया था, 'बात यह है [illegible] सिर से पाँव तक सिर्फ माँ हैं। मैं जो भी कुछ करता हूँ [illegible] ही नाकारा है। जब तक मैं किसी जगह [illegible] न खुशी होगी न सन्तोष। गलती मेरी ही है। [illegible]

लम्बी-चौड़ी बातें की हैं कि अब अगर मैं मंत्री से नीचे कुछ बनूं, तो लोग मेरा बड़ा मखौल उड़ायेंगे।'

आदमी अगर बात करने का तरीका जानता हो, तो कोई भी बात वह इस तरह कह सकता है कि वह मुद्दत तक याद रहे।

रंजन की बात सुन अपर्णा हँस कर बोलीं, 'तो फिर तुमने मंत्री बनने का ही फैसला किया है?'

'फैसला नहीं किया है।' रंजन के मुख पर चंचल बालक के तत्वज्ञान देने की प्रचेष्टा की संजीदगी। उसने कहा, 'असल बात मां, यह है कि उस पद की भी लालच नहीं मुझे। चाहूँ तो बन जाना कठिन भी नहीं। यह डर भी है कि मेरे चाहने न चाहने की परवाह किये बिना ही लोग मुझे जबरदस्ती कुर्सी पर बिठा भी सकते हैं। बात यह है कि हमारे देश में मनुष्य की कितनी कमी है यह तो तभी पता चल जाता है जब किसी काम का सामना करना पड़ता है।'

घण्टे भर की बातचीत के बाद अपर्णा ने मन में यह स्वीकार कर लिया कि रंजन बोस बहुत ही बुद्धिमान और बहुत ही शार्प व्यक्ति है। खुद बातचीत कर इतनी प्रभावित हुई वे कि फिर, बेटी का इसके साथ मिलने-जुलने को लालायित होना उनकी दृष्टि में गलत नहीं लगा।

अगले दिन विश्वविद्यालय से वापस आते ही बेटी हँस कर लोट-पोट होने लगी। इतना हँसने का कारण सुन अपर्णा भी हँसने लगीं। उस दिन मुलाकात होते ही रंजन से मां के विषय में तमाम सवाल किये थे। जब उसने सुना कि मां ने अपने प्रयासों से शादी के बाद बी० ए०, एम० ए० सब पास कर डाला है तो उसे जरा भी आश्चर्य नहीं हुआ। उसने कहा है, यह तो कुछ भी नहीं। तुम्हारी मां से पांच मिनट बात करने पर ही यह स्पष्ट हो जाता है कि उनमें बहुत शक्ति है। मां को शायद खुद भी पता नहीं कि कितनी बड़ी शक्ति नष्ट हो रही है घर पर पड़े-पड़े। कितना कुछ देश को लाभ हो सकता था उनसे। उसने सुपर्णा से यह भी कहा है कि, 'मां के आगे तुम तो महज चाबी भरी गुड़िया हो।'

यह सब सुन बेटी नाराज नहीं हुई है देख अपर्णा ने सन्तोष की सांस ली। रंजन को इस तरह की बातें नहीं करना था। किसी की तारीफ करने के लिये यह जरूरी तो नहीं कि किसी और की बुराई की जाये। फिर भी अपर्णा रंजन से रुष्ट न हो सकीं।

यह सब तो बाद की बातें हैं। इसके पहले, बेटी के मन में नये सिरे से अनुराग अंकुरित होते देख परेशानी हो रही थी उन्हें। बात यह है कि इन सब मामलों में बेटी की रुचि-प्रवृत्ति पर उन्हें जरा भी विश्वास न था। स्थिति जब ऐसी डांवाडोल थी, ऐन उसी वक्त पिता ने बुला कर बेटी को अपना प्रस्ताव सुनाया। पिता का मत है कि विकास सिनहा से शादी कर लेने से सुपर्णा का जीवन धन्य हो जायेगा।

सुपर्णा को वहीं बिठा अपर्णा फौरन उठ न सकी थीं। कारण यह है कि क्रोध के आवेश में कुछ कहना या करना उन्हें जँचता नहीं। कुछ वक्त गुजर जाने के बाद कमरे से निकलीं वे। आईं उस कमरे में जिसमें फोन पर बोलने या सुनने के अलावा और किसी काम से कभी नहीं आतीं।

वरेन सोम खाट पर अधलेटे जासूसी उपन्यास पढ़ रहे थे। अवकाश काटने के लिये वरेन सोम ने तीन उपाय खोज निकाले हैं। ताश, पत्रिका या अंगरेजी जासूसी उपन्यास। पत्नी के कमरे में आते ही उनके कान खड़े हुये, पर बाहर की निर्लिप्तता बरकरार रही।

'तुमने सुपी से कुछ कहा है ?'

किताब हटी। अधलेटे से उठ बैठे। पत्नी की आँखों में देखते हुये बोले, 'किस मामले में ?'

'शादी के मामले में ?'

'ओ हाँ! यह लड़का मुझे बहुत अच्छा लगता है, इसलिये नन्हीं से उसकी राय पूछ रहा था।'

कठोर पर धीर स्वर में अपर्णा बोलीं, 'उससे कुछ कहने से पहले मुझसे क्यों नहीं पूछा ?'

'क्योंकि शादी नन्ही करेगी, तुम नहीं।'

अपर्णा की दृष्टि पति के मुख पर स्थिर हुई। 'अगर यही कारण है, तो तुम क्यों सिर खपा रहे हो ?'

वरेन सोम के मुख पर छाई निर्लिप्तता व्यंग्य में बदल गयी। तीर-सा चुभता सवाल किया उन्होंने पलट कर, 'तो फिर कौन खपायेगा ? समीरण दत्त ?'

अपर्णा का मुख लाल होने लगा। ईर्ष्या का नग्न रूप देखती रहीं कुछ देर तक। उन्हें यह बुरा नहीं लगा। वैसे उन्हें पता सभी कुछ है, सामने-सामने देखने का मौका बहुत दिनों पर मिला। बर्फ-सी सर्द आवाज में बोलीं, 'तुमसे बहस करने की रुचि नहीं मेरी। जो भी हो, तुम्हें अगर सुपा की बात ही जाननी है तो ध्यान से सुनो। उसे यह लड़का पसन्द नहीं। इससे शादी नहीं करेगी वह। उसे इस बात पर आगे कभी कुछ मत कहना।'

धैर्य टूटने लगा। वरेन सोम ने जवाब न दिया। देखते रहे। फिर उन्होंने भी बड़ी शान्ति से पूछा, 'क्यों नहीं करेगी ?'

'क्योंकि यह पसन्द नहीं।'

'किसे पसन्द नहीं ? तुम्हें या नन्ही को ?'

'मुझे भी पसन्द नहीं।'

'तुम्हारी पसन्द का वर जुटाना मेरे सामर्थ्य की सीमा के बाहर भी हो सकता है।'

अत्यन्त अवहेलना से अपर्णा बोलीं, 'तुम्हारे सामर्थ्य के भरोसे बैठे नहीं हैं हम!'

बात खतम। चली आईं अपर्णा।

उसके बाद से विकास सिनहा की हस्ती इस घर में नहीं के बराबर। आता वह अभी भी है। पर माँ-बेटी के लिये वह अब अपरिचितों की पंक्ति में है।

चार

अप्रतिहत गति से दिनों-दिन जो आगे बढ़ता आ रहा है वह है रंजन बोस। बेटी तो पहले ही घायल हो चुकी थी, माँ का मन जीतने में भी उसे ज्यादा वक्त नहीं लगा। क्या विचित्र है यह लड़का! हर मुद्दे में विद्रोह का प्रतिरूप, पर कितना हँसमुख! बेटी को परे हटा माँ पर आक्रमण, 'आइये न माँ, हमारे दल की सदस्या बन जाइये। क्या घर बैठे बेकार वक्त जाया कर रही हैं?'

उसे समझाने के ख्याल से अपर्णा कहती हैं, 'क्या करूँगी वहाँ जा कर?'

इसका जवाब रंजन के होठों पर लटक रहा था। 'करेंगी क्या? हजारों, हजारों बेटे-बेटियों की माँ बनेंगी।'

स्मित मुख से सुपर्णा एक बार माँ को देखती है एक बार रंजन को। बेटी पर आक्षेप का कटाक्ष करती अपर्णा बोलीं, 'माफ करो भई! एक की माँ बन मेरी सौ-सौ गत हो गई, तो हजार!' बाद में उन्होंने सशंक हो बेटी से ही पूछा, 'क्यों री, तूने यह सब दल-बल में नाम तो नहीं लिखा लिया?'

सुपर्णा के कुछ कह पाने के पहले ही रंजन ने तपाक से कहा, 'अरे राम! उस जैसी नाचने-गाने वाली लड़की को ले हम क्या करेंगे? हद से हद यह इतना ही काम आ सकती है कि अगर हमारे दल को पैसों की जरूरत पड़े तो नाच का प्रोग्राम कर हमारे लिये पैसे जुटा सकती है!'

रंजन की बात अपर्णा के अन्तर्मन तक बींध गई। कारण भी था। अपनी चपलमति और विचार बुद्धि की कमी के कारण सुपर्णा ने एक-दो बार बड़ी मुसीबत खड़ी की थी। अगर रोका न गया होता तो बुरी फँसती। पर उन्होंने जब देखा कि रंजन के इस मन्तव्य पर भी वह कुपित नहीं हुई, मुस्करा पड़ी, तब आश्वस्त हुईं। बोलीं, 'तो तुम्हारी राय है कि वह यही कर सकती है, और कुछ नहीं?'

'और क्या करना है उसे? अब मेरा गला पकड़ा ही गया है तो मेरे घर जायेगी। जब तक मन होगा नाच-गा कर दिल बहलायेगी, फिर रानी बिटिया-सी घर गृहस्थी करेगी।'

इतनी बात कहते उसे जरा संकोच न हुआ, जरा झेंपा भी नहीं। इतनी सहजता से उसने यह कहा कि जैसे सब कुछ बना-बनाया है। वह फँस गया है, अतः सुपर्णा को उसके घर जाना ही पड़ेगा। अपर्णा को बड़ी हँसी आई। बोलीं, 'यदि अगर ख्याल है तुम्हारा तो फिर मुझे क्यों खींचना चाह रहे हो? मैं भी तो सिर्फ घर-गृहस्थी करती हूँ, करना जानती हूँ।'

तन कर बैठा रंजन। आत्मविश्वास से भरे स्वर में बोला, '

जाने क्या कहती हैं। आपके साथ उसकी बराबरी ? आप में तो वह स्फुलिंग है जिससे सब कुछ जलकर राख हो जाये।'

अपर्णा को काटो तो खून नहीं ! सुपर्णा भौंचक्की-सी देखती रही। रंजन की इस बात ने अपर्णा की नींव तक हिला कर रख दी। उसके उद्दीप्त, आलोकित मुख को देखती हुई मुस्कराने का व्यर्थ प्रयास करतीं उन्होंने कहा, 'यह तुमने मेरी कैसी तारीफ की ?'

'तारीफ नहीं ! जरूर है ! असल में मेरे शब्द-चयन में ज़रा गलती हो गई। मेरा मतलब है आप में वह स्फुलिंग है जिससे सारा जंजाल, जल कर राख हो सकता है। अवहेलना का जंजाल, भय का जंजाल, देश भर में कितने प्रकार का जंजाल जम कर पहाड़ हो गया है उसे देख आप कभी भी इतने आराम से चुपचाप रह न सकतीं। कुछ कर गुजरने को अवश्य तत्पर होतीं आप।'

बात माननी ही पड़ेगी। अपर्णा सोम ने ऐसे जोरदार व्यक्तित्व वाला आदमी शायद देखा है पहले। वे समझ गईं। उसका यह बलिष्ठ रूप ही उनकी कन्या के आकर्षित होने का प्रधान कारण है। अब उन्हें एक दूसरे प्रकार के भय ने घेरना शुरू किया। ऐसे बलिष्ठ चरित्र के व्यक्ति के हृदय में उनकी बेटी के लिये जगह कितनी होगी ? कब तक होगी ?

अपनेपन की इस हद तक पहुँचने के पहले उन्होंने रंजन के घर-परिवार के विषय में जानकारी हासिल की थी। उसके पिता वकील हैं। बहुत जाने-माने तो नहीं पर फिर भी ठीक-ठाक। करीब दो साल पहले उन्होंने प्रैक्टिस छोड़ दी है। अब अदालत नहीं जाते पर कन्सल्टेण्ट की हैसियत से घर बैठे भी काफी रोजगार कर लेते हैं। दो बेटे हैं, दो बेटियाँ। अपने-अपने ठिकाने लग गई हैं। रंजन सबसे छोटा है। बड़ा चार्टर्ड एकाउण्टेण्ट है। अच्छे फर्म में, अच्छी नौकरी करता है। अपना घर है। माली हालत सन्तोषजनक है।

रंजन के आग्रह करने पर अपर्णा उसके घर गई हैं। घर-द्वार अपनी आँखों से देखा है, परिवार के लोगों से बातचीत कर सन्तुष्ट हुई हैं। उस दिन उनके साथ सुपर्णा भी गई थी। बातचीत की दौरान में अपर्णा को मालूम हुआ कि सुपर्णा इस घर में पहले भी आ चुकी है। रंजन के पिता, माँ, बड़े भाई और भाभी सबसे बातचीत हुई। अपर्णा को वे लोग अच्छे लगे।

कन्या का होने वाला वर बेरोजगार है, बेटी की माँ के लिये यह एक समस्या अवश्य है। उस दिन की बातचीत की दौरान में मगर यह समस्या उतनी भयावह नहीं लगी। अपर्णा ने देखा कि घर-परिवार के लोग इस लड़के पर कुछ ज्यादा ही ममतामय हैं। वह पढ़ा-लिखा है, हर तरह से योग्य है यही उन्हें दिखाई पड़ता। यह जो वह, इतनी योग्यता के बावजूद भी किसी काम-धाम में लगना नहीं चाहता इस बात को वे महत्व ही नहीं देते। उन्होंने सुना कि पिछले सालों में रंजन ने अच्छी-भली नौकरियों के आफरों को स्वीकार नहीं किया, दो बार कॉलेजों में नौकरी की,

छोड़ी। उसका कहना है कि कालेज में पढ़ाने वाले लड़कों को गदहे बनाते हैं, वह इस काम में सहायता करना नहीं चाहता। इस वक्त स्थिति ऐसी है कि उसके राजी होते ही किसी भी सरकारी संस्था मे उसे बढ़िया से बढ़िया जगह मिल सकती है। कितनी ही बार ऐसी आफरें लिये लोग उसकी खुशामद करने आये। रंजन के घर में जिन लोगों का रोज का आना-जाना है, अपर्णा ने उन लोगों का नाम भर सुना है, अखबारों में उनके चित्र भर देखे हैं। अपर्णा की दृष्टि में वे सभी ऊंचे तबके के लोग हैं।

अपर्णा ने एक बात और देखी। उनका इतना अच्छा बेटा एक ऐसी साधारण लड़की के प्रति आकृष्ट है, देख रंजन के माता-पिता जरा भी नाखुश नहीं। उनका कहना है कि उन्होंने रंजन के घर बसाने का सपना देखना ही छोड़ दिया था। अपर्णा ने देखा, रंजन जैसे अधपगले, हरफन-मौला को उनकी बेटी ने वश में किया है, देख रंजन के पिता-माता सुपर्णा पर जान छिड़कने को तैयार हैं। बेटी का कोई भी गुण दीखता नहीं, बस इसी एक गुण ने उन्हें मोह लिया है।

यहां से देख-सुन कर अपर्णा जब आई, तब इस मामले पर सलाह-मशविरा उन्होंने एक ही व्यक्ति से किया। समीरण दत्त से। इसके पहले उन्होंने रंजन का परिचय भी करा दिया था समीरण से। सब देख-सुन समीरणजी ने इतना ही कहा, 'लड़का देखने में सुन्दर है। बात-चीत से भी खूब चतुर लगता है। पढ़ा-लिखा भी है। बस, एक ही बात जरा खटकती है। इतनी छोटी आयु में ही वह यह जो पालिटिक्स करता है। वैसे, मैं पालिटिक्स कुछ जानता समझता नहीं।'

मां-बेटी दोनों के आकर्षण की तीव्रता का कारण अगर रंजन का पालिटिक्स से जुड़ना ही है। यही उसका सरताज है। उसे अगर किसी और परिवेश में ले जाया जाये तो वह खिलता ही नहीं। वैसे, अपर्णा सोम अपने आकर्षण के विषय में पूरी तरह सचेत भी नहीं हैं। उन्हें रंजन अच्छा लगा है और उन्हें आशा है कि जो भी उससे बात करेगा, मोहित होगा। यह जो समीरणजी ने उसे 'बढ़िया' विशेषण से विभूषित नहीं किया, यही अपर्णा को जरा विचित्र लगा।

बहस करने पर उतर आईं अपर्णा। बोलीं, 'पालिटिक्स करता है तो क्या? क्या पालिटिक्स करने वाले शादी नहीं करते? घर नहीं बसाते?'

समीरण दत्त मुस्कराये। धीरज से बोले, 'करते क्यों नहीं। करें शादी तो रोकेगा कौन उन्हें? और फिर सुपी की शादी जब यहीं होनी ही है तो फिर बहस-मुबाहिसे की क्या जरूरत? सोच-विचार का भी क्या काम?'

समीरण दत्त के मन की तह तक पहुंचने के प्रयास में अपर्णा कुछ देर उनकी तरफ देखती रहीं। फिर बोलीं, 'आपसे पूछने का उद्देश्य तो यही था कि इस मामले में सोच-विचार करना है या नहीं?'

समीरण दत्त ने जवाब फौरन नहीं दिया। फिर बोले, 'लगता तो नहीं। और फिर सुपर्णा ने तो सब कुछ सोच-समझ कर ही अपनी राय दी होगी।'

सुपर्णा की बुद्धि-विवेचना पर अपर्णा को बिल्कुल आस्था नहीं। पिछ-

घटनाओं को अगर यह सज्जन बिल्कुल भूल नहीं गये हैं, तो उस पर भरोसा इन्हें भी नहीं करना चाहिये। क्योंकि, सुपर्णा के उन गलत निर्णयों का झमेला इन्हीं को संभालना पड़ा था। बेटी पर विश्वास नहीं है तो क्या ? अपर्णा को अपनी सूझ-बूझ पर पूरा भरोसा है। उनका अपना ख्याल है कि इस बार बेटी के चुनाव में जरा भी गड़बड़ी नहीं।

आजकल रंजन जब-तब आ धमकता है। वक्त-बेवक्त का सवाल उठता ही नहीं; आते ही नीचे से ही 'माँ, माँ' की पुकार लगाता ऊपर चला आता है। रजंन की भारी आवाज की इस जोरदार पुकार से पुलकित होती हैं अपर्णा। विह्वलता छाने लगती है। उनके मन में दो-एक बार यह ख्याल भी जागा है कि कैसा होता अगर ऐसा ही एक बेटा उनका अपना भी होता। ख्याल आते ही मगर वह उसे दोनों हाथों से मसल देतीं। बेटा होता तो बाप जैसा ही तो होता, इसमें क्या जरा भी शक है ? बेटी भी तो बाप पर ही गई है, कृपा है भगवान की, कि वह बेटी है, उसे किसी हद तक रोक पाई हैं अपर्णा। लगाम अपने ही हाथों में है।

रंजन को न वक्त का ख्याल रहता है न किसी सुविधा-असुविधा का। उसको इस बात का भी ख्याल नहीं कि किस वक्त किस चीज की माँग पेश कर रहा है। आते ही कहेगा, 'जल्दी से कुछ खाने को दीजिये। बड़ी भूख लगी है।'

सारा काम छोड़ अपर्णा खाने का इन्तजाम करने में लग जातीं। अब तो उन्होंने ऐसा इन्तजाम कर रखा है कि हर वक्त उसके लिये कुछ न कुछ तैयार रखती हैं कि आते ही दे सकें। परोसते वक्त मीठी डाँट पिलाती हैं, 'सेहत का भी कुछ ख्याल रखा करो। सेहत रहेगी तब तो काम करोगे। वक्त पर ठीक से खाया नहीं करोगे तो सेहत बनी कैसे रहेगी ?'

रंजन हँसता। कहता, 'ठीक ही रहेगी सेहत मेरी। करोड़ों लोग बिना खाये-पिये जिस देश में हैं वहाँ उनकी सेहत से अच्छी सेहत बनाना पाप है। मुसीबत यह है कि भूख जब लगती है तब यह बात याद ही नहीं पड़ती। जहाँ माँ दिखाई पड़ती है वहीं खाना माँग बैठता हूँ। माँओं की भी खूबी यही है कि मेरे जैसे भूखों को खिलाना उन्हें अच्छा लगता है।' हँस कर फिर कहता है, 'इसका यह मतलब मत लगाइयेगा कि मैं भूखा रह नहीं सकता। जब जेल में था तब एक बार छह दिन बराबर अनशन करता रहा। बीच-बीच में नमक पानी पीता था और न कुछ खाया न पिया।'

सुनते ही अपर्णा का हृदय हाहाकार कर उठा। पूछने लगीं, 'यह बात तुम्हारी माँ को पता है ?'

'क्यों नहीं ? उस अनशन की बात तो अखबारों में आयी थी। जेल में माँ जब मुझसे मिलने आईं तो रो कर बोलीं, 'तू नहीं खायेगा तो मैं कैसे खाऊँ भला ?' माँ ने सोचा था मैं इस बात से पिघल कर अनशन तोड़ दूँगा। मगर मैंने पता है क्या कहा ? मैंने कहा, 'ठीक है, तुम भी अनशन करो। अखबार में जब यह छपेगा तो हमारा काम और जल्दी बनेगा।'

रंजन की यह बात अपर्णा को बड़ी अजीब लगी। अपना काम बनाने के लिये प्रौढ़ा माँ के अनशन में भी एतराज नहीं, इतनी मानसिक शक्ति वांछनीय है या नहीं यह वे बता नहीं सकतीं।

घर आ सुपर्णा को बुला बाहर ले जाने का कोई भी वक्त बेवक्त नहीं है रंजन का। उसे इस बात की भी चिन्ता नहीं कि इस तरह वक्त-बेवक्त बुलाने से घर के लोग क्या सोचेंगे, क्या नहीं। जब मरजी हो आ गया। आते ही फरमान, 'जल्दी तैयार हो जाओ, बाहर जाना है।'

तैयार होने में सुपर्णा को हमेशा ही बहुत वक्त लगता है। इस बात पर रंजन कई बार मजाक कर चुका है। दो-चार बार तो उसने खीझ कर अपर्णा के सामने ही उसे जो जबान पर आया कह दिया। एक बार कहा, 'इतनी देर क्यों लगा दी? क्या तुम नाचने चली हो?' एक बार अपर्णा से कहने लगा, 'माँ, बेटी आपकी ऐसी कैसे हो गई? सजने-सँवरने में इतना वक्त क्यों जाया करती है? आपके व्यक्तित्व का राई-रत्ती भी इसमें क्यों नहीं है?'

अपर्णा हक् रह जाती हैं। समझ में नहीं आता, क्या करें! क्या कहें! इस किस्म की बातों से उनका हृदय अज्ञात आशंका से भरने लगता। उन्हें यह चिन्ता होने लगी है कि शादी के बाद, यह मजाकिया लहजा क्रोध का रूप तो नहीं ले लेगा। रंजन की बातों पर सुपर्णा जब मुस्कराती तक अपर्णा की शंका हल्की होने लगती। उन्होंने देखा है कि रंजन की डाँट-फटकार को वह कभी सीरियसली नहीं लेती। लगता है, रंजन की डाँट-फटकार सुनना उसे अच्छा ही लगता है। रंजन के अलावा और कोई उसे एक बात कहे तो पलट कर सात सुना देगी, नहीं तो मुँह फुला कर वापस ऊपर चली जायेगी। साथ बाहर जाने का सवाल ही नहीं उठता।

रंजन के साथ सुपर्णा का बाहर जाना अपर्णा को कभी बुरा नहीं लगा। उन्होंने मना भी कभी नहीं किया। लेकिन, बाज दिन उन्हें लौटने में बड़ी देर हो जाती है। अपर्णा चिन्तित होतीं। वे देखतीं कि सुपर्णा के पिता भी बेचैन हैं। चिन्तित हो बरामदे का चक्कर काट रहे हैं बार-बार। उन्हें देखते ही अपर्णा को मालूम हो जाता कि क्रोध से उफन रहे हैं वे। अपर्णा को मगर न उनके क्रोध की परवाह है न चिन्ता। वे जानती हैं कि रंजन के बदले अगर वह विकास सिन्हा के साथ गई होती तो सुपर्णा के पिता के मुख पर चिन्ता की बदली न होती, होती विजय की मुस्कराहट। जो भी हो, एक बात वे अवश्य मानती हैं। इतनी रात गये तक सुपर्णा का घर के बाहर रहना चिन्ताजनक ही नहीं, अशोभनीय भी है। परेशानी यह है कि इस मामले में सुपर्णा से वे कुछ भी कहतीं तो वह बिगड़ उठती। सुपर्णा जानती है विचित्र-प्रकृति रंजन बोस ने माँ को मोह लिया है। एक दिन उसने कहा था कि देर होते देख उसने रंजन से जब घर चलने को कहा तब रंजन ने सबके सामने ही कहा था, 'देर हो रही है तो क्या हुआ? डर किस बात का? क्या तुम्हें उठा ले जाने को खड़ा है कोई कहीं पर?' अपर्णा ने जब कहा कि देर क्यों करती है तब सुपर्णा ने उलट कर कहा,

तुम्हारी ही है। उसके साथ जाने क्यों देती हो मुझे ? जब बुलाने आता है, मना क्यों नहीं कर देतीं तुम ?'

सुपर्णा जानती है माँ रंजन से ऐसा कह नहीं सकतीं। ऐसे जोर-शोर से तो नहीं, पर बड़ी नरमी से अपर्णा ने रंजन से यह बात कहने का प्रयास एकाध बार किया है। लेकिन रंजन पुट्ठे पर हाथ रखने ही नहीं देता। उनकी बात शुरू होते ही उसने कहा, 'बस माँ, बस। आपकी लड़की अब बच्ची नहीं। उसे जरा अपने पाँव चलने दीजिये। और फिर मेरे साथ जाती है। मैं जब तक साथ हूँ, आपको चिन्ता किस बात की ?'

रंजन ने विकास सिन्हा को इस मकान में दो-एक बार देखा है। एक दिन सुपी नीचे वाले कमरे में रंजन के साथ बात कर रही थी। विकास आया था वरेन सोम से मिलने। विकास अब पहले की तरह रोज-रोज तो नहीं आता, पर कभी-कभी आ ही जाता है। उसके लौट जाने के थोड़ी देर बाद सुपी ऊपर आ हँस कर लोटने लगी।

'हाय माँ, आज तुमने नहीं देखा। सिन्हाजी ने रंजन को देखा तो उनकी आँखें चढ़ी की चढ़ी रह गईं। ऐसा मगन हुये रंजन को देखने में कि दरवाजे की चौखटे से टकरा गये। सच कहती हूँ माँ, बिल्कुल मजाक नहीं। इस कदर झेंप गये कि लौटते वक्त आँख उठा कर देखा तक नहीं।'

इसके बाद की मजेदार बात भी हँस-हँस कर, खूब मजा ले-ले कर माँ से बताना न भूली सुपर्णा। सिन्हाजी का इस तरह देखना और फिर टकरा जाना देख रंजन को सन्देह हुआ कि जरूर कोई बात है। होता भी क्यों नहीं, कित्ता स्मार्ट है वह ! सिन्हाजी के चले जाने के बाद उसने मुझसे पूछा, 'कौन हैं ये ?'

सुपर्णा भी क्यों चूकती। उसने कहा, 'पापा के दफ्तर के एक बहुत बड़े जूनियर आफिसर हैं। नाम है श्री विकास सिन्हा।'

'जानती हो माँ, रंजन ने इस पर क्या कहा ? कहा, 'हूँ, सिंह तो जरूर हैं, और विक्रमशाली भी। उनके विक्रम का प्रदर्शन देख कर लग रहा है कि मेरा यहाँ होना, उनके दिल को चीर गया है।'

रंजन के इस मन्तव्य को स्वीकार किया है सुपर्णा ने। विकास के विषय में सविस्तार बताया भी है। सारी बातें सुन विकास के लिये बहुत दुःखी हुआ है रंजन।

बेटी की बात सुन अपर्णा खुश नहीं हुईं। हँस कर लोटना तो दूर, मुस्कराईं भी नहीं। नाराज हुईं। इसका कारण यह था कि रंजन उन्हें अच्छा तो लगा था, पर उसके विषय में तब तक निश्चिन्त न हो सकी थीं वे। उन दिनों उन्हें बार-बार लगता कि रंजन की सशक्त प्रकृति के साथ उनकी बेटी की प्रकृति का ताल-मेल बैठता नहीं। उन्हें बार-बार ही लगता कि आगे, भविष्य में, उनकी बेटी अवहेलित होगी। यह खौफ उन्हें खाये जा रहा था। इतने खौफ का कारण था उनके अपने जीवन की व्यर्थता। इसलिये, एक दिन, सुपर्णा की अनुपस्थिति में, उन्होंने रंजन से इस विषय पर बात

की थी। अपर्णा ने कहा, 'देखो रंजन, तुमसे छिपाना क्या, मेरी बेटी के गुण-दोष मुझे सभी मालूम हैं। अब तक तुम्हें भी पता चल चुका होगा, वह कैसी है, कैसी नहीं। तुमने कभी सोचा है, इसके साथ तुम्हारा निर्वाह हो सकेगा, या नहीं? ऐसा तो नहीं कि आगे चल कर यह विवाह तुम्हारे मनस्ताप का कारण बने?'

रंजन मुस्कराया। कहा, 'पहले जब सिर्फ उसे जानता था, आपको नहीं, मुझे वह तभी बहुत अच्छी लगी थी। लेकिन जब से आपसे परिचय हुआ, तब से आपकी बेटी होने के नाते वह मुझे और भी अच्छी लगने लगी है।'

ऐसे व्यक्ति से क्या कहें अपर्णा? फिर भी उन्होंने कहा था, 'रंजन, तुम मेरे सवाल का जवाब न दे उसे 'एवायड' कर गये। मुझे रात-दिन यही चिन्ता खाये जा रही है कि सुपी को तुम अपना जीवन साथी बनने के योग्य मानते हो या नहीं।'

रंजन देखता रहा। मुस्कराता रहा। अपर्णा के चिन्तित मुख पर दृष्टि स्थापित कर कोमलता से कहा, 'आपको मैं क्या कहूँ माँ? यह शत-प्रति-शत सच है कि मेरा जो काम है उसके लिये आपकी कन्या बिलकुल फिट नहीं बैठती। मजे की बात तो यह है कि अगर वह उस कार्य के योग्य होती तो मैं उसकी ओर बढ़ता ही नहीं।···· उसके साथ ऐसा हुआ कि एक जलसे में उसका नृत्य देख, और उसमें एक सच्चे कलाकार की सहज वृत्ति देख मैं उसके प्रति बरबस आकर्षित हुआ। नृत्य-संगीत का कोई बोध नहीं मुझे। उस दिन उस जलसे में मैं क्यों गया, यह भी नहीं बता सकता। पर उस दिन मंच पर होते कार्यक्रम को देख कर मुझे लगा कि देश की और समस्यायें मिट जाने पर भी इसकी जरूरत रहेगी, क्योंकि सार्थक रूप की तृष्णा हम सब में है।' कुछ देर चुप रहा रंजन। फिर कहा, 'परिचय होने के बाद अगर सुपर्णा राजनीति समझना चाहती या समझने का कुछ भी प्रयास करती तो मैं उसके स्वतंत्र कलाकार व्यक्तित्व की कोई बिसात न मानता। यह जो वह मेरे राजनैतिक जीवन को ले बे सिर-पैर का मजाक करती रहती है, यही मुझे बहुत भाता है।'

इसके बाद ही आगे बढ़ी अपर्णा। आगे बढ़ने का मतलब, सामाजिक रीति के अनुसार रंजन के पिता के सामने विवाह का प्रस्ताव ले कर गई। रंजन के पिता ने बड़ी सूझ-बूझ से बात की। बोले, 'इस प्रकार की शादियों में लेन-देन का सवाल उठता ही नहीं। फिर भी, यही अच्छा लगता है कि दुनिया जाने कि दोनों ओर के माता-पिता ही बेटे-बेटी की शादी कर रहे हैं। इसलिये, चाहो ऐसी हो कि देखने [illegible] को शोभन लगे।' इसी प्रसंग में उन्होंने पहली बार सुपर्णा के पिता के विषय में [illegible] उनसे परिचित होने की इच्छा व्यक्त की। [illegible] ने दी उनको इच्छा। [illegible] ने यथासंभव सहजता से गर्दन हिलाई। कहा, 'आप ठीक ही कह रहे हैं। [illegible] अब अवश्य आना पड़ेगा। आयेंगे भी।'

उसी रात अपर्णा सोम के चरण उस कमरे में फिर पड़े जिसमें वे साधारणतया जाना नहीं चाहतीं। वरेन सोम कमरे में ही थे। विस्तरे पर बैठे पेशेन्स खेल रहे थे।

'सुपी की शादी तय हो गई है।'

वरेन सोम ने यों देखा, जैसे अचानक ठोकर लगी हो। पत्नी को चुपचाप देखते रहे। उनके नीरव प्रश्न का उत्तर जब न आया तब पूछा, 'कहाँ ?'

'वर का नाम रंजन वसु है।'

'अरे वही लड़का न, जो आजकल अकसर आता है और पालिटिक्स हाँकता है हर वक्त ?'

प्रश्न की शब्दावली अगर भिन्न होती तो शायद वह इतनी कटु न लगती। खून की घूंट पीकर अपर्णा बोलीं, 'हाँ।'

अपर्णा के मुख की ओर देखते ही वरेन सोम जान चुके थे कि उनकी बातों का प्रभाव क्या पड़ा है। उन्हें यह भी पता है कि आगे चाहे जो कहें, अब कुछ बदलने वाला नहीं। फिर भी उन्होंने पूछा, 'और क्या करता है वह ?'

'करता कुछ भी नहीं, मगर चाहे तो कर सकता है, ऐसे ही लोगों में उठना-बैठना है उसका। वैसे एम० ए० पास है। घर सुखी-सम्पन्न है।'

मिजाज खट्टा हो गया। बुरा-सा मुँह बनाकर वरेन सोम बोले, 'मतलब यह है कि एम० ए० की डिग्री और घर की सम्पन्नता देख कर ही शादी की जा रही है ?'

अपने को भरसक शान्त रख अपर्णा ने कहा, 'शादी मैंने नहीं, सुपी ने ही तय की है।'

गरम हो वरेन सोम बोले, 'ऐसी शादियाँ उन्हों ने पहले भी तय की थीं, और उन्हें हर बार रद्द किया गया था।'

इस कड़वी सचाई को अपर्णा खूब जानती हैं। बेटी पर उन्हें जरा भी भरोसा नहीं। इसी बाप की बेटी तो है! अगर उन्हें खुद वर जँच न गया होता तो इस बार भी रद्द करने के प्रयास में लग जातीं। पिछली दो बार जब सुपर्णा की तय की हुई शादियाँ रुकवाई गई थीं तब बाप के किये कुछ हो न सका था। जो थी किया-धरा वह अपर्णा ने ही। इन मामलों में समीरणजी ने जी तोड़ कर मदद की थी। मगर इतना कुछ कहने का मन न हुआ। बोलीं, 'इस बार रद्द करना जरूरी नहीं समझ रही हूँ।'

'क्यों ? क्या राजनीतिक व्याख्यानों ने तुम्हें भी मोह लिया है ?'

वरेन सोम की जबान से ऐसे दुःसाहसिक शब्द अपर्णा को याद नहीं पहले कब सुने हैं। अचानक, बहुत दिनों बाद, एक बात याद आई। काफी दिन पहले, किसी एक राजनैतिक दल को खोदने-उभाड़ने के कारण ही वरेन सोम को बड़ी परेशानी का सामना करना पड़ा था। वैसे, वह रंजन वाला नहीं, एक दूसरा दल था, घटना भी बहुत पुरानी है। उस खोदने-उभाड़ने के कारण एनक्वायरी बैठी, मुकदमा चला, अदालतों के चक्कर काटते-काटते एड़ी घिस गई, वरेन सोम की इज्जत नीलामी पर चढ़ी, खाना-सोना हराम हो गया। जैसे-तैसे कानून के चंगुल से छूटे, नौकरी भी बनी

रहीं, पर बदनामी का दाग न छूटा। फल यह हुआ कि नौकरी में उन्नति का मार्ग सँकरा हो गया। उससे भी बड़ा घाटा जो हुआ वह यह कि अदालत की दृष्टि में बेकसूर माने जाने पर भी अपर्णा ने उन्हें माफ न किया। इस घटना के बाद उनका बचा-खुचा धीरज भी टूट गया और उनके वैवाहिक जीवन की युग्मता समाप्त हो गयी।

अपर्णा बोलीं नहीं। देखती रहीं। वरेन ने कहा, 'मैं इस शादी से राजी नहीं।'

जैसी स्थिरता अपर्णा की दृष्टि में थी वैसी ही वाणी में फूटी, 'यह शादी फिर भी होगी। अगर तुम बहुत अड़ोगे या दूसरे अड़ंगे आयेंगे तो वे लोग जाकर अदालत में शादी कर लेंगे। मैं उन्हें रोकूँगी नहीं। पर ऐसा मैं चाहती नहीं। आज मैं तुमसे बहस करने नहीं आई, सिर्फ बताने आई हूँ कि खुकी की शादी तय हो गई है। लड़के के माता-पिता से मेरी बातचीत हो चुकी है। उन्हें इस घर का हाल मालूम नहीं, इसलिये उनका तुमसे परिचित होने की इच्छा व्यक्त करना स्वाभाविक है। यह भी हो सकता है कि उन्हें कुछ कहना है जो मुझसे कह नहीं पा रहे हैं। तुम्हें और कुछ नहीं करना है। बस, सिर्फ इतना बताना है कि तुम कब जा सकोगे?'

अपनी बात पूरी कर अपर्णा रुकी नहीं। जैसे नपे कदमों से आई थी, वैसे ही चली गईं।

जाते-जाते उन्होंने पीछे मुड़ कर देखा तो नहीं, पर स्पष्ट अनुभूति से अनुमान लगाया कि भस्म करने वाली दृष्टि से धधकती एक जोड़ी आँखें उनका अनुसरण कर रही हैं।

इस घटना के ठीक दो दिन बाद समीरण दत्त आये। वे जब आये तब दिन ढल कर शाम हो चली थी। समीरण अकसर आते हैं। लिखने-पढ़ने का काम नहीं रहता है जिस दिन, उस दिन काफी देर रहते भी हैं। उस शाम को मगर अपर्णा को लगा समीरणजी के मुख पर एक अपरिचित भावना भूल रही है।

इधर-उधर की दो-चार बातों के बाद समीरणजी ने जरा संकोच से कहा, 'आज एक अजीब बात हुई। सुबह वरेन हमारे घर गया था।'

अपर्णा विस्मित हुईं। पिछले कुछ सालों से वरेन और समीरण में बातचीत बन्द है। अगर कभी इत्तफाक से सामना हो भी जाता है तो वरेन मौन मुँह फेर कर आगे बढ़ जाते हैं।

अपर्णा का मुख गम्भीर हुआ। दृष्टि में जिज्ञासा जागी। 'क्या मामला है?'

'वरेन के मन में जाने क्यों यह धारणा घर कर गई है कि इस शादी से [illegible] सुखी नहीं होगी। उसने रंजन के विषय में इधर-उधर कुछ पता भी लगाया है। खुकी सुखी क्यों न होगी, इस विषय में कुछ साफ-साफ बताया नहीं।'

अपर्णा गरम होकर बोलीं, 'तो इसमें आपकी परेशानी की क्या बात है ? आपने यह क्यों नहीं पूछा कि सुख क्या है क्या नहीं, इसकी कोई स्पष्ट धारणा है उन्हें ?'

समीरणजी ने कहा, 'नहीं, यह तो मैंने पूछा नहीं। बरेन बार-बार कह रहा था कि रंजन कुछ करता नहीं, सिर्फ पालिटिक्स के बोल बोलता है, ऐसे लड़के को पसन्द करना सुपी का मोह-मात्र है। अब वह चाहता है कि चाहे सुपी को समझा-बुझा कर, चाहे तुम्हें, जैसे भी हो, यह शादी रुकवा दी जाये।'

क्रोध से मुख लाल होने लगा अपर्णा का। समीरणजी के बोलने का तरीका उन्हें अच्छा नहीं लग रहा था। बोलीं, 'आपने कहा नहीं कि रंजन आपको भी नापसन्द नहीं।'

'कहा तो। कई बार, कई तरह से। मगर वह सुनने को राजी ही नहीं। असल बात यह है कि उसके हाथ में जो लड़का है, सुपी की शादी वह उसी से करना चाहता है। बरेन की राय में वही सुपी का सबसे योग्य वर है। उसने मुझसे कहा है कि यह बात मैं तुम्हें बता कर कन्विन्स करूँ।'

दबी जबान से अपर्णा ने कहा, 'तो फिर शुरू कर दीजिये कन्विन्स करना।'

समीरण बाबू हँस पड़े, 'मुझसे नाराज क्यों होती हो ?' उन्होंने कहा, 'क्या मैं उसकी पैरवी कर रहा हूँ तुमसे ? उसने जो कहा वह मैंने तुमसे बता दिया। दो-एक दिन में वह फिर धावा बोलेगा। सोच रहा हूँ क्या जवाब दूँगा।'

तमतमाये मुख से अपर्णा ने कहा, 'कह दीजियेगा कि मैंने कहा है कि सुपी की शादी रंजन से ही होगी। शादी में अगर वे विकास सिन्हा को निमंत्रण देना चाहें, तो मैं मना नहीं करूँगी।'

इस घटना के अगले दिन समीरणजी शाम को जब आये तब वृन्दा ने आकर कहा, 'मालिक एक बार आपको बुला रहे हैं।'

समीरणजी को देखते ही पता चल गया कि मन ही मन कितने विडम्बित हैं वे। वृन्दा के कहते ही वे उठे, अपर्णा पर एक दृष्टि डाल उत्कंठित मुख से बरेन सोम के कमरे की ओर बढ़ गये। इस मकान में समीरणजी आते ही रहते हैं, मगर बरेन सोम का इस तरह बुला भेजना घटना का एक नया रूप है। अपर्णा के मुख पर क्रोध की रेखायें उभरीं। जी चाह रहा था कि समीरण को रोक कर खुद ही जायें। बरेन की बात सुन जो कहना है खुद ही कह आयें।

लेकिन अन्त तक उन्होंने समीरण को रोका नहीं। कठोर बनी बैठी प्रतीक्षा करती रहीं। पन्द्रह-बीस मिनट बाद समीरण वापस आये।

अपर्णा देखती रहीं। जिज्ञासा भरी दृष्टि से देखती रहीं।

'कह आया।'

कुछ देर अपर्णा बैठी रहीं। जब देखा कि समीरण अब कुछ कहने वाले नहीं तो पूछा, 'कहने में इतनी देर तो लगी न होगी, और क्या बात हुई ?'

समीरणजी विव्रत होकर मुस्कराने लगे। बोले, 'बातें क्या होतीं ? जानती

ही हो, उसे जब गुस्सा आता है तो होश नहीं रहता कि कौन सी बातें कहने की हैं और कौन-सी नहीं। आज भी वही हुआ। अनाप-शनाप बहुत कुछ कह डाला।'

अपर्णा बिफर उठी। बोली, 'नराधम ही केवल जो बातें कहने की नहीं वह बातें कहते हैं। मुझे बताइये, आपको भी बुरा-भला कहा है क्या ?'

समीरणजी ने मजाक किया। बोले, 'बुरा-भला तो खैर नहीं कहा। यह जरूर पूछा कि बेटी की शादी के बाद तुम्हारा कोई प्लान भी आगे बढ़ने वाला है क्या ?'

क्षण भर में अपर्णा का सारा खून मुख पर जम गया। वह आदमी है ही ऐसा नीच, नराधम। और ये सज्जन उसी तरह भले आदमी हैं कि उसकी गन्दी बातों-इशारों को हँस कर टाल देते हैं।........बाद में क्या होगा क्या नहीं, इसका जवाब अपर्णा देगी, और खूब गिन-गिन कर देगी। हो तो जाये सुवर्णा का ब्याह !

तीन-चार दिन और बीते। उस दिन रात को सुवर्णा चिन्तित मुख ले माँ के पास आई। बोली, 'माँ, पापा बुला रहे हैं तुम्हें।'

अपर्णा विस्मित हुई। 'कहाँ ?'

'पापा के कमरे में।'

बड़े लम्बे अर्से बाद ऐसा बुलावा आया था। क्यों बुलाया गया होगा, इसका अनुमान भी लगा लिया अपर्णा ने। उन्होंने पति से कहा था—रंजन के घर जाना उनके लिये कब ठीक रहेगा, बतायें। अपर्णा का ख्याल है कि उसी विषय में कुछ कहेंगे। अगर कोई दूसरा प्रसंग उठायेंगे वरेन सोम तो अपर्णा उनकी वह खबर लेंगी—कि याद रखेंगे।

वरेन सोम के कमरे में कदम रखते ही अपर्णा को मगर जो सुनना पड़ा उसके लिये वे कतई तैयार नहीं थीं। वरेन बोले, 'आज मैं उन लोगों से मिल आया।'

'मतलब तुम्हारा ? क्यों भला ?' अचम्भे के मारे अपर्णा के मुख से यह कठोर शब्द अपने आप ही निकल पड़े।

वरेन सोम ने पेशेन्स खेलना रोक मुँह उठाया। पत्नी पर दृष्टि रख बोले, 'तुम्हीं ने तो जाने को कहा था।'

'जाने को नहीं कहा था। मैंने तुमसे सिर्फ इतना ही पूछा था कि तुम कब जा सकोगे ?'

वरेन सोम देखते रहे। निष्पलक, एकटक। दृष्टि से, वाणी से [illegible]

'क्यों ? क्या यह डर है कि मेरे अकेले जाने से मामला गड़बड़ा जायेगा ?'

'हाँ।'

'ओफ हो !' क्षुब्ध वरेन ने पेशेन्स के पत्तों पर दृष्टि गड़ा कर [illegible]

मेरे ध्यान में आयी ही नहीं।'

इस एक मामले में, मतलब बेटी की शादी के मामले में [illegible]

नहीं तो इस नाचीज से वे भला बहस करतीं ? उस पर तर्क खर्च करतीं ? लेकिन आज मामला सुपर्णा की शादी का है। आज उनका चुप रहना ठीक नहीं होगा। छुरी की धार-सी तेज, पर शीतल स्वर में बोलीं, 'तुम जानते थे। आज तक यह किसी दुश्मन ने भी नहीं कहा है कि किसी बात को गहराई तक पकड़ नहीं पाते तुम।'

वरेन सोम की बोलती बन्द हो गई। सिर झुकाये ताश के पत्तों को आगे-पीछे करते रहे।

बड़े प्रयास से अपर्णा ने अपने को संयत किया। बड़ी कठिनाई से बोलीं, 'बस न ? और तो कुछ नहीं कहना है न ?'

वरेन सोम का सारा ध्यान ताश के पत्तों पर लगा था। दृष्टि उठाये बिना बोले, 'लड़के के पिता से मुलाकात हुई। मैंने अनुभव किया कि मेरा वहाँ जाना जरूरी नहीं था। उनकी बातों से लगा कि उन्हें यह बात मालूम है कि इस शादी में मेरी कोई भूमिका नहीं।'

अपर्णा के मुख की रेखायें और कठोर हुईं। वह जो आज तक यह नरक पीड़ा सह रही हैं, वह सिर्फ बेटी का मुँह देख कर। बस, शादी वाला दिन पार हो जाये। बेटी के भविष्य का ख्याल करके ही आज तक उन्होंने अपने विफल जीवन पर पर्दा डाल रखा है। वे यह भी नहीं चाहतीं कि किसी तीसरे को इस पर उँगली उठाने का मौका मिले। अगर यह बात रंजन के घरवालों को पता चल गयी है तो इतने वर्षों से वे जो अपने को रोकती आई हैं, इतना आत्मनिग्रह सहती आई हैं, वह सब बेकार गया। स्वयं उन्होंने इस विषय में कभी किसी से कुछ कहा नहीं। उनका विश्वास है कि सुपर्णा भी इतनी निर्बोध नहीं कि इस बात को किसी से बतायेगी। वैसे रंजन है बड़ा तेज-तर्रार, अगर अपने से कुछ अनुमान लगाया हो तो कहा नहीं जा सकता। फिर भी, उनका सारा क्रोध पति पर जा पड़ा। रंजन ने अगर कुछ अनुमान लगाया होगा तो इन्हीं महाशय के आचार-आचरण से ही लगाया होगा।

मुँहतोड़ जवाब दिया जा सकता था। मगर अपर्णा ने दिया नहीं। असल बात अभी सुनने को बाकी है। सिर्फ इतना ही सुनाने को तो बुला भेजा नहीं है। अपर्णा ने पूछा, 'फिर ?'

'फिर ? फिर सज्जन ने हमारी नन्हीं की ढेर सारी तारीफ की। उसकी तारीफ तो जो की सो की, उससे कहीं ज्यादा तारीफ तुम्हारी की। बोले, 'तुम गृहस्थी तो निपुण हाथों से चला रही हो हो, बेटी की शादी जैसे गंभीर मामले में भी तुमने मुझे चिन्ता से मुक्ति दी है। तुम्हारी जैसी महिला लाखों में भी न मिलेगी। अतः, मैं बहुत ही किस्मतवाला हूँ कि तुम जैसी बीवी भगवान् ने मुझे दी है।'

व्यंग्य से अपर्णा के होंठ चुलबुला उठे। इच्छा हुई कि कहें, 'बेचारे रंजन के पिता ! उन्हें यह बात मालूम नहीं है कि भगवान् के देने से ही व्यक्ति भाग्यवान नहीं होता, अपनी किस्मत बलवान होने पर ही सौभाग्य सहता है।' मगर नहीं। अभी भी बात तह तक पहुँची नहीं। चुप रहीं वे। प्रतीक्षा करती रहीं।

बिस्तरे पर बिछे पेशेन्स पत्तों से ध्यान हटा। दृष्टि उठा वरेन सोम ने कहा, 'सज्जन बोले, इस किस्म की शादियों में लेन-देन की या दान-दहेज की बात उठ नहीं सकती। वैसे बेटे की शादी कर कुछ बना लेने का उनका इरादा न कभी था, न अभी है। पर जमाना जैसा लगा है और मँहगाई जिस तरह बढ़ रही है हम तो सभी जानते हैं। अगर हम बिना परेशान हुये उन्हें नकद तीन हजार दे सकते तो बहुत अच्छा होता। वैसे यह तो मानी हुई बात है कि हम अपनी हैसियत भर अपनी बेटी को देंगे ही।'

बात कोई बुरी नहीं। फिर भी वर के पिता का यह प्रस्ताव अपर्णा को जरा खल गया। बोली, 'क्या कहा तुमने ?'

'कुछ कहने या नहीं कहने वाला मैं कौन हूँ ?'

अपर्णा चलने को हुई। उनके बढ़ते कदम ठिठक गये, 'सुनती जाओ।'

पलटी अपर्णा।

'नन्हीं की शादी इसी जगह ही होगी ?'

अपर्णा ने सुना, देखा, पर कहा नहीं कुछ। क्या जवाब दें इस सवाल का ? निर्णय तो हो ही गया है।

'यह सिर्फ तुम्हारी ही बेटी है, क्यों ? मेरी कोई भी जिम्मेदारी नहीं ?'

अपने मुख से गंभीरता का पर्दा जरा भी न हटा। पर, उनकी आवाज क्या निकली, एक तुनीर से जहर बुझे तीर एक बार, एक साथ निकले। बड़ी शान्ति से धीरे-धीरे बोली, 'आज तक तुमने बहुत सारी जिम्मेदारियाँ उठाई हैं, इसे न हो, रहने ही दो।'

कमरे के बाहर आते ही सुपर्णा मिली। क्रोध और उत्तेजना से कांप रही थी वह। माँ से बोली, 'यह जुल्म है। यह नहीं हो सकता। मैं रंजन से कहूँगी।'

बेटी की क्रोधित मुद्रा पर एक हल्की नजर डाल अपर्णा बढ़ चली। कहीं कोई सुन न ले, इसलिये तब तक चुप रहीं, जब तक अपने कमरे तक पहुँच नहीं गई। वहाँ पहुँच कर बोली, 'क्या नहीं हो सकता ? क्या कहेगी रंजन से ?'

'यही, रुपयों वाली बात। रंजन को अवश्य ही कुछ पता नहीं। पता चलते ही तहलका मचा देगा। यह अवश्य उसके बाप की चाल है।'

बेटी को डाँटा अपर्णा ने। 'यह मूर्खता मत करना। वह तेरा घर होगा। उन लोगों के साथ तुझे जीवन भर रहना होगा। शुरू से ही उसके माता-पिता को नाराज कर तू क्या पा जायेगी ? उन्होंने अगर अपनी इज्जत घटा कर माँगा है तो हम दे देंगे। इस जरा-सी बात पर तुझे न बिफरना है, न रंजन से कुछ कहना है।'

कमरे में पाँव रखा। बेटी को तो डाँट कर चुप करा दिया, पर नकदी की इस माँग ने अपर्णा के मानसिक सन्तुलन को हिला कर रख दिया।

इस शादी के उपलक्ष में बहुत....हाँ, बहुत दिनों बाद वरेन सोम से अपर्णा सोम को कई बार बातें करनी पड़ी हैं। इतना ही नहीं, रंजन के घर भी दोनों को इकट्ठे जाना पड़ा है। इस मामले में अपर्णा अनिच्छुक तो अवश्य हैं, पर मन में उनके कोई द्विविधा भी नहीं। दफ्तर जाते वक्त वरेन सोम के कमरे में आ कर कहा, 'तुम जब नहा रहे थे तब रंजन के पिता का फोन आया था। कुछ सलाह करना चाहते हैं। हमें बुलाया है।'

शीशे में अपर्णा के प्रतिबिम्ब को देख वरेन ने पूछा, 'तो क्या मेरी इजाजत लेने आई हो ?'

'नहीं। तुम जब नहीं मिले तो मुझे बुलाया। दोनों को ही आने को कहा है।'

'तुम उनसे कह देना कि 'दोनों' का एक उनके हुकुम का गुलाम नहीं। इस शादी में मैं कोई नहीं। मेरी कोई इच्छा नहीं। मुझसे कोई सलाह नहीं। इस शादी से मैं राजी भी नहीं।'

अपर्णा ने सुना। शान्त पर व्यंग्यभरी दृष्टि से वरेन को ध्यान से देखा उन्होंने। फिर सारी बहस की जड़ काट कर बोलीं, 'तैयार हो, ठीक छह बजे मैं टैक्सी बुलवाऊँगी।'

धीरे-धीरे चल कर कमरे से बाहर हुईं। इस व्यक्ति के ज़र्रे-ज़र्रे से परिचित हैं वे। वह अवश्य जायेगा। ऐसा भी नहीं कि डर से राजी होगा। डर-वर तो उसमें है नहीं। जो है उसका नाम है बेशर्मी। वह जायेगा।

वह जायेगा, इतने दिनों बाद हाथ भर की दूरी में, एक साथ टैक्सी में जाने को लालच से। यह जानते हुये भी, वह जायेगा कि बाहर की दूरी हाथ भर से घटा कर अंगुल भर करने पर भी, अन्दर की दूरी इस जीवन में पाटी नहीं जायेगी।

इस बेशर्मी का एक उदाहरण अभी हाल में मिला था। करीब दो महीने पहले सुपर्णा के नृत्य का एक प्रदर्शन था। बेटी के इन जलसों में माँ अकसर उपस्थित होती हैं। सुपर्णा का मन रखने, जाना ही पड़ता है। मगर पिता ने कभी बेटी का कोई जलसा नहीं देखा। किसी ने कभी बुलाना जरूरी ही न समझा। उस बार उन्हें भी बुलावा आया।

उस दिन सुपर्णा माँ के पास आ चिन्तित मुद्रा में बोली, 'एक परेशानी खड़ी हो गई है माँ। आज के जलसे में रंजन के माता-पिता और भाभी आने वाले हैं। तुम तो रहोगी ही वहाँ। मतलब यह कि रंजन कह रहा था कि पापा भी होते तो अच्छा होता। रंजन के पिता जरा पुराने ढंग के हैं न, रंजन कह रहा था कि तुम और पापा। दोनों ही होते तो कुछ इधर-उधर की बात सोचने का मौका न मिलता उन्हें। और फिर पापा से उनका परिचय भी नहीं हुआ है, वहाँ यह काम भी हो जाता।.... तुम कहो न माँ, पापा से चलने को।'

बेटी ने मन की बात साफ-साफ खोल कर तो नहीं कही पर अपर्णा समझ गईं कि वह क्या कहना चाह रही है। उन्हें सुपर्णा की माँग अन्याय नहीं लगी। नाराजगी

जो थोड़ी-सी हुई यह इसलिये कि इसकी जिम्मेदारी वह उन पर डालना चाह रही है। खीझ कर बोली, 'तू क्यों नहीं कहती अपने पापा से ?'

'मैं ? मेरे से यह नहीं होने का। मैं पापा से कहने की हिम्मत नहीं रखती। तुम कहो माँ, तुम एक बार कहोगी तो पापा अवश्य मान जायेंगे। सच कहती हूँ कि वहाँ रंजन के पिता अगर गये तो पापा का होना बहुत जरूरी है।'

अपर्णा के कदम उस कमरे की ओर बढ़े थे उस दिन। उन्होंने कहा भी। बेटी की शादी जब उस जगह होनी ही है तब किसी के मन में कोई संशय नहीं रहने देंगी वे। रंजन ने जब कहा है तब उसके कहने के पीछे कोई कारण जरूर होगा। उचित जान कर ही कहा है उन्होंने। अपर्णा का प्रस्ताव सुन वरेन सोम बेशक, चकित हुये। अवाक् दृष्टि से देखते रहे। अपर्णा ने कहा था, 'आज सुपी के नाच का फंक्शन है। बहुत लोग आयेंगे। वह कह रही थी, तुम्हारा-मेरा भी जाना जरूरी है। दफ्तर से जरा जल्दी आ जाना। शो छह बजे शुरू है।'

वरेन सोम को यकीन नहीं हो रहा था। क्या यह सच है ? क्या यह हो सकता है ? बहुत देर तक चुप रहने के बाद आश्चर्य हो कर बोले, 'और बात तो समझ गया मगर यह नहीं समझा कि मेरा वहाँ जाना जरूरी क्यों है ?'

ठण्डा-सा जवाब दिया अपर्णा ने, 'जरूरी है। अगर थोड़ा दिमाग लगाओगे तो तुम्हारे समझ में बात आ जायेगी। सुपी ने जब कहा है, तब बिना वजह नहीं कहा होगा।'

उस शाम वरेन सोम दफ्तर की गाड़ी से पाँच बजे के पहले ही आ गये। दफ्तर की गाड़ी रोक ली उन्होंने। उसी गाड़ी में बैठ दोनों बेटी के नाच के फंक्शन में पहुँचे। यह साथ, यह करीबी अपर्णा को जरा भी रुचिकर नहीं। बाहर जाते वक्त अपर्णा की साज-सज्जा बेटी की माँ जैसी ही थी। फिर भी, उस सादगी में भी आकर्षण था, सुनाई थी। गाड़ी में, एक बात भी नहीं हुई। लेकिन अपर्णा ने साफ देखा कि पार्श्वचारी की दृष्टि रह-रह कर उन पर आ रही है।

फंक्शन में पहुँच अपर्णा से रंजन ने बताया कि 'तबियत ठीक न होने की वजह से उसके पिता नहीं आ सकते हैं। उन्हें अकेला छोड़ माँ भी कैसे आतीं ? हाँ, भाभी आई हैं।' सुन कर अपर्णा को बुरा लगा। व्यर्थ में ही साथ घसीट कर लाई उस अरुचिकर व्यक्ति को।

सुपर्णा के पिता की समझ में यह बात अन्त तक नहीं आई कि किस कारण से उन्हें बेटी के नाच के जलसे में आना पड़ा है। सुपर्णा ने कई लोगों से उनका परिचय जरूर करा दिया। इसकी भी क्या जरूरत थी, बेचारे समझ न सके। इतना मानना ही पड़ेगा कि कलाकार बेटी के पिता होने के नाते उन्हें कुछ ज्यादा ही इज्जत बख्शी गई।

वन्त कर रही थीं सुपर्णा। अपर्णा मोहित हो देख रही थीं। हाल में उपस्थित सारे दर्शक भी मोहित थे। एक—हाँ, सिर्फ एक व्यक्ति थे वहाँ जो 'चित्रांगदा' को नहीं देख रहे थे। वे थे वरेन सोम। अन्धेरा था हाल। अन्धेरे में ही अपर्णा ने एक बार ख्याल किया कि किसी की क्रूर लोलुप आँखें उनको निगल रही हैं। नजरें मिलते ही उस व्यक्ति ने मुँह दूसरी तरफ कर लिया। अपर्णा ने फिर उधर देखा नहीं, फिर भी वे निश्चित रूप से कह सकती हैं कि आँखों की वह जोड़ी फिर उन पर टिकी, कई बार, बार-बार।

शो समाप्त हुआ। लोग चलने को तैयार हुये। सुपर्णा फौरन चल नहीं सकती थी। तय हुआ कि रंजन उसे घर पहुँचा देगा। रंजन ने वरेन सोम से कहा कि उसके परिचित एक सज्जन को अपनी गाड़ी में ले जायें। उनका घर रास्ते में ही पड़ेगा। रंजन के इस प्रस्ताव से वरेन सोम को मुँहमाँगा वरदान मिला। अपर्णा गाड़ी में पहले जा बैठी थीं। रंजन के प्रस्ताव के साथ ही वरेन उन सज्जन को बुलाते हुये अपर्णा के बगल में जा बैठे। तीसरे व्यक्ति किनारे। बड़ी गाड़ी में तीसरे आरोही को जगह देने के लिये इतना सटना जरूरी नहीं होता, पर वरेन सोम ने जहाँ तक संभव हुआ अपर्णा की ओर सट कर मेहमान के लिए जगह बनायी।

गाड़ी चली। अपर्णा को यह समझते जरा भी देर न लगी कि जो दबाव उन पर पड़ रहा है—वह परिवेश की मजबूरी का फल नहीं, इच्छाकृत है। बेहयाई की इस हद को देख खीझ और झुँझलाहट से भर गया उनका मन। फिर भी उन्हें आशा थी कि तीसरे व्यक्ति के उतर जाते ही यह दबाव ढीला पड़ेगा—वरेन सोम हट कर बैठेंगे। मगर ऐसा कुछ नहीं हुआ। लगा उन्हें होश ही नहीं कि बाईं ओर से कोई उतर भी गया। अगर किसी भी प्रकार संभव होता तो अपर्णा खुद ही हट जातीं—पर वे हट कर जातीं कहाँ?........फिर एक बार कन्धे पर उँगलियाँ कस रही हैं जान कर उनकी ओर आँखें तरेर कर देखा। ड्राइवर की उपस्थिति का ख्याल कर बोल न सकीं एक शब्द भी।

सुपर्णा जब घर लौटी तब रात काफी हो चुकी थी। उसने आते ही देखा, उसके पिता सामने वाले बरामदे में टहल रहे हैं। मुद्रा बहुत ही गंभीर है। उसे आश्चर्य हुआ। ऐसा तो होता नहीं। अपर्णा ने सुना सुपर्णा पिता से पूछ रही है, 'हमारा शो कैसा लगा पापा, आपको?'

उत्तर सुनाई दिया, 'बहुत अच्छा। औरों को भी अच्छा तो लगा, बेटी?'

बेटी का स्वर सुनाई दिया, 'हाँ पापा, बहुत। एक ने तो मेडेल भी डिक्लेयर किया।'

बेटी खा-पी कर जब कमरे में चली गई, पिता की चहलकदमी तब भी बरकरार थी। अगर इत्तफ़ाक से, सुपर्णा माँ के कमरे में जाती तो माँ के मुख की कठोर

रेखायें देख कर वह भी घबरा जाती। सुपर्णा के कमरे का दरवाजा बन्द हो गया। बत्ती बुझ गई।

सुपर्णा के कमरे की बत्ती बुझते ही बरामदे में चलते पाँव आगे बढ़े। अपर्णा के कमरे के आगे रुके। नहीं, कोई खास शब्द तो नहीं हुआ, पर अपर्णा को पता चल गया था। पता इसलिये चला था कि शाम से ही वे उसके लिए तैयार थीं।

खरामा-खरामा वे भी दरवाजे के करीब आईं। स्थिर दृष्टि से चौखटे के उस पार खड़े व्यक्ति को देखती रहीं। क्या देखा? देखा, उसकी दृष्टि से झलकता लोभ। और कुछ? हाँ, और भी देखा था। देखी थी उसकी नीरव आकृति। देखी थी, आशा। हो सकता है, कन्या के विवाह को सेतु बना उनके जीवन में पड़ी दरार के बुझने की क्षीण आशा। अपर्णा ने उस आशा का उत्तर दिया था। जो जवाब उनके मन में बहुत अर्से से उफन रहा था, उस रात उन्हें वह जवाब देने का मौका मिला था। उनकी आँखों से दृष्टि हटाये बिना ही दरवाजे से जरा पीछे हटी और उनके मुँह पर ही दरवाजे के पल्लों को बन्द कर सिटकनी चढ़ा दी थी अपर्णा ने।

इसलिये अपर्णा आज ध्रुव जानती थी कि वह अवश्य जायेगा।

उस शाम अपर्णा ने ख्याल रखा, बरेन सोम दफ्तर से कब वापस आये। खुद वक्त से तैयार हुईं। तैयार हो बरेन सोम के कमरे से होती हुई सीढ़ी उतर खड़ी टैक्सी में आ बैठीं। एक मिनट भी न बीता, बरेन सोम उतरे। टैक्सी में बैठे।

रास्ते में एक भी बात नहीं हुई।

होने वाले समधी-समधिन ने खूब स्वागत किया। अपर्णा ने सौजन्य से स्वीकारा। इधर-उधर की दो-चार बातों के बाद रंजन के पिता सुविमल बाबू ने आलोचना का प्रधान विषय उत्थापित किया। रंजन की इच्छा है, सनातन हो-हल्ला का वर्जन कर, कोर्ट में जाकर शादी करे। उन्होंने रंजन से कहा है कि शादी एक-तरफा घटना नहीं—कन्या पक्ष भी है। उस पक्ष की इच्छा-अनिच्छा की कीमत है। उस पक्ष की राय जाने बिना वे रंजन से सहमत नहीं हो सकते।

इस प्रकार के प्रस्ताव के लिए अपर्णा सोम तैयार नहीं थीं। सुविमल बाबू की बात सुनते ही उनका मस्तिष्क द्रुत गति से चलने लगा। अगर उनका मन मानता तो रंजन की इस इच्छा को सहर्ष स्वीकार लेतीं। पर, न जाने क्यों उन्हें यह बात बहुत अच्छी नहीं लगी। उन्होंने सप्रश्न दृष्टि से बरेन सोम को टटोला। मुस्करा कर पूछा, 'क्या कहते हो?'

बरेन सोम कुछ चिन्तित लगे। वे मगर कुछ सोच नहीं रहे थे, पत्नी को देख भर रहे थे।

पति को चुप रहते देख अपर्णा ने ही गर्दन घुमायी। इधर-उधर देखा। मुस्कराईं। सुविमल बाबू पर एक दृष्टि डाली। बोलीं, 'आपकी बात सुन कर ये

सकते में आ गये हैं। लगता नहीं कि इस बात पर राजी होंगे। हमारी यही एक औलाद है। बेटा तो बेटा, बेटी तो बेटी। हमारे भी कुछ अरमान हैं। आप रंजन से कहिएगा। जरूरत हो तो मैं उससे कहूँगी।'

सुविमल बाबू ने मुस्करा कर अपनी पत्नी से कहा, 'अब तो खुश हो ?'

महिला मुस्कराईं। लगा उन्हें यह सुन कर खुशी हुई। रंजन के पिता ने अपने मन की कही। बोले, 'आपने ही फैसला किया। मैंने आप पर किसी प्रकार से दबाव नहीं डाला। किसी नाजायज तरीके से आपको प्रभावित करने का प्रयास भी नहीं किया। हमारे बेटे की ख्वाहिश है कि शादी कोर्ट में हो, क्योंकि उसे शोर-शराबा पसन्द नहीं। उसकी माँ को यह पसन्द नहीं। इस पर माँ-बेटे में लड़ाई हो गई है। जब मामला मेरे सामने लाया गया, मैंने कहा, 'फैसला हम नहीं, कन्या पक्ष वाले करेंगे। वे जैसा चाहेंगे वैसा ही होगा।' सुविमल बाबू हँसने लगे। उन्होंने बताया कि उनके प्रस्ताव से रंजन राजी हुआ, क्योंकि उसका ख्याल है कि लड़की वाले [illegible] बात मान जायेंगे।

टैक्सी ड्राइवर पंजाबी। वय में बूढ़ा। उम्मीद है कि बंगला समझेगा नहीं। वरेन सोम ने ही पहला सवाल फेंका। व्यंग्य की सूक्ष्म मिलावट बोला, 'इतना कुछ कहा तुमने पर नकद तीन हज़ार वाली बात कैसे भूल गईं? क्या वह कुछ भी नहीं तुम्हारे लिये?'

अपर्णा भरी तो बैठी ही थीं। महज उन्हें तंग करने के लिये फ्रिज की बात उठा कर तीन-चार हज़ार की चपत जो लगवाई थी वरेन सोम ने, उसे वे भूल नहीं पा रही थी। बोली, 'अगर इन लोगों ने तीन हज़ार के लिये कहा तो बुरा क्या किया? मेरे पिता ने तुम्हारे पिता के हाथ में पाँच हज़ार पाँच सौ इक्यावन रुपये रखे थे किसी एक दिन।'

वरेन सोम की आँखों से चिनगारियाँ छूटने लगीं। बोले, 'वह और यह एक सा है?'

'नहीं, यह उससे कम है।' सड़क पर दृष्टि जमाये अपर्णा सोम ने धीरे से कहा। यह सड़क है। वे टैक्सी में हैं। इससे अधिक कुछ नहीं कहेंगी अपर्णा। वे सुलझे विचारों की महिला हैं। उनकी रुचि शालीन है। लेकिन बतायेंगी। खूब अच्छी तरह से, गिन-गिन कर बतायेंगी। गैरों के सामने फ्रिज देने की बात कह उन्हें जो परेशान किया है उसका जवाब, सेर का सवा देंगी वे। वरेन सोम पर निगाह डाले बिना ही अपर्णा को उनकी धधकती दृष्टि का अनुभव हो रहा था। उस धधकती दृष्टि के पीछे जो क्रूर अभिलाषा उछल-कूद मचा रही है, उसे भी अनुभव कर पा रही थी वे। गाड़ी में बैठे-बैठे ही एक बहुत पुरानी याद सामने आ गई। कुछ भी भूली नहीं हैं वे। भूल नहीं पातीं। घटना थी वरेन सोम की पशुता की। तीन महीनों की विच्छिन्नता के बाद उनकी एक कटु बात पर वरेन सोम में पलता पशु किस प्रकार जाग उठा था।

बहुत साल पहले की घटना है। सुपी ने बताया था कि उस दिन समीरण दत्त की सालगिरह है। बात यह हुई थी कि नन्हीं सुपी से उस दिन समीरण चाचा की रवीन्द्र जयन्ती पर बातें हो रही थी। बातचीत की दौरान में सुपी ने पूछा था, 'चाचा, तुम्हारी सालगिरह कब होती है?'

समीरणजी ने हँस कर प्रश्न किया, 'क्यों? जयन्ती-उत्सव मनायेगी क्या?'

जैसे भी हो, सुपर्णा ने तारीख का पता लगा ही लिया और उसे लिख भी रखा था। जिस दिन जन्मदिन था उस दिन सुपर्णा माँ से बोली, 'माँ, आज चाचा का जन्मदिन है। उन्हें कुछ देने का मन है मेरा। बोलो न, क्या दूँ?'

समीरण दत्त अपर्णा के शिक्षक रह चुके हैं। सुपर्णा के भी हैं। सुपर्णा के प्रस्ताव पर खुश हो समीरणजी के लिये नई धोती और अंगवस्त्र मँगवाया। दोपहर भर अपने हाथों से कई पकवान बनाये। उल्लास के ज्वार में बहती सुपर्णा लाल गुलाबों का गुलदस्ता खरीद लाई। वरेन सोम को यह पता न था कि गुलदस्ता माँ की इच्छा से आया है या बेटी के। उन्हें कुछ बताया नहीं गया था। वरेन सोम ने देखा था घर में क्या-क्या इन्तज़ाम हो रहा है। सुपर्णा से पूछने पर उसका कारण

पता चला था। समीरण दत्त की सालगिरह पर बने पकवानों में से जब शाम को उन्हें नाश्ता दिया गया तब उन्होंने थाली उठा कर ऐसा पटका कि वृन्दा ने भागते हुए आ कर अपर्णा से बताया था।

अपर्णा ने इसे वरेन सोम की ईर्ष्या जान अनदेखा कर दिया था। यह उन दिनों की बात है जब अपर्णा ने वरेन सोम की खुशी-नाखुशी की परवाह करना छोड़ दिया था। उतना ही नहीं, मौके दरमौके वे वरेन सोम पर अपनी अवज्ञा और अवहेलना जाहिर कर देती थीं। शाम को माँ-बेटी पकवान, उपहार और गुलदस्ता ले समीरणजी के घर गईं। दो-ढाई घण्टे बाद लौटीं। समीरण बाबू को सन्तुष्ट होते देख वे भी खुश-खुश घर आई थीं।

घर में पाँव रखते ही अपर्णा की आत्मा काँप गई। लगा दाँत-नाखून छिपाये कोई उनकी राह देख रहा है। सुपर्णा के हट जाते ही वरेन सोम उनके कमरे में आये। अपर्णा के कमरे में वरेन जब-तब नहीं आ सकते थे, आने के लिये कोई न कोई बहाना तलाशना पड़ता था। आँखों से चिनगारियाँ छिटकाते, दाँतों से मुस्कराते बोले, 'कैसा मना आई जन्म-जयन्ती? गुलदस्ता क्यों मँगवाया, जयमाल का गजरा मँगाया होता? बेटी को साथ ले जाने की क्या जरूरत थी?'

अपर्णा बोल न सकीं। मन में भरती घृणा उनकी आँखों में प्रकट होने लगी। देखती रहीं। एकटक।

'अच्छी नहीं लगीं मेरी बातें? इस तरह क्या देख रही हो?'

जहर उगल दिया अपर्णा ने। फुँफकार उठीं वे, 'जानवर देख रही हूँ, और क्या!'

बस फिर क्या था। जानवर ही उठ बैठा उस क्षण। जिस जानवर से वे इतने सालों से परिचित हैं उससे भी कहीं अधिक क्रूर, कहीं अधिक निर्मम।

उस वक्त वरेन सोम चले गये थे। निःशब्द चरणों से अधिक रात को आये। अप्रस्तुत अपर्णा पर अचानक धावा बोल दिया था आते ही। उस पाशविक शक्ति से जूझ कर जीत न पाई थीं अपर्णा। कुछ देर बाद नृशंस व्यभिचारी विजयी की तरह वापस चले गये थे। खून के स्वाद से परिचित बाघ जैसे फिर लौट आता है, उसी तरह अगली रात फिर आये थे। पर उस रात अपर्णा सजग थीं, सामना करने के लिये तैयार थीं। लेकिन इतनी तैयारी के बावजूद भी आक्रमण रोक न सकीं। पशु-शक्ति ही प्रबल प्रमाणित हुई। बाँहों में कस कर हड्डी-पसली चूर-चूर करने का प्रयास करता रहा वह पशु। जब कोई रास्ता न सूझा तब अचानक कस कर एक लात लगा पाईं। लात नाक पर लगी, खून बहने लगा। अपर्णा को मुक्ति मिली।

जिस तेजी से चोट खाया जानवर पकड़ता है, दुश्मन को ताकतवर देख भागता भी उसी तेजी से है। वह भी भागा था उस रात। फिर पलट कर कभी आया नहीं।

आज, बहुत सालों बाद, अपर्णा सोम को लग रहा है कि वरेन सोम की धमनियों का खून उसी तेजी से दौड़ रहा है।

आजकल अपर्णा सोम जो करती हैं सोच-विचार कर। जो कहती हैं वह भी सोच-विचार कर। न जल्दीबाजी में कुछ करती हैं, न उत्तेजित हो कुछ कहती हैं। कम से कम उनका अपना ऐसा ही ख्याल है। उनका यह भी विश्वास है कि उनके विकसित व्यक्तित्व के आगे वरेन सोम का व्यक्तित्व निष्प्रभ है। अपने उन्नत व्यक्तित्व को वे जाहिर नहीं करती फिरतीं, फिर भी उनका ख्याल है कि वरेन को इसका पूरा बोध है। उन्हें मालूम है कि गड़बड़ करने का फल कितना भयावह हो सकता है।

अगली रात छोड़, उससे अगली रात तैयार हो कर ही अपर्णा ने उस कमरे में पाँव रखे।

हाथ भर की दूरी में जा खड़ी हुई। वरेन पर आँखें रख स्पष्ट शब्दों में बोलीं, 'शादी में कुल जमा कितना खर्च होगा इसका हिसाब लगा रही थी। सुपी के पास जो थोड़े-बहुत जेवर हैं उन्हें छोड़ जेवर बनवाने में करीब छब्बीस हजार का हिसाब लगाया था। नकद के तीन हजार इसी में जोड़ा है। तुमने फ्रिज की बात उठा कर करीब साढ़े तीन हजार का खर्च बढ़ा दिया, चार हजार ही मान लो। करीब तीस हजार का हिसाब बैठ रहा है।'

वरेन सोम बोले नहीं। उत्सुक प्रतीक्षा में रहे कि असल प्रश्न सामने आये। उन्हें यह ठीक ही पता है कि अपर्णा खर्च का हिसाब बताने नहीं आई हैं।

व्यर्थ में वक्त बर्बाद करने की इच्छा नहीं। अत्यन्त धैर्य और शान्ति से अपर्णा का अगला प्रश्न उछला, 'इस हालत में, बेटी की शादी के लिये तुमने कितने पैसों का इन्तजाम रखा है?'

उस दिन, समधियों के सामने अपर्णा को नीचा दिखाने की आशा से वरेन ने अगर फ्रिज का बावेला खड़ा किया न होता तो आज अपर्णा यह सवाल पूछने यहाँ आई न होती। बेटी के बाप की हालत से वे खूब वाकिफ हैं। नौकरी के सहारे मान-प्रतिष्ठा के शिखर पर पहुँचने की आशा पर राख बहुत दिन पहले ही पड़ चुकी है। बहुत वर्ष पहले की उस घृण्य घटना के बाद से ही। बहुत-बहुत कोशिशों के बाद नौकरी बेशक रह गई, पर सर्विस रिकार्ड का ब्लैक मार्क जो लगा सो लग ही गया। वह धुल कर उजला न हो सका। फिलहाल अति साधारण मध्यम वर्ग के अफसर हैं। तनख्वाह भी मध्यमवर्गीय। किसी जमाने में जो उम्मीद रखते थे वरेन सोम खुद, या शादी से पहले जो आशा रखते थे अपर्णा के माता-पिता उसका कुछ भी पूरा नहीं हो सका। इस मँहगाई में गृहस्थी चला, बेटी के स्कूल-कालेज, नाच-गाने का खर्च पूरा कर उस मध्यमवर्गीय तनख्वाह से क्या बचता होगा, क्या नहीं यह अपर्णा खूब जानती हैं। इस आदमी ने अपर्णा के जीवन में जहर जरूर घोला है, पर अपर्णा ने वास्तव से आँखें नहीं फेरी। उन्हें पता है कि इनके पास पैसा रहना संभव नहीं। इस कारण उन्होंने इनसे कुछ पाने की उम्मीद भी नहीं की थी। उन्होंने यह [illegible]

निकाल दिया था कि सुपी की शादी में वरेन सोम कुछ देंगे। अभी उस दिन तक, यानी फ्रिज की बात उठने के पहले तक वे अपने पास जो है उसी के सहारे आगे बढ़ रही थीं। आगे भी ऐसा ही करेंगी। उनके माता-पिता को बड़ा क्षोभ था कि वरेन के हाथों पड़ अपर्णा को कभी सुख नहीं मिला। अतः उन्होंने इस दुःख को किसी हद तक सहनीय करने के इरादे से अपर्णा को आर्थिक सुरक्षा देने का प्रयास किया। और बेटियों को जो दिया अपर्णा को उससे कई गुणा अधिक दिया। पिता ने जो दिया अपर्णा ने बिना विरोध किये ले लिया। उन्हें पता था कि पैसों की कभी न कभी जरूरत होगी ही। बेटी की शादी तक ही यह नरकवास। वह काम होते ही वे अपनी मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करेंगी। मुक्ति की उस वास्तव स्थिति में रुपयों का सहारा जरूरी है।

फ्रिज के लिये जो तीन हजार रुपये चाहिये वह अपर्णा के लिये कोई मुशकिल नहीं। वे इतने रुपये आसानी से दे सकती हैं। फिर यह भी बात है कि फ्रिज लेना भी है गैर के लिये नहीं, अपनी बेटी के ही लिये। उसे भी खुशी होगी। उनको यह नहीं बुरा लगा कि फ्रिज लेना है, बुरा लगा है उन्हें नीचा दिखाने का यह हीन प्रयास। सिर्फ, हाँ सिर्फ नीचा दिखाने के लिये ही उस दिन यह प्रस्ताव किया गया था। आज वे यहाँ उसका जवाब देने आई हैं, इसीलिये आ कर पहले ही खर्च की बात उठाई।

वरेन सोम अपने मन की चंचलता को रोकने का लाख प्रयास करते रहे, पर उसकी छाया उनकी दृष्टि में दीख ही पड़ी। अपर्णा को लगा, उस दिन का वह लालच आज फिर छलक आया है, वरेन की आँखों में। पता नहीं, कितनी पत्नियाँ पति की दृष्टि में व्यभिचारी की दृष्टि देखने को अभ्यस्त हैं। अपर्णा सोम को मगर इसका अभ्यास है। उन्होंने पति के मुख पर स्थिर दृष्टि स्थापित की। उत्तर की प्रतीक्षा करती रहीं।

वरेन सोम ने कहा, 'कितने पैसों का इन्तजाम' से तुम कहना क्या चाह रही हो ?'

'समझने में दिक्कत हो रही है क्या ?'

'थोड़ी हो रही है।' जहर उगलते हुये वरेन सोम ने कहा, 'क्यों, क्या मैं जो दे न सकूँगा उसे देने क्या कोई उदार-हृदय सज्जन आगे बढ़ेंगे ?'

अपर्णा जानती हैं कि इस गन्दी चोट का असल उद्देश्य क्या है ? वरेन उन्हें चिढ़ा कर, कुढ़ा कर उन्हें क्रोधित करना चाहते हैं। जो सच ही उदार है; आकाश-सा, सागर-सा उदार उसको इस कीचड़ में घसीट घरेलू लड़ाई शुरू करना चाहता है। नहीं तो क्या इसे सच ही मालूम नहीं कि रुपये कहाँ से आयेंगे, कहाँ से आ रहे हैं ? पिता कितने रुपये कर गये हैं अपर्णा के नाम यह वरेन खूब अच्छी तरह जानते हैं। पिता की दी हुई इस आर्थिक सुरक्षा से वरेन को ही सबसे ज्यादा चिढ़ है।

अपर्णा बोलीं, 'यह तुम ठीक ही जानते हो कि जरूरत में मदद करने वाले उदार हृदय लोग आज भी दुनिया में हैं। लेकिन उनकी मदद लेने में तुम्हारी नाक

नीची हो या न हो, मेरी तो जरूर होगी। अनाप-शनाप बकने के बजाय जो पूछती हूँ उसका जवाब साफ-साफ दो।'

वरेन सोम हँस पड़े। जाहिर है, अपर्णा को उनकी हँसी निहायत बुरी लगी। क्योंकि उन्हें पता था कि आगे कैसे-कैसे व्यंग्य बाण छोड़े जायँगे। हुआ भी ऐसा ही, 'अरे हाँ, मैं तो भूल ही गया था, तुम तो खुद ही बहुत मालदार हो। तो फिर तुम मेरे पास क्यों आई हो? बेटी की शादी तुम कर रही हो या मैं?'

'मैं कर रही हूँ। लेकिन मैं देख रही हूँ कि यह बात तुम्हारे गले नहीं उतर रही है। बार-बार बाधायें सृष्टि कर और उस दिन फ्रिज की बात उठा कर तुम मुझे यही बताना चाह रहे हो कि बेटी मेरी ही नहीं, तुम्हारी भी है। अगर जिम्मेदारी लेने की हिम्मत रखते हो तो तुम्हारी इस बात को मान लेने में मुझे कोई एतराज नहीं।'

वरेन सोम की मुस्कराहट, उनकी दृष्टि और भी निर्लज्ज, और भी नग्न हुई। लगा कि यह मुस्कराहट, यह दृष्टि सहस्र जिह्वा बन दंशन करने का प्रयास कर रही है। एक नाम पर कीचड़ उछालने का मौका जो मिल रहा है बार-बार। कहा, 'बेटी तो बेशक मेरी है! हम जब समीरण के घर रहने गये थे तब नन्ही छह महीनों की थी, इस बात को न तुम नकार सकती हो न मैं। खैर, जो भी हो, तो यही तुम्हारी राय है न, कि अगर जिम्मेदारी लेने का साहस करूँ तो तुम मानने को तैयार हो? अगर मैं सारी जिम्मेदारी लूँ तो तुम यह शादी बन्द करोगी?'

अपर्णा सोम शान्त रहने का जी तोड़ प्रयास करती रही। पर घृणा और आक्रोश से उनका अंग-अंग काँपता रहा। उफ! इतनी नीचता! ऐसा यही नीच कह सकता है। साधारण आदमी के लिये इतनी नीचता संभव नहीं।

'नहीं। शादी खुपी कर रही है।'

'मुझे पता है कि शादी नन्ही के मन की है। नन्ही कर रही है क्योंकि तुम बढ़ावा दे रही हो। नन्ही के पास अक्ल नाम की कोई चीज है नहीं, इसलिये कर रही है, और मैं मना कर रहा हूँ इसलिये तुम आगे बढ़ उसे बढ़ावा दे रही हो।'

अब अपर्णा को मन माफिक कुछ कहने का मौका मिला, 'क्यों मना कर रहे हो तुम? क्या तुम कहना चाह रहे हो कि तुम्हारा वह विकास सिन्हा रजन से अच्छा है?'

'अच्छा? लाख गुणा अच्छा है। तुम्हें मालूम नहीं कितना अच्छा है वह। अगर मालूम होता तो तुम्हें भी खुशी होती। सुनोगी उसकी बात? सुनोगी कितना अच्छा, कितना असाधारण है वह?'

अपर्णा बोलीं नहीं। देखती रहीं। कितनी घृणा थी उनकी दृष्टि में, कितना रोष! लगा, यह दृष्टि कह रही है कि हर आदमी अपने मापदण्ड से ही तो औरों का विचार करता है। जो व्यक्ति विकास सिन्हा को इतना अच्छा कह रहा है, वह खुद कितना अच्छा है?

वरेन सोम के उच्छ्‌वास के ज्वार में भाटा आया। बोल न सके और आगे। व्यंग्य की जली-कटी सुनाना भी भूल गये। आहत पशु की मूक क्रुद्ध दृष्टि से देखते रहे।

चोट पहुँचाने का एक और मौका मिला अपर्णा को। वैसे ही शान्त-मृदु पर कठोर स्वर में बोलीं, 'तो तुम इस शादी की कोई भी जिम्मेदारी लेने को तैयार नहीं ?'

वरेन सोम की दृष्टि बदलने लगी। अपर्णा के मुख से दृष्टि हटा ली। माथे पर बल बढ़े। सोचते रहे। फिर बोले, 'तुम जब मान रही हो कि बेटी मेरी ही है तो उसकी शादी की सारी जिम्मेदारी मैं ले रहा हूँ। शादी अगर होगी तो रुपये मिल जायेंगे तुम्हें।'

जिम्मेदारी की बात अपर्णा ने फिर कभी कही नहीं। कहने से फायदा भी क्या होता ? बेकार बहस करने का मौका मिलेगा। फल यह होगा कि बहाना बना वचन देकर भी मुकर जायेगा। चुप रहना ही ठीक होगा। अपर्णा का चुप रहना वरेन को काँटे की तरह चुभता रहेगा। छब्बीस हजार के इस एस्टिमेट में अब तक कुल चार हजार रुपये दिये हैं। वह भी उस दिन नीचे वाले बैठक में सुनार से सामना हो जाने के कारण। एक कारण यह भी था कि उस दिन उस जगह पर इनके प्रिय पात्र विकास सिन्हा उपस्थित थे।

सुनार जेवर लेकर आया था। नौकर से वरेन सोम ने अपर्णा को बुलवा भेजा और खुद सुनार से बिल ले लिया। अपर्णा के नीचे पहुँचने के पहले ही वरेन सोम विकास सिन्हा को रुखसत कर ऊपर आ रहे थे। अपर्णा जब बने जेवर का वजन देख रही थीं तब वरेन एक बार फिर नीचे आये। नोटों का बण्डल अपर्णा के सामने रख फिर ऊपर चले गये। न एक शब्द कहा, न जेवरों पर एक निगाह ही डाली।

बस, यहीं तक। सारा ताम-झाम यहीं खतम। शादी को मुश्किल से चार-पाँच दिन बाकी हैं, पर रुपये पैसे के मामले में एकदम चुप्पी साधे बैठे हैं।

पाँच

चौके से निकल खाने वाला कमरा पार करती हुई सीढ़ी की ओर बढ़ते वक्त अपर्णा को लगा कि उनके पाँवों में सौ-सौ मन के पत्थर बाँध दिये गये हैं। जिस कमरे में दरवाजा बन्द कर सुपर्णा और उसकी सहेलियाँ गुल-गपाड़ा मचा रही थीं उस कमरे के किवाड़ खुले हैं। लड़कियाँ चली गई हैं! कमरे में सुपी बैठी है। सामने बैठा है विकास सिन्हा।

सुपी की पीठ थी अपर्णा की तरफ। विकास का मुख उनकी तरफ था। विकास का मुख मुरझा गया था। अपर्णा को देखते ही कुर्सी छोड़ उठ खड़ा हुआ। सुपर्णा ने मुड़ कर देखा। सामने खड़ी माँ को देख झेंप गई।

अपर्णा आगे बढ़ीं। सुपर्णा बोली, 'छुट्टी के मामले में ये पापा से कुछ कहने-पूछने आये हैं। घर पर हैं तो पापा?'

विकास की तरफ से आँखें हटा सुपर्णा पर दृष्टि रख अपर्णा बोलीं, 'यहाँ तू इसीलिये बैठी है कि मैं आकर बताऊँ कि तेरे पापा घर पर हैं या नहीं?'

अपर्णा के बात करने के तरीके में मिठास कहीं भी नहीं थी। सुपी ने स्थिति संभालने की कोशिश की। विकास से बोली, 'आप बैठिये, मैं देख कर आती हूँ।'

'कहीं नहीं जाना है तुझे,' अपर्णा ने कड़क कर कहा, 'हैं। ऊपर चले जाओ, विकास। कल आ तो रहे हो न?'

जिस लड़की की कल शादी है उसके पास गैर-मर्द को बैठे देख अपर्णा को बड़ा क्रोध आया था। उनके वाक्यों के अन्तिम वाले अंश में निमंत्रण का स्वागत न था, थी झेंप की घुमन। यह मानने को वे कतई राजी नहीं कि आज विकास अपने आफिसर से मिलने आया है। बेशर्मों के अलावा कोई इस तरह आता नहीं।

जो जवाब सुनने को मिला वह माँ-बेटी दोनों के कानों में ही अप्रत्याशित था। चोट खाया हुआ विकास दृढ़ स्वर में बोला, 'हाँ, अवश्य ही आऊँगा।'

आगे बढ़ा विकास। चंचल गति से सीढ़ी चढ़ने लगा। अपर्णा देखती रहीं। सुपर्णा भी।

सीढ़ी पार करता विकास जब दृष्टि के पार चला गया, सुपर्णा खिलखिला कर हँसने लगी।

विकास से अपर्णा जितना नाराज थीं उससे ज्यादा नाराज थीं अपनी बेटी से। सुपर्णा की ओर मुड़कर उसे एक फटकार बताई, 'चुप छोकरी! जब देखो तब खी-खी खी। ही-ही-ही। मरी, इतना हँसने का क्या हो गया है? क्या सुन रही थी तू इतने ध्यान से? क्या कहने आया है वह?'

फटकार का कोई असर न हुआ। सुपर्णा चुप न हुई। हँसती ही रही। वह

क्या सुन रही थी या विकास क्या कह रहा था, यह वह माँ से बताने का साहस जुटा न पा रही थी। सिर्फ इतना ही बोली कि आज विकास सिन्हा बड़ा अजीब लगा था उसे। उसे यह उम्मीद ही नहीं थी कि आज भी वह आयेगा। पापा के पास नहीं, आया है उसी के पास। देखते ही लगा कि उसकी हालत ठीक नहीं, बाल उलझे, आँखें लाल। लगता है रात भर सोया नहीं। उसे यहाँ देख उसकी सभी सहेलियाँ चकित हुई थीं, सबसे चकित हुई थी झुमुर। लेकिन विकास भी खूब है। किसी की तरफ ध्यान नहीं दिया उसने। लड़कियों के बीच से दनदनाता हुआ सुपर्णा के सामने आकर बोला, 'जरूरी बात है तुमसे। क्या तुम्हें फुर्सत होगी ?'

झुमुर विकास को पहचानती है। सुपर्णा की और सहेलियाँ भी उसे थोड़ा-बहुत जानती ही हैं। सुपर्णा और झुमुर ने ही मौके-दर-मौके और लड़कियों से उसका परिचय कराया है। विकास को देख सबके मन में ही खलबली मची कि क्या बात है, हम भी सुनें, लेकिन मन-की-बात मन में दबा सभी उठीं। और सभी चली गईं, झुमुर रुकी रही। इशारे से विकास ने उसे भी जाने को कहा। कहने का तरीका भी क्या ! इतने अधिकार से कहा कि लगा यहाँ का मालिक वह ही है ! जब सब लड़कियाँ चली गईं तब उसने सुपर्णा से वरेन सोम को पूछा। जब सुपा बता न पाई कि पापा हैं या नहीं तो वह बुड़बुड़ा कर कहने लगा कि छुट्टी के मामले में उनसे सलाह लेना था।

पता नहीं क्यों, उसकी हालत देख, आज सुपर्णा जरा भी कठोर नहीं हो पाई थी। बुरा-भला कह भी नहीं पाई थी उसे। इच्छा भी नहीं हुई कि उसे कुछ खरी-खोटी कहे या उसका मज़ाक उड़ाये। पता नहीं क्यों, बड़ी दया आ रही थी उस पर। सोचा था सुपर्णा ने कि शायद अपनी चोटों को सहलाने के लिये वह कहीं बाहर जायेगा, इसीलिये छुट्टी का इन्तज़ाम करने आया है।

जो भी हो, सुपी प्रतीक्षा करती रही। सोचती रही कि ऐसी कौन-सी जरूरी बात है जो उसे आज ही कहना है। ऐसा तो नहीं कि वह आज भी शादी रुकवाने की बात कहेगा ! तब तो मजा ही आ जायेगा। कुछ देर चुप बैठने के बाद विकास ने कहा, 'मुझे आज कुछ अच्छा नहीं लग रहा था, इसीलिये चला आया। सोचा, अगर....'

उससे आगे कहा न गया। सुपर्णा ने पूछा भी, 'अगर क्या ?'

विकास ने जवाब तो दिया ही नहीं, और अनमना हो अपनी चिन्ताओं में डूब गया। उसके बाद उसने जो दो-चार प्रश्न किये या जो दो-चार बातें कहीं उनका कोई मतलब नहीं निकलता। सुपर्णा 'हाँ' या 'नहीं' में उनका जवाब देती रही। उसे तो यही फिक्र खाये जा रही थी कि इस शख्स का दिमाग तो नहीं फिर गया कहीं। ऐसे वक्त माँ आ गईं।

माँ की आँखों में आँखें डाल, सरल मुस्कराहट से सुपर्णा बताने लगी, 'वह पूछ रहा था सारा इन्तजाम ठीक-ठाक हो रहा है कि नहीं ? पूछ रहा था कौन आया, कौन

नहीं। उसने यह भी कहा कि उसका ख्याल है भाभी ठीक-ठाक हो जायेगी, कोई अड़-चन नहीं आयेगी, फिर भी उसका मन बहुत परेशान हो रहा है।'

'क्यों भला ?'

'यह पूछने के पहले ही तो तुम आ गईं, मैं पूछ कहाँ पाई ? बेचारा यों ही इतना दुखी है, तुमने उसे इस तरह से डाँटा, बेचारा और दुखी हो गया ! न कहतीं तुम तो क्या बिगड़ जाता ?'

बेटी की बातों में विकास के प्रति छलकती सहानुभूति से अपर्णा जल-भुन गईं। बोलीं, 'जिस अदब से उसने मेरी बात का जवाब दिया, उसे सुन कर भी तू उसे दुखी कहेगी ?'

सुपर्णा फिर खिलखिला पड़ी, 'गई है माँ वह। सब जान-सुन कर भी अगर चोट पहुँचाओगी तो वह और कह भी क्या सकता है ?'

अपर्णा ने बेटी की आँखों में देखा। उन्हें पढ़ना चाहा। परिस्थिति कितनी गंभीर है इसकी जाँच करने लगी थे। जिस तरह दोनों कुर्सियाँ आमने-सामने पड़ी हैं, उनमें हाथ डेढ़ हाथ से ज्यादा दूरी नहीं। इतने पास बैठ कर वे ही बात करते हैं जो करीब बैठने के आदी हैं। अगर अनजान न होती सुपर्णा तो आज इतने करीब वह बैठ नहीं सकती थी। खास कर विकास के। अपनी बेटी के चरित्र से अपर्णा खूब परिचित हैं। जानती हैं कि वह क्या कुछ कर सकती है। अपर्णा ने अचानक ही सुपर्णा से पूछा, 'इस बीच इसके साथ कितनी बार मुलाकात हुई है तेरी ?'

सुपर्णा चौंकी। अचकचा कर बोली, 'सिन्हाजी से ?'

अपर्णा उसे देख रही हैं। उसकी आँखों से नजर नहीं हटाया उन्होंने। बोलीं भी नहीं। जानती हैं इस आकस्मिक प्रश्न के लिये सुपर्णा तैयार नहीं थी। तैयार होने को वक्त चाहिये उसे। सुपर्णा ने फिर पूछा, 'इस बीच मतलब कितने दिनों के बीच ?'

बेटी का हाल देख अपर्णा का सन्देह विश्वास में बदलने लगा। पिछले महीने भर से रंजन पार्टी के काम से बहुत ही व्यस्त है। अक्सर इधर-उधर चला जाता है। कई बार कलकत्ते के बाहर गया। दो-चार दिन बाद आया। अतः अपर्णा ने इसी समय-सीमा को लक्ष्मण रेखा मान लिया। कहा, 'पिछले एक महीने के बीच ?'

'एक महीना ?' सुपर्णा समझ रही थी, माँ ने एक महीने की बात क्यों पूछी, 'हाँ, दो-चार बार मुलाकात तो बेशक हुई है, मगर तुम उसके लिये चिन्तित क्यों हो ?'

'कहाँ मिलना हुआ ?'

'अरे, बस यहाँ-वहाँ, सड़कों पर......'

अपर्णा ने फुंफकार कर कहा, 'सड़कों पर ? और कहाँ ? कितने बार टैक्सी में गई उसके साथ ?'

राह चलते अगर ऐन बगल में टैक्सी रोक कर बुलाये तो क्या मैं सड़क पर खड़ी होकर सीन क्रियेट करूँ ? राहगीरों को हँसने का मौका दूँ ?'

क्रोध से अपर्णा का मुख लाल होने लगा, 'उसके हाथ होटलों में कब-कब गई थी ?'

'ओह, मम्मी ! तुम्हें कैसे समझाऊँ ? मैं कब जाना चाहती थी ? लेकिन अगर टैक्सी किसी होटल के सामने रुके तो मैं क्या कर सकती हूँ ? उतरती न तो क्या टैक्सी में ही बैठी रहती ?'

'पिक्चर कितनी बार गईं ?'

'एक बार भी नहीं । सच्ची मानो मम्मी, एक बार भी नहीं । उसने कहा तो कई बार, मगर एक बार भी मैं राजी नहीं हुई । और हाँ मम्मी, एक बात और, कसम ले लो, उसने मुझसे एक दिन भी शादी करने को नहीं कहा, और एक दिन के अलावा कोई बुरा बर्ताव भी नहीं किया ।'

हाय बेचारी सुपर्णा ! अपनी बातों के जाल में आप ही फँसी जा रही है । अपर्णा ने उसी धैर्य से पूछा, 'बुरा बर्ताव ? क्या किया था उस दिन ?'

हड़बड़ाई सुपर्णा । क्या कहे, क्या नहीं ? कहने लायक शब्द तलाशती रही । फिर बोली, 'अरे मम्मी, उस दिन न........वह जो लेक हाल में मेरा प्रोग्राम था न, उस दिन पता है क्या हुआ ? मेरा प्रोग्राम जब खत्म हुआ तब वहाँ के लोगों ने कहा कि आपके घर से कोई लेने आये हैं, टैक्सी में इन्तजार कर रहे हैं । मैंने सोचा रंजन होगा । आई । देखा टैक्सी में, यह महाशय यानी सिन्हाजी विराज रहे हैं । खैर, टैक्सी चली । उस दिन माँ मेरा प्रोग्राम बहुत अच्छा हुआ था । ये साहब बोले कि एकदम कण्डम हुआ था । गुस्सा आया मुझे, तो तड़ातड़ दो-चार बातें मैंने भी कह दीं । फिर सिन्हाजी एकदम सिंह हो गरजने लगे । बोले, 'अगर मैं बरेन सोम की बेटी न होती तो मुझे वे ऐसा बढ़िया नाच दिखाते कि मैं भी याद करती........' कहते-कहते सुपर्णा बीच में ही रुक गई क्योंकि उसे अपनी कही हुई बात का एक कदर्थ दिखायी पड़ा । शर्म से लाल होती वह मामला हाथ से निकल जाने के पहले संभालने की कोशिश करने लगी । बोली, 'उनकी बात पर जब मुझे गुस्सा आया तो मैंने भी खूब सुना दिया । मुझे नाराज होते देख बच्चू माफी माँगने लगे ।'

अपर्णा ने बेटी पर से निगाह क्षण भर के लिये भी नहीं हटाया था । उसी कठोरता से बोलीं, 'मुझे तूने यह सब पहले क्यों नहीं बताया था ?'

'तुमसे कहती मम्मी ? हाय राम, हिम्मत ही नहीं पड़ी, इधर कुछ दिनों से तुम्हारा मूड हर वक्त इतना उखड़ा रहता है, कहूँ कैसे ? और फिर एक बात और भी है । यह जो विकास सिन्हा है न मम्मी, वैसे महा जिद्दी है, अक्खड़ है, गंवार भी है, पर आदमी बुरा नहीं ।'

अपर्णा का धीरज खत्म हो गया । चिढ़ कर बोलीं, 'तो अब इस पर भी तेरी ममता उमड़ने लगी ?'

माँ के तीखे व्यंग्य का अर्थ समझ में आते ही सुपर्णा बिफर उठी, 'तुम तो मम्मी, पता नहीं कैसी होती आ रही हो दिनों दिन। मैंने कहा आदमी बुरा नहीं, और तुम्हें ममता उमड़ती दीखने लगी। तुमसे तो बात करना ही दुश्वार है। क्या मुझे मालूम नहीं कि यह रंजन की कानी उँगली के बराबर भी नहीं।'

माँ-बेटी के वार्तालाप का अन्त हुआ। कारण सीढ़ी में किसी की आवाज सुनाई पड़ रही है। विकास सिन्हा नीचे उतर रहा है। आ गया। माँ-बेटी के बगल से ऐसे निकलने लगा जैसे पहचानता ही न हो। उसे ऐसे जाते देख सुपर्णा को मजाक सूझा। बोली, 'सिन्हाजी, कल आ तो रहे हैं न ?'

होठों में बुदबुदाया विकास, 'हाँ आऊँगा। जरूर आऊँगा।'

चला गया। हँसती रही सुपर्णा। उसको हँसते देख अपर्णा का जी जल गया। एक क्रुद्ध दृष्टि विकास की पीठ पर और एक बेटी पर डाल अपर्णा आगे बढ़ सीढ़ी चढ़ने लगीं।

बेटी के चरित्र का यह हल्कापन अपर्णा को बहुत परेशान करता है। जब उन्हें बहुत क्रोध आता है तो यही लगता है कि हो न हो, बेटी का स्वभाव भी बाप पर ही गया है। जब वह बहुत छोटी थी तब उसे प्यार करते-करते अपर्णा की माँ कहा करती, 'बाप पर गई है लड़की, देखना कितनी भाग्यशालिनी होगी यह।' सुनते ही अपर्णा का जी जल जाता। यह कोई कहेगा नहीं कि नरेन सोम सुन्दर नहीं। आज इतनी उम्र हो जाने पर, इतने तूफानों का सामना करने के बाद भी कद-काठी पहले सी ही कोमल है, मोहक है। लेकिन यह श्री, यह कोमलता कितनी फरेबी है, यह तो अपर्णा ही जानती हैं, उनके विचार में, ढूंढने पर भी ऐसा गन्दा आदमी दूसरा नहीं मिलेगा। बेटी का नाक-नक्शा अगर बाप पर गया हो तो इसका क्या भरोसा है कि मन-बुद्धि भी बाप-सी कलुषित नहीं होगी ? इसी वजह से अपनी माँ की बात सुन अपर्णा का जी जल जाता।

बाप रे बाप ! कैसी-कैसी मुसीबतों का सामना करना पड़ा है इस लड़की के कारण। एक नहीं, दो बार। उन दिनों अपर्णा को बार-बार यही लगता कि इस बाप की बेटी ऐसी न होगी तो कैसी होगी। घटना उस जमाने की है जब सुपर्णा सत्रह साल की थी। नाच के स्कूल में एक शिक्षक थे। आयु में दुगने। सुपर्णा ने एलान किया कि वह उस मास्टरजी से शादी करेगी। नाच के स्कूल में अपर्णा भी जाती रहती थीं। इस घटना के चार साल पहले से सुपर्णा उस स्कूल की छात्रा थी। अपर्णा बेटी को छोड़ने-लाने, पहले तो रोज ही आतीं, बाद में कभी-कभी। स्कूल में अपर्णा ने इन मास्टरजी को देखा है। दुबले-पतले आदमी, कन्धों तक लहराते लम्बे बाल। सिगरेट-बीड़ी के लगातार सेवन से होंठ काले पड़ गये थे। स्कूल में उनकी इज्जत इसलिये होती थी कि उन्होंने किसी नामी गुरु से नाच सीखा था। पता नहीं क्यों, अपर्णा को वे कभी अच्छे नहीं लगे थे। हो सकता है, लड़कियों के स्कूल में पुरुष शिक्षक का होना ही उनके विराग का कारण हो।

उन्होंने जब सुना कि उनकी सत्रह साल की बेटी उस मास्टर से शादी करना चाहती है तब अपर्णा पर गाज गिरी। उन्होंने बेटी को डाँटा-फटकारा, डराया-धमकाया। स्कूल में मास्टर की शिकायत की। काम बना नहीं देख बेटी को उस स्कूल से हटा लिया, पर उससे भी कोई फायदा न हुआ। सुपी का कहना था कि बेचारे मास्टर का इस दुनिया में कोई नहीं। न माँ है न बाप। ऐसे बेचारे व्यक्ति से वह जरूर शादी करेगी। नहीं तो उसे देखेगा कौन? कौन अपनायेगा उसे? मजबूरी और अकेलेपन से परेशान होकर वह अगर आत्महत्या कर ले तो जिम्मेदारी किसकी होगी? नहीं, सुपर्णा कुछ नहीं सुनेगी, किसी की नहीं मानेगी। उसे अपने को उसकी सेवा में उत्सर्ग करना ही है। करेगी ही। उसे खूब अच्छी तरह मालूम है कि वह अगर उसका साथ नहीं देगी, अगर उसके साथ विश्वासघात करेगी तो हो न हो वह जरूर खुदकुशी करेगा।

पता नहीं कैसे इस घटना की बात सुपर्णा के पिता को भी पता चली थी। वैसे, उन्होंने ही अपर्णा के कानों में सबसे पहले यह सूचना पहुँचायी थी कि बेटी अलग-थलग लोगों से मिल-जुल रही है। लगता है, अपर्णा को चिन्तित देख उन्होंने अनुमान चाहे जो लगाया हो, पर इस तरह अपर्णा से सहानुभूति रखने के बदले वे एक-दम कठोर निर्मम हो उठे। कम-से कम अपर्णा को ऐसा ही लगा था। अपर्णा के कमरे के सामने खड़े हो नरेन सोम ने कहा था, 'क्या कमाल की आधुनिक बनाया है बेटी को! नाम के स्कूल में जब इतनी सुविधायें प्राप्त हैं तो तुम क्यों पीछे रहो? आगे से तुम भी जाकर उसी स्कूल में नाम लिखा लो। नाचना शुरू कर दो।'

अपर्णा ने फुंफकार कर जवाब दिया था, 'तुमसे यह कहते शर्म नहीं आई? तुम्हें तो खुश होना चाहिये कि तुम्हारी बेटी तुम्हारे चरणचिह्नों पर चल कर तुम्हारा नाम रोशन कर रही है। खुश तो तुम जरूर हुये हो, नहीं तो यहाँ कैसे आये?' लड़ाई की नौबत आ गई।

लड़ाई-झगड़े से शक्ति व्यय होती है, काम नहीं बनता। काम बनाने के लिये अपर्णा को समीरणजी की शरण में जाना पड़ा था। सुपर्णा का उन पर विश्वास है। वह उन्हें तब से जानती है जब वह छह महीनों की थी। तब से आज तक 'समीरण चाचा' ने उसका हर मौके पर साथ दिया। उसने जब जिस चीज के लिये जिद की, उन्होंने पूरी की। समीरणजी ने सुपर्णा को बुलाया। पास बिठा उसकी पीठ सहला, सिर पर हाथ फेर उसके आत्मोत्सर्ग करने की महान् भावना की प्रशंसा की। बोले, 'त्याग कभी खाली नहीं जाता। इसका फल देर हो, सबेर हो, मिलता ही है, और त्याग का फल कभी बुरा नहीं होता, सर्वदा अच्छा ही होता है।' उसके सामने ही उन्होंने अपर्णा से कहा कि बच्ची की बात में सार है। शादी अगर वह करना चाहती है तो हम उसकी शादी उसी से करेंगे, और बहुत जल्दी करेंगे। लेकिन एक बात है, उन्होंने सुपर्णा से कहा, 'तुम भी मानोगी इस बात को। हम तुम्हारे माता-पिता-चाचा

हैं। हमें जरा पूछ-ताछ तो करने दोगी ? आखिर शादी तो ऐसे होगी नहीं, इन्तजाम करना है। उन लोगों से बातचीत करना है।'

सुपर्णा मान गई। समीरण दत्त गये। हाल पता लगाया। फिर उदास हो परम स्नेह से सुपर्णा को दुबारा शान्त करने लगे। अपने साथ वे दो फोटो लाये थे। कलाकार के माता-पिता की फोटो थी एक। बूढ़े, विकल थे दोनों। दूसरा चित्र कलाकार की पत्नी और छोटे-छोटे दो बच्चों का था। अपुष्टि और बेचारगी के जीते-जागते चित्र थे दोनों। ये लोग किसी दूर गाँव में रहते हैं। पेट भर खाने का ठिकाना भी नहीं।

सुपर्णा का बुखार उतरा। उसका मन हल्का हुआ। लगा कि महानता की कैद से मुक्ति मिली उसे। आत्मग्लानि और विश्वासघात के डर से मुक्ति मिली।

अपर्णा लाल-पीली होकर बोली थी कि ऐसे दुष्ट को पुलिस के हवाले करना चाहिये। ऐसी सीख देना चाहिये कि आगे वह किसी को बरगला न सके।

समीरण ने मना किया। कहा, 'जरूरत क्या है झमेला बढ़ाने का ? बस, एक काम करना, नन्हीं को उस स्कूल में अब कभी मत भेजना।'

अपर्णा ने उनकी बात मान ली। उनका ख्याल था कि समीरण बाबू की कृपा से ही वे इस बार बेदाग निकल पाई हैं। नाच के स्कूल में उन्होंने सुपर्णा को फिर कभी नहीं भेजा। बहुत अधिक पैसे लगा एक महिला को ठीक किया। वे घर पर आकर सिखाने लगीं।

दिन बीतते गये। अगली घटना इसके तीन साल बाद की है। यह पहले वाले से और भी भयंकर, और भी परेशान करने वाली।

सुपर्णा तब बीस बरस की थी। कालेज में पढ़ती थी। नाच के प्रोग्राम करती, काफी प्रशंसा होने लगी थी उसकी। बहुत बड़े जलसों में तो नहीं पर छोटे और मध्यम आकार के जलसों में अकसर प्रोग्राम रहता उसका। इसी से वह इस तरह खुश थी, इतनी विभोर, कि इसी गुण के बल पर पृथ्वी-व्यापी यश प्राप्त करने की अभिलाषा पालने लगी। 'फैन लेटर्स' आने लगे हैं उसके पास। उस बार भी, वरेन सोम ने ही एक दिन अपर्णा को सुनाते हुये समीरणजी से कहा था, 'तुम लोग तो कविता के राज्य में विचर रहे हो, इधर, पता भी है कि नन्हीं क्या कर रही है ? किसके साथ मेल-जोल बढ़ा रही है ?'

ताज्जुब की बात यह है कि सत्रहवर्षीया सुपर्णा का प्रेम-प्रसंग वरेन सोम से ही पता चला था और यह नया वाला भी। दोनों ही बार उन्हीं के व्यंग्य-बाणों ने अपर्णा को सचेत किया, तत्पर किया। सुनने में आया कि किसी रईस के बेटे की गाड़ी में अपर्णा की बेटी अकसर सैर करती दिखाई पड़ती है।

सुपर्णा से जिरह करते ही बात खुली। उन दिनों वह सत्रह साल की बच्ची नहीं, बीस साल की जागरूक महिला है। उसका अपनी स्वतन्त्र स्थिति का बोध [illegible] है। पूछते ही स्वीकारा। उसने यह भी कहा कि नारी जाति सदियों से जिद [illegible]

पिटी राह पर चलती आ रही है वह उस पर चलने वाली नहीं। चलेगी भी नहीं। वह नया कुछ करेगी। जिसके साथ घूमती-फिरती है वह वंगाली नहीं, पर हिन्दू अवश्य है। व्यवसायी है। अपना मकान है, वैंक में पैसा है, आयु तीस के करीब है। कला का अनुरागी है। कई वार विदेश जा चुका है। उसने कहा है कि अगर उसे कलाकार पत्नी प्राप्त हो तो, विशेप उद्देश्य से, उसे ले, फिर विदेश जायेगा। पत्नी को प्रशिक्षण दिलवा कर और वड़ा कलाकार वनायेगा। विदेश में जव तक ख्याति-प्रतिष्ठा नहीं मिलती, अपने देश में तव तक कोई पूछता नहीं। मौके की तलाश में कई विदेशी प्रतिष्ठानों का पत्र भी लिखा गया है।

वेचारी अपर्णा! इसके वाद एक महीना कितनी परेशान रहीं वे, यह तो अनुमान किया ही जा सकता है। वात का खुल जाना सुपर्णा के लिये लाभदायक हो गया। अव उसे किसी वात की परवाह नहीं, छिपाने की जरूरत नहीं। अपर्णा ने देखा कि डराने-धमकाने का फल वुरा होगा, इसलिये उन्होंने मिन्नत-खुशामद का रास्ता अपनाया। कई दिन, नाराज होने के वदले रो दीं। पर सुपर्णा टस से मस न हुई। अतः अपर्णा को फिर समीरणजी की शरण में जाना पड़ा। अभी भी सुपर्णा समीरण चाचा का कहना मानती है, उन पर श्रद्धा और विश्वास रखती है। परीक्षा के दिनों में वे ही उसकी सहायता करते हैं। पर इस वार सुपर्णा ने उन्हें भी दो-टूक जवाव दे दिया। वोली, 'सुनो चाचा, तुम माँ से कह दो कि इतनी चिन्ता न करें। मैं कोई दुध-मुँही वच्ची नहीं। अपना भला-वुरा समझने की वुद्धि मुझमें है। माँ अभी तो रो-गा रही हैं, लेकिन देखना तुम, आगे चल कर उन्हीं को सव से ज्यादा खुशी होगी।'

अपने गंजे होते सिर पर हाथ फेरते हुये समीरणजी ने अपनी स्वाभाविक मृदुता से कहा, 'नहीं वेटी, तू दुधमुँही वच्ची क्यों होने लगी? तू तो सवसे वड़ी है। जानकार है। सारी सृष्टि की जननी है।'

समीरणजी ने उसे विरत करने की वहुत कोशिश की। न मानी सुपर्णा। जैसे माँ की डाँट-फटकार या आँसू-मिन्नत की परवाह न की थी, वैसे ही समीरण चाचा के तर्कों के आगे भी अडिग रही। उसे तव यह सव तर्क-वितर्क अच्छा क्यों लगता? उन दिनों वह तो वास्तव से वहुत दूर, इन्द्रधनुषी वादलों के साथ पंख फैला कर उड़ रही थी। अपर्णा हताश हो चली थीं।

भगवान् ने वचा लिया। हुआ यह कि अखवारों में लगातार एक विचित्र समाचार छपने लगा। समाचार था—शहर के वाहर वने किसी रईस के मधु-कुंज में होती रासलीला के विषय में। समाचारपत्रों ने लिखा कि इन रासलीलाओं में शहर के नामी-गरामी लोग शामिल होते हैं। सरकारी पदों पर आसीन वड़े-वड़े अफसर और करोड़ों में खेलने वाले व्यापारी इस लीला-कुंज के सदस्य हैं। उस भवन में वड़े घरों की वेटियाँ-वहुयें जाती रहती हैं। नाच-गाना, खाना-पीना वेहिसाव चलता रहता है। ये महिलायें अपनी खुशी से आती हैं, ऐसा कहा नहीं जा सकता, कई प्रकार के प्रलोभनों

और फरेबों में भूल कर जाती हैं वे। इस सब के पीछे यही उद्देश्य है कि लोभी अफसरों को रंगीन प्रलोभन दे उनसे काम निकलवाना। इन सबों का कर्णधार है अनैतिक व्यापारियों का एक गुट। समाचार छपने के बाद सम्पादकीय लेख और पाठकों के पत्र भी छपने लगे।

ऐन उन्हीं दिनों अपर्णा के नाम एक खत आया। खत लिखने वाले का नाम-पता उसमें था नहीं, पर उसका वक्तव्य बड़ा भयानक था। लिखा था, 'आपकी कन्या जिस व्यक्ति की गाड़ी में सैर करती है, जिसके साथ बड़े से बड़े होटलों में जा खाती-पीती है, वह व्यक्ति उस मधु-कुंज का एक सक्रिय सदस्य है। पत्र-लेखक बहुत खोज-बीन के बाद ही यह पत्र लिख रहा है। अपर्णाजी अगर अभी भी सावधान न हुई तो बेटी पर वज्र अवश्य टूटेगा। उस वक्त उसकी रक्षा करना किसी के वश का रोग न होगा।'

अपर्णा की आँखों के आगे अन्धेरा छाने लगा। काँपते हाथों से पत्र ले, काँपते चरणों से समीरणजी के पास पहुँचीं। किसी की समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करें, कौन-सा रास्ता अपनायें। अन्त में यही तय हुआ कि पत्र सुपर्णा को दिखाया जाये। शायद मान जाये। सुपर्णा ने पत्र देखा तो जरूर, पर पाँव पटकती बोली, जाल है। फरेब है। किसी ईर्ष्यालु व्यक्ति का काम है। वह ऐसा नहीं। नहीं हो सकता। मैं इसका एक शब्द भी विश्वास नहीं करती।'

समीरण बाबू ने कहा, 'हमें भी इस पर विश्वास नहीं। विश्वास हम करना भी नहीं चाहते। लेकिन मामला जँचवा लिया जाता तो सारे सन्देह मिट जाते। कारण, ऐसा गन्दा काम जो लोग करते हैं वे ढोल-बजा कर तो करते नहीं। सारी दुनिया की आँखों में धूल झोंक कर ही करते हैं। धूल झोंकने के दो-चार उदाहरण भी दे दिये उन्होंने। उदाहरण क्या दिये, अखबारों में पढ़े समाचारों को मिर्च-मसाला लगा कर सुनाया। कह सुन कर वे बोले कि सुपर्णा को दो-चार दिन बहुत सावधान रहना पड़ेगा। उस आदमी से मिलना-जुलना बन्द रखना पड़ेगा। समीरण बाबू जो भी जाँच-पड़ताल करेंगे उसका उसे पता न चले, ऐसे चुपचाप किया जायेगा। आखिरकार उसे पता चलेगा, तो बुरा नहीं मानेगा ?

सुपी ने फिर कोई एतराज नहीं किया। करे भी तो कैसे ? अखबारों में छपने वाली खबर को तो एकदम झूठ कह कर उड़ाया नहीं जा सकता न अपर्णा को यह समझते देर न लगी कि सुपर्णा चाहे कितना ही शोर मचाये, मन ही मन वह भी चिन्तित थी।

समीरणजी के एक प्रिय विद्यार्थी के पिता पुलिस में हैं। बिना नाम-पते का खत ले जाकर समीरणजी ने उन्हें पकड़ा दिया। पत्र को देख वे साहब बड़े खुश हुये। समीरणजी को बेफिक्र रहने का आश्वासन दे कर घर भेजा।

इसके बाद क्या हुआ, कुछ पता न चला। सिर्फ इतना ही पता चला कि सुपर्णा के कलाप्रेमी उपासक हवाई जहाज से विदेश चले गये, कब वापस आयेंगे

आयेंगे भी कि नहीं, यह कोई बता न पाया। जाने की जल्दी में वे अनुरागिनी कलाकार को फोन या पत्र से सूचना देना भी भूल गये।

अपर्णा का ख्याल है कि समीरण बाबू ने ही कुंजी घुमाई होगी कहीं। या ऐसा भी हो सकता है कि पुलिस आफिसर ने ही कलाप्रेमी की खबर ली हो। जो भी हो, अपर्णा को आज भी विश्वास है कि सुपर्णा अभी भी पहले जैसी ही है उसमें जरा भी बदलाव नहीं आया है। उसे जो भी जो कुछ भी कहता है, वह मान लेती है। अगर कोई उसे अपनी दर्द-गाथा का एक वाक्य भी सुनाता है तो वह पिघल कर बहने लगती है। अपने भले-बुरे की उसे न चेतना है, न ज्ञान।

इन्हीं कारणों से अपर्णा ने आज जब उसे विकास के आमने-सामने बैठे देखा तो वे बिगड़ गईं। विकास के प्रति सुपर्णा के मन में पलते सहानुभूति के अंकुर देख ज़ल-भुन गईं। वैसे सुपर्णा ने कहा है कि विकास रंजन की कानी उँगली के बराबर भी नहीं। अपर्णा इस मत से बिल्कुल सहमत हैं। फिर भी मन नहीं मानता। उन्हें आज भी इस संशय से मुक्ति नहीं मिली कि उनकी बेटी रंजन जैसे वर के योग्य प्रमाणित होगी या नहीं। उन्हें डर लगता है, जब सोचती हैं कि रंजन की आंखों से मोह का अंजन जब धुल जायेगा, तब उस तलवार की धार से लड़के की दृष्टि में सुपर्णा की कीमत कितनी रहेगी। खास कर उसका यह दोष कि वास्तव में वह कोई कीमत नहीं देती। होने वाली सास को रंजन ने बहुत आश्वासन दिये हैं, पर अपर्णा जानती हैं कि रंजन सौ फीसदी प्रैक्टिकल है। भावनालोक में विचरण करने वाला भावुक कलाकार नहीं।

रंजन की बात याद आते ही अपर्णा को अपने पर बड़ी खीझ हुई। इतना भूल जाती हैं आजकल कि हद नहीं। करें भी तो क्या, कहाँ-कहाँ दौड़ायें दिमाग अपना ? ....रंजन के घर फोन करना था, भूल गईं। देश की समस्याओं का समाधान कर देश नेता वापस आया कि नहीं, अभी तक पता न चला। उस वक्त कमरा खाली था, फोन करना आसान था, अब तो वहाँ वे बैठे हैं कमरा रोके।

दोतले पहुँचने के पहले अपर्णा ने इधर-उधर देखा। समीरणजी चले गये हैं। ....आ जायेंगे घूम-फिर कर। अपर्णा जो इतना चिन्तित रहती हैं, इतनी समस्याओं का सामना करते-करते टूटने लगती हैं, इस बात को एक वे ही जानते हैं, मानते हैं। अपर्णा ने ही मनुहार कर उन्हें घर भेजा है। आराम करने को कहा है। लेकिन इस वक्त उनके यहाँ न होने से अपर्णा अपने को बहुत ही असहाय, बहुत ही दिशाहीन पा रही हैं।

छह

सीढ़ी पार कर ऊपर पहुँचते ही अपर्णा ने देखा, बरामदे के पहले सिरे पर वर्धमान से आई मँझली ननद धीरा और बेलियाघाटा से आई छोटी ननद मीरा खड़ी हैं। दबी जबान से दोनों बहनें सलाह कर रही हैं। यह बहुत जल्दी स्पष्ट हो गया कि उनका मशविरा शादी के घर के काम-काज सँभालने वाला न था। उन्हें देखते ही दोनों चुप हो गईं। फिर धीरा आगे बढ़ी। मुखमण्डल अत्यन्त गम्भीर। मीरा पीछे-पीछे आई।

'भाभी, नाराज न हो तो एक बात कहूँ।'

अपर्णा जान गई कि जो भी कहना है इन्हें, वह उनकी तारीफ़ नहीं होगी। उनके ससुराल वालों ने आज तक कभी उनसे अच्छा कुछ कहा ही नहीं। आज भी जो कहना है इन्हें वह न मधुर होगा, न प्रिय। जवाब में उन्होंने धीरा से सीधे सपाट कहा, 'इस वक्त मेरा दिमाग ठिकाने नहीं। नाराज होने लायक बात कहोगी तो जरूर होऊँगी।'

विनम्रता धीरा के चरित्र का भूषण नहीं। बोली, 'मैं तो देख रही हूँ कि दिमाग तुम्हारा ही सिर्फ ठीक है। सुपर्णा अभी तक दिखाई ही नहीं पड़ी। तुम नाराज हो या न हो, मैं जो बात कहने चली हूँ, बात वह बुरी नहीं।'—मैं कह रही थी, कि यह जो हम दो बहनें शादी के एक दिन पहले ही आकर धमक आयेंगी, इसका तुम्हें पता ही नहीं था। भैया ने तुमसे कुछ कहा न था। हमें इस तरह अचानक यहाँ देख कर यह तुम ही हो जो शान्त रहीं। क्योंकि तुम्हें हमारी आने की आशा न थी। तुम्हें कहूँ एक बात, बुरा न मानना। बच्चों को ले आज मैं मीरा के घर बेलियाघाटा चली जाऊँ। हमारे लिये तुम जरा भी फिक्र मत करो। कल शाम को शादी के मुहूर्त के बहुत पहले ही हम आ जायेंगी। तुम्हारी बेटी की विदाई हो जाने के बाद ही हम फिर जायेंगी।'

तुम्हारी मर्जी। पर सारा इन्तजाम जब कर ही चुकी हो तो मुझे ताने क्यों दे रही हो? तुम्हें तुम्हारे भाई ने बुलावा दिया। सारी तैयारी भी वे ही कर रहे हैं। खुद बाजार जा कर सामान खरीद लाये हैं। रसोइया भी लगाया है अलग से। खाना बन रहा है। जरा देर जरूर होगी खाने में, इसके अलावा और कोई परेशानी नहीं झेलनी पड़ेगी तुम लोगों को।'

'देखो भाभी, गुस्सा मत दिलाओ। हम तुम्हारे घर खाने की लालच से नहीं आये हैं।' धीरा का धीरज खत्म हो रहा था। 'तुम्हें ताना किसी ने नहीं दिया। दोषी भी नहीं ठहरा रहा है कोई। मीरा और मैं अब तक तुम्हारी तारीफ ही कर रहे थे। तुम भूल रही हो कि हम भी इन्सान हैं। कितनी आस लगा तीन मील दूर दौड़ी गई पूजा करने। फिर यहाँ आई। क्या सिर्फ खाने? क्या हमें खाने को मिलता नहीं?'

धीरा का गला भर आया। आँसू छलक पड़े। जाने के लिये मुड़ी वह।

'सुनो!'

धीरा के पाँव अपने आप ठिठक गये। पलट कर देखा उसने।

'तो तुम दोनों जा रही हो?'

देखती रही धीरा। आँसू छल-छलाती आँखें दिप-दिपाती रहीं। बोलने का प्रयास किया उसने, पर कुछ कह न सकी।

अपर्णा का मुख, उनकी बातें जितनी शीतल उतनी ही संयत। बोलीं, 'तुम्हारे भैया का इरादा था, सिर्फ मुझे परेशान का। मेरा अपमान करने का। तुम दोनों अगर आज चली जाओगी तो उनकी इच्छापूर्ति में चाँद लग जायेंगे। अगर यह शादी किसी तरह न हो तो वे और भी खुश होंगे। अगर भाई के साथ सहयोग करना है तो जाओ। कल आने की तकलीफ करने की कोई जरूरत नहीं।' कह कर अपर्णा रुकी नहीं। दनदनाती हुई अपने कमरे में चली गईं। धीरा-मीरा पथराई-सी खड़ी देखती रहीं।

अपने कमरे में जा अपर्णा फर्श पर बैठ गईं। कान जल रहे हैं। आँखें जल रही हैं। दिल-दिमाग फुँका जा रहा है। अंग-अंग में आग लगी हुई है। लग रहा है अग्निकुण्ड हो गई हैं वे। साधारण स्त्रियों की तरह अपर्णा अगर फुक्का फाड़ कर रो सकतीं तो शायद कुछ शान्ति मिलती। जी कुछ हल्का होता। पर यह उनसे होता नहीं।

किसी दिन भी जो हल्का करने के लिये रो न सकी थीं वे।

यह आग आज बाईस वर्षों से उनके अन्दर जमा हो रही है। जमते-जमते आग्नेयगिरि हो गई हैं वे।

बाईस साल पहले, शादी से पहले, सत्रह साल की एक लड़की फफक-फफक कर रोई थी। शादी कर उससे उसके माता-पिता छुटकारा पाना चाहते हैं, सोच उन पर क्षुब्ध हुई थी। लेकिन आज क्या वे कसम खा कर कह सकेंगी कि उन आँसुओं

उस क्षोभ के नीचे किसी तुष्टि की सम्भावना न थी ? न था कोई कौतूहल, न थी रोमांच की हल्की-सी रेखा ?

थी। शादी जब हो ही रही है तो उसके लिये मानसिक प्रस्तुति भी चलती रही, क्षोभ और मान के साथ-साथ। यह वही प्रस्तुति थी जो अनादि काल से नारी की नाड़ी में बहती आ रही है। इस शादी में ईश्वर की इच्छा भी खूब बरतो थी। नये जीवन की सूचना के साथ उसे प्रादर निमंत्रित कर लाया जा रहा है। और लड़कियों के लिये घर-वर की तलाश की जाती है, इसकी तलाश में घर हो आता है। वर की मौसी, माता-पिता, दूर-पास के तमाम रिश्तेदार बार-बार आकर लड़की देख पसन्द कर गये हैं। अन्त में दोस्तों-परिजनों से वेष्टित हो वर स्वयं आया। सत्रह साल की वह बालिका क्या नजर उठा कर देख पायी थी ? देखा हो या न हो, पता सभी कुछ था। तेईस-चौबीस साल के उस नवयुवक की दृष्टि की सीमा-रेखा से अपने को मुक्त करने की चेष्टा में बेचारी लड़की पसीना-पसीना हो गई। अपर्णा का देखना शुरू हुआ था, वर और उसके दोस्तों के जाने के बाद। तब तब एक नवयुवक का मुस्कराता मुख आँखों के आगे नाच जाता। जो एम॰ एस॰ सी॰ पास है। अच्छी नौकरी करता है। देखने में सुन्दर है। सुन्दर ही नहीं बुद्धिदीप्त है, जिसकी दृष्टि मुग्ध है, मोहक है।

मुग्ध ? अपर्णा को हर छोटी से छोटी बात याद है। इसलिये उन्होंने इस शब्द को अपने शब्दकोश से बहुत पहले ही छाँट दिया है। मुग्ध नहीं, ललचाई दृष्टि। आज अपर्णा इस बात को समझती है पर उस दिन की सत्रह वर्षीया अपर्णा इस भेद को पकड़ न पाई थी, क्योंकि उस सुन्दर, दीप्तिमय मुख की आड़ में अनेक गन्दगी छिपी थी। सत्रह साल की वह लड़की बेवकूफ थी। किसी को मोहने लायक रूप ईश्वर ने उसे दिया नहीं था। सेहत अच्छी थी और प्रथम यौवन का लावण्य था, इस कारण उस युग के युवकों की दृष्टि कहती, 'बुरी नहीं है यह लड़की।' अगर यह लड़की, चालाक होती तो उसी वक्त उस दृष्टि को सही-सही पढ़ कर उसका अर्थ समझ लेती।

शादी की रात को बहुत देर करीब बैठे-बैठे परेशान होती रही वह। कोहबर में उपस्थित बहनों-भाभियों की भीड़ में भी वह देख रही थी आँखों का एक जोड़ा उसे रह-रह कर घेर रहा है। हिलते-डुलते ही एक पुरुष स्पर्श से हाथ, कन्धा या घुटनों में काँटे खड़े हो रहे थे। कई बार तो उस चोरी का यह स्पर्श अत्यन्त अशोभनीय लगा था।

फिर बासरात्रि। मिलना नहीं होता उस रात।

तीसरी रात। सुहागरात। शुभ-रात्रि कहते हैं इसे। सत्रह साल की उस बालिका के लिये वह रात्रि न तो सुहाग की थी न शुभ। उसके लिये वह थी विभीषिका-मय एक कभी न खत्म होने वाली रात। नये परिवेश में नये लोगों के बीच उसे उस दिन अच्छा ही लग रहा था। कितने लोगों का आना-जाना, [illegible]

शाम वहुत अच्छी बीत रही थी। परिवेश का आनन्द-मुखर कोलाहल उसके मन को भी रंगीन वना रहा था।

फिर ? फिर न जाने क्या हो गया कि सत्रह साल की वह लड़की वेसुध सी होने लगी। कमरे में आ जव मुस्कराते हुये चौवीस वर्ष के उस सुन्दर नवयुवक ने खिड़कियाँ दरवाजे वन्द करने शुरू किये तव तक वह चिन्तित नहीं हुई थी। उसके वाद....?

उसके वाद ही सुन्दर मुख का मुखौटा चीरता एक वहशी वाहर आ गया। उस लड़की को लगा कि एक निर्मम दस्यु ने उस पर धावा वोल दिया। देखते-देखते अपर्णा के सारे आवरण उतारे-विखेरे जाने लगे। कमरे की तेज रोशनी वाली वत्ती तभी भी जल रही थी। वेचारी लड़की सारी ताकत से प्रतिरोध करती रही। फल यह हुआ कि उस वहशी के ताकतवर हाथों के खिचाव से नया ब्लाऊज तार-तार हो कर झूलने लगा। उसे लगा कि सिर से पाँव तक उसका अंग-अंग नोचने-दवोचने की वस्तु है। दर्द से कराहती रही, छटपटाती रही, मुक्त होने का प्रयास करती रही। पर वेचारी न मुक्त हो सकी, न सहायता के लिये चीख सकी। वहशी के दाँत उसके होंठों को दवोचते-नोचते रहे। उसे लगता रहा, उसकी हड्डी-पसली का चूरा हुआ जा रहा है, और अन्त में जिस प्रचण्ड पीड़ा का सामना करना पड़ा, उसका विवरण देने लायक भाषा उसके पास थी ही नहीं। पीड़ा से, भय से अचेत पड़ी रही अपर्णा, फिर भी उसे दया नहीं आई। सुवह होने तक चलता रहा ताण्डव।

सत्रह वर्ष की एक लड़की ने पहली रात से ही अपने यौवन साथी को भय की दृष्टि से देखा। विभीषिका का प्रतीक समझा। उसे निर्मम-निर्दय जाना। रात के आतंक की याद शाम होते-होते आ जाती और जी चाहता घर-द्वार छोड़, लाज-लज्जा त्याग भाग खड़ी हो। दिन भर जो मुख इतना मोहक लगता, रात को वही मुख भयावह जान पड़ता। ललचाई आँखें उसे चाटती सी लगतीं। लगता वह रात्रि की प्रतीक्षा में प्रहर गिन रहा है। कव रात होगी, कव उसका कचूमर निकालेगा।

इसी का नाम शादी है ? इसी के लिये इतना तामझाम ? इतनी धूम ? इतना उत्सव ? विद्रोह करना चाहती उस सत्रह वर्षीया की आत्मा। अपने माता-पिता, सास-ससुर को ध्यान से देखती। वार-वार ही उसे लगता कि उसके हिस्से में आया मिलन और जो हो, विवाह नहीं। औरों को जो मिला है उसे वह नहीं दिया गया। उसके साथ धोखा हुआ है। उसे कुछ ऐसा दिया गया है जो नियम नहीं, व्यतिक्रम है। वह व्यतिक्रम क्या है, क्यों है यह उसे पता लगाना है। तलाशती रही, पर पता न लगा।

लगा था। लगाने में सहायक वनी थी मँझली ननद धीरा।

धीरा अपर्णा से साल भर छोटी है। लेकिन वुद्धि व जवान की तेजी में अपर्णा से कहीं ज्यादा परिपक्व। भाभी के साथ लड़ती भी जितना, दोस्ती भी उतना ही रखती। अपर्णा की शादी के कुछ महीनों वाद उसी ने रहस्य का पर्दा उठा दिया था।

उसका भी क्या दोष ? ऐसी गरमागरम बात वह कब तक सीने में छिपाये फिरती ? बहनों से भाई अगर मधुर व्यवहार करते तो भी बात थी, पर भाई तो हरवक्त डांट फटकारता, गलती निकालता रहता। कभी-कभार हाथ भी छोड़ देता।

घीरा ने ही एक दिन भैया को झटपट शादी करने का कारण स्पष्ट किया। 'रहस्य और कहीं नहीं, बगल वाले मकान में है। मकान नहीं, मकान में रहने वाली एक लड़की। ब्राह्मण परिवार। ब्राह्मणों की बेटी। जो लड़की शादी के बाद महीनों बाद पहली बार पीहर आई है। कमरे की खिड़की से अपर्णा ने उसी दिन देखा थी है। बड़े ध्यान से अपर्णा उसे देख रही थी। ताज्जुब की हद तो तब हुई जब उसे देखते देख पति ने बे-मतलब ही झिड़क दिया था।

अपनी खिड़की पर खड़ी हो कर बगल वाले मकान की ओर देखने में क्या बुराई है, अपर्णा समझ नहीं पाई थी। पलट कर, विस्मय से देखा। अपर्णा ने देखा था, उस दिन सुबह से ही उसका पति अकारण ही चंचल हो रहा था। झुँझला रहा था। अपने घर के बरामदे में खड़ी उस लड़की को बार-बार अपनी खिड़की की ओर देखते भी पाया था। इससे, कई बार अपर्णा की ओर उसकी आँखें मिली भी थीं।

बगल वाले मकान की वह लड़की अपर्णा से कुछ बड़ी, यानी करीब बीस साल की थी। अपर्णा उससे कहीं सुन्दर, कहीं गोरी। लेकिन एक महान् सम्पद की अधिकारिणी है वह। उसके बाल खूब घने, खूब लम्बे हैं। बैठती है तो जमीन पर लोटते हैं। स्वास्थ्य अच्छा है। लम्बी भी है। दृष्टि में दीप्ति है। घीरा ने बताया है कि उसका नाम स्मृति है। पहले स्मृति चटर्जी थी अब स्मृति चक्रवर्ती है।

दोपहर को आँखें नचाती हुई घीरा अपर्णा के कमरे में आई। बगल वाले मकान की ओर इशारा करके पूछा, 'क्यों जी भाभी रानी, कैसी लगी ?'

उन दिनों अपर्णा की आयु सत्रह साल कुछ महीने थी, पर पिछले दिनों के अनुभवों के कारण मानसिक रूप से वह काफी बड़ी हो गई थी। एक बात यह भी, कि शादी क्या है, इस पहेली को सुलझाने के प्रयास ने उसे अचानक ही प्रौढ़ बना दिया था। इसलिये घीरा के इस अटपटे सवाल से उसके दिमाग में सरसराहट हुई। वह चौकन्नी हो घीरा को देखने लगी।

'क्या देखने को पूछ रही हो बीबी ?'

'उस मकान की स्मृति देवी को।'

'स्मृति देवी ?'

क्या बना-बिगड़ा यह बताने को धीरा तैयार नहीं। आई थी मजाक करने, चुटकी बजा हँसने ! यहाँ भाभी ने एक ही सवाल से, मामला खत्म कर दिया। धीरा ने और कुछ भी नहीं कहा। चार दिनों तक लगातार मनुहार करना पड़ा अपर्णा को, तब कहीं उसने फिर मुँह खोला। दाई को चुपके से बाजार भेज धीरा के पसन्द की चटपटी चीजें मँगानी पड़ीं। दोपहर को चोरी से धीरा को बुला उसे खिलाना पड़ा। साथ ही पति की हर कार्रवाई पर तीक्ष्ण दृष्टि रखा अपर्णा ने। परिवर्तन तो उसमें अवश्य दिखाई दिया। चाल-चलन में स्पष्ट ही अनेक परिवर्तन। हर वक्त चंचल ! बे-मतलब इधर-उधर चक्कर काटना। मौके-दर-मौके चौंक कर उस मकान को देखना।

कुछ कहने के पहले धीरा ने भगवान् के नाम कसम धरवायी कि अपर्णा किसी से कुछ कहेगी नहीं। आदमी-आदमजाद किसी को इस बात की भनक नहीं लगेगी। भैया को अगर पता चलेगा तब तो अनर्थ ही हो जायेगा। और फिर मामला जब रफा-दफा हो ही गया है तो फिर क्यों गड़े मुर्दे उखाड़ना ?

अपर्णा के आगे सारी बात साफ हुई। बरेन के माता-पिता को लड़के की शादी करने की ऐसी जल्दी क्या आ पड़ी थी ? साथ ही और भी कई बातों का अर्थ स्पष्ट होने लगा। अपर्णा की शादी से पहले कन्या पक्ष से भी अधिक जल्दी वरपक्ष को क्यों थी ? उन्होंने कहा था, लड़की उन्हें बहुत पसन्द है। यह बात सच नहीं। सच बात यह है कि लड़के की बौराई मति पलटवाने के लिये वर पक्ष को बहुत ही जल्दी एक सुन्दर और स्वस्थ कन्या की आवश्यकता थी। जरूरत इतनी अधिक थी कि ज्यादा बीनने-चुनने की भी फुर्सत न थी।

कारण ? कारण थी बगल वाले मकान की स्मृति। स्मृति चैटर्जी ने जो अभी स्मृति चक्रवर्ती है, भैया के मन-प्राण पर अधिकार विस्तार करने का निश्चय किया था। निश्चय क्या किया था, विस्तार कर ही लिया था। छुट्टी के दिन अक्सर दोनों सुबह से गये रात तक गायब रहते। मुहल्ले के विभिन्न लोगों ने उन्हें न जाने कहाँ-कहाँ देखा है। इस घर में धीरा की माँ सिर पीटती रहीं, रो-धो कर आसमान सिर पर उठाती रहीं। पिताजी ने भौंहें सिकोड़ीं, नाराजगी जाहिर की, पर कोई फायदा न हुआ। स्मृति के घर वालों का भी एक सा ही हाल था। स्मृति अपने माता-पिता की इकलौती सन्तान है। पिता की आँखों में तकलीफ है, दिखायी नहीं पड़ता। माँ तो खैर माँ ही है। कालेज में पढ़ने वाली तेज-तर्रार बेटी को रोकने का साध्य उनमें है नहीं। इधर का बेटा, उधर की बेटी, कोई संभाले न संभले। बीच से दोनों ओर के माँ-बाप एक दूसरे को दोषी ठहराते रहे। लड़के वालों ने लड़की को दुष्ट और उसके माँ-बाप को नाकारा बताया। लड़की वालों ने अपनी बेटी को पुष्प सी निष्पाप और लड़के को लफंगा कहा। दोनों तरफ के माँ-बाप लड़ते रहे, मगर मजे की बात यह है कि जिनके कारण यह सब हो रहा था उन्हें जरा भी फिक्र नहीं। उनका घूमना-फिरना बन्द न हुआ। बन्द न हुआ खतों का आना-जाना।

मजे की बात यह है कि धीरा के भैया खुद ऐसे हैं तो क्या, दूसरों के मामले

में पूरे दकियानूसी और सचेत। डाँटने-मारने को हर वक्त तैयार। मुहल्ले में रहने वाली एक गरीब लड़की के साथ धीरा की खूब मेल-मुहब्बत थी। बेचारी के पिता नहीं हैं। माँ और बड़े भाई के साथ रहती थी। एक बार क्या हुआ कि माँ-बेटी दोनों एक साथ बीमार हो गईं। धीरा को पता चला तो माँ से पूछ कर वह रोज उनके घर जाने लगी। अपने हाथ खाना भी बना दिया करती। उन्हीं दिनों सुशीला के बड़े भाई से उसका परिचय हुआ। एक दिन धीरा सड़क पर उससे बात कर रही थी। बात क्या, बीमारों का हाल पूछ रही थी। भैया उधर से गुजर रहे थे। इन्हें बात करते देख उन्होंने सोचा कि हो न हो मामला गड़बड़ है। धीरा के घर आते ही इतना मारा, इतना मारा कि हद नहीं। भैया जब मारने लगे तो धीरा पहले समझ ही नहीं पाई कि क्यों मार पड़ रही है। जब समझी तब उसे बहुत गुस्सा आया। उसने कहा, 'अपनी तरह बेशर्म समझ रखा है सबको? तुम्हें घर की नाक कटवाते, जगहँसाई करवाते शर्म नहीं आती? तुम चले हो दूसरे पर लानत-मलामत करने। डूब मरो तुम!'

बस उस दिन से भैया को ऐसी सीख मिली कि उसे फिर कभी नहीं छेड़ा।

लेकिन भैया में कोई सुधार तो आया ही नहीं, बल्कि बेशर्मी बढ़ती गई। पानी जब गले तक आ गया, तब स्मृति के अन्धे पिता ने दूसरे शहर में रहने वाले अपने बाल्यर भाई को बुलाया। वे काफी दमदार आदमी हैं। वे यहाँ आकर महीने भर रुके और उसी दरम्यान में घर खोज सामान जुटा स्मृति की शादी कर दी। स्मृति की ससुराल कलकत्ते से दूर, उत्तर बंगाल के किसी छोटे शहर में है। धीरा का ख्याल है, स्मृति का दूल्हा शरीर का मोल-पटोल नहीं, अक्ल का भी मोल-पटोल है। किसी स्कूल का एसिस्टेन्ट हेड मास्टर है। दिन भर स्कूल में पढ़ाता है और आगे-पीछे कोचिंग क्लास चलाता है। स्मृति को भला वह भायेगा? राम कहो! यह सब धीरा को मँझले भैया और छोटे भैया ने बताया है। जो भी हो, स्मृति की शादी के दिनों में भैया का हाल देखने लायक था, जैसे जंगल के शेर को पिंजड़े में बन्द किया गया हो। हर वक्त गरजना। हर वक्त फुफकारना। शादी के तीन दिन पहले तो महाकाण्ड मचा। भाग चलने का षड्यंत्र कर भैया ने स्मृति को खत भेजा। और तकदीर की मार देखो, वह खत मिला स्मृति के बाल्यर चाचा को। नतीजा भी क्यों नहीं? स्मृति का घर से निकलना मना हो गया था। वे लोग हर वक्त उस पर निगाह जमाये बैठे थे। खत लेकर वे सज्जन यहाँ आये। क्या कहा, क्या नहीं....! ऐसा लगा कि मामला कोतवाली तक न पहुँच जाये।

जैसे-तैसे स्मृति की शादी तो हो गई। इधर भैया तड़पते-फड़कते रहे। स्मृति ससुराल चली गई। दस दिन बाद द्विरागमन में आई। दो दिन रह कर फिर चली गई। फिर नहीं आई। सबने चैन की साँस ली। चलो, बला टली। लेकिन दो महीने भी न बीते कि भैया के रंग-ढंग बदलने लगे। दौरे का बहाना बना भैया अक्सर गायब रहने लगे। काम से जाने की बात कहने पर किसे शक होगा? कौन मना करेगा?

फिर सुनने में आया कि स्मृति के साथ पत्र-व्यवहार चल रहा है। एक खत माँ के हाथ लगा। माँ को सन्देह पहले भी था। पत्र पढ़ कर पता चला, भैया स्मृति के निर्देशानुसार उससे मिलने जाते हैं। इस पर भी बहुत वावेला मचा। स्मृति के घर पर भी पता चल गया। स्मृति के अफसर चाचा ने भैया के नाम रजिस्ट्री से अदालती चिट्ठी भी भेजी थी।

घर पर रोज-रोज झमेला होने लगा। इस वार धीरा की माँ रोई-धोई नहीं। उन्होंने आत्महत्या करने का निश्चय कर लिया। करेंगी ही करेंगी। वेटे ने तब हार कर शादी की रजामन्दी दी। आत्महत्या टल गई। जल्दी-जल्दी लड़की देखी जाने लगी। अपर्णा दिखते ही वात पक्की हो गई।

यह सब सुनते अपर्णा को कैसा लगा, सुन कर उसमें कौन सी प्रतिक्रिया हुई, यह धीरा को मालूम नहीं। पूरी बात वता धीरा ने हिदायत दी, 'याद रखना भाभी, तुम पर अब दोहरी जिम्मेदारी है। देखना-भैया की निगाह तुम पर से जरा भी न हटने पावे। हटी कि मामला सब गुड़ गोवर हो जायेगा।'

सत्रह साल सात महीने की अपर्णा उस दिन सत्ताईस की हो गई। उसे लगा, उसे वलि का वकरा वनाया गया है। किसी के विकृत चरित्र को सुधारने के लिये उसका वलिदान किया गया है। उसे और भी कई वातों का अर्थ मिलने लगा। उसे देखने गये थे जब वरेन सोम तब उसे लगा था कि उनकी दृष्टि मुग्ध है। अव लग रहा है कि वह दृष्टि मुग्ध नहीं लोलुप थी। शादी के वाद के वहशीपन का कारण भी स्पष्ट होने लगा है। स्मृति की प्राप्ति में वाधा और व्यर्थता के कारण ही अपर्णा के प्रति इतनी निर्ममता। इस कारण एकान्त के क्षणों में विनिमय के वदले अपमान कर व्यवहार और क्षत-विक्षत करने में उल्लास।

उसी दिन, उसी क्षण से अपर्णा के मन में जहर घुल गया। वरेन की सुन्दरता, सुन्दरता न रही। ससुराल का हवा-पानी असह्य हो गया। फिर भी वरेन की हर कारगुजारी के प्रति वह सजग थी। फायदा यह हुआ कि उसके आचरण की खामियाँ क्रमशः स्पष्टतर हो उठीं। अपर्णा शान्त और सजग वनी रही। एक दिन पति से पूछ ही लिया, 'क्यों जी, आजकल तुम सुवह-शाम इस खिड़की के सामने खड़े होकर क्या देखा करते हो ?'

वरेन चौंक पड़े। हकलाते हुये वोले, 'क्या, क्या मतलव तुम्हारा ? वस, देखता हूँ ? देखने को है क्या ?'

अपर्णा को खुद भी, आज तक पता नहीं कि उस दिन उनमें इतनी शक्ति कहाँ से आ गई थी। शक्ति का वह ज्वार बाहर प्रकट न हुआ। पहले जैसे निरीहता से ही वोलीं, 'वगल वाले मकान की वह जो लड़की पीहर आई है न, वह भी अक्सर इस खिड़की की ओर देखती रहती है।'

वरेन की आँखों में सन्देह घिरने लगा। कटुता से वोले, 'अपने घर में रह कर कोई भी, किधर भी देखे, इसमें तुम्हारा क्या घाटा हो रहा है ?'

अपर्णा को वरेन की कटुता का जैसे भान ही न हुआ। पहले जैसी सरलता से ही कहा, 'यह न मुझे एक दिन इशारे से बुला रही थी। जाऊँ मैं ?'

'नहीं। कोई जरूरत नहीं जाने की। तुम्हारा उस खिड़की के सामने जा कर खड़ी होने का काम ही क्या ?'

उस रात को अपर्णा ने वरेन के बर्ताव में कुछ बदलाव का अनुभव किया। अत्याचारी बहशी की पैशाचिकता में स्नेह-ममता की मिलावट पायी। करीब बैठ कर बात करने का प्रयास करता रहा। सोने से लगा प्यार बरसाने की कोशिश करता रहा। मगर उस वक्त अपर्णा को तबीयत नासाज थी। जी मिचला रहा था। सिर फटा जा रहा था।

यह बात सच है। बगल वाले मकान की वह लड़की अपर्णा को खिड़की के पास जब देखती, तभी इशारे से बुलाती। मुस्कराती। अगले दिन दोपहर को फिर बुलाया। अपर्णा को न जाने क्या सूझा कि इधर से उन्होंने भी इशारे से बता दिया कि आ रही हैं। गई भी। स्मृति ने बड़े स्नेह से बैठाया। बोली, 'कब से बुला रही हूँ, आज आने की फुर्सत मिली ?'

अपर्णा का जवाब सुन स्मृति ने उसे निहायत भोली समझा। उसके मन में जो टेढ़ा-मेढ़ा चल रहा है उसका पता तो स्मृति को चला ही नहीं। बालिका सी अपर्णा ने कहा, 'मेरी तो ससुराल है। मैं नहीं भी आई तो क्या ? तुम्हारा तो पीहर है, तुम क्यों नहीं चली आईं हमारे घर ?'

स्मृति मुस्कराई। सीधा जवाब न दिया। पूछा, 'अच्छा, यह सुनाओ, दुल्हा राजा से जान-पहचान हो गई ?'

अपर्णा झेंप गई। लजीली मुस्कान बिखेरने लगी। कुछ झेंप, कुछ विस्मय से बोली, 'चार महीने तो हो गये शादी को। अभी भी जान-पहचान न होगी ?'

स्मृति की आँखें थोड़ी हुई, होठ वक्र हुये। बोली, 'यह बात है ? खूब अच्छी जान-पहचान हो गई ? खूब मेल ?'

अपर्णा ने लाज से सिमटते हुये हामी भरी। करती भी क्या ? इन्कार कैसे करती ?

असलियत मगर कुछ और ही थी। स्मृति के घर पहुँचते ही अपर्णा का मन फिरने लगा। उससे वहाँ ज्यादा देर तक रहा भी न गया। वापस चली आई थोड़ी ही देर में। आकर देखा, घर का वातावरण भारी हो गया है। सास-ससुर खास तौर से चिन्तित हैं। धीरा ने इशारा कर अलग बुलाया। फिर बोली, 'क्या जरूरत थी तुम्हारी वहाँ जाने की ? भैया आज दफ्तर से जल्दी आ गये हैं। वहाँ गई हो, सुन कर ऐसा मुँह बनाया कि मेरा तो दिल काँपने लगा। जाओ देखो, आज तुम्हारी क्या गत होती है ?'

मगर ताज्जुब है कि अपर्णा को जरा भी डर न लगा, न हुई थोड़ी भी घबराहट। और भी ताज्जुब यह कि उस वक्त कुछ, हाँ कुछ भी कर गुजरने की ...

जागी थी। अपर्णा को कमरे में देखते ही वरेन किटकिटाये, 'मना किया था न मैंने तुम्हें वहाँ जाने को ?'

'मैं कब जाना चाहती थी ? मगर वह इतना-इतना बुला रही थी। कहाँ तक मना करती, तुम्हीं बताओ ? और फिर गई भी तो कौन-सा पाप किया ? कोई मर्द तो नहीं है वह !''''तुम आज ही इतनी जल्दी कैसे लौट आये ?' अन्तिम प्रश्न इस तरह किया गया और ऐसी दृष्टि से देखा गया कि वरेन की सिट्टी-पिट्टी गुम होने लगी। उस दृष्टि को देख, उस प्रश्न को सुन, यह कोई नहीं कहेगा कि अपर्णा सत्रह साल की सरल बालिका है। प्रश्न का और दृष्टि का अर्थ स्पष्ट था, 'मेरे बदले तुम्हारी इच्छा थी जाने की, और इसीलिये जल्दी लौटे हो, क्यों ?'

उस दिन वरेन काफी नरम रहे। घूम-फिर कर खुशामदी बातचीत करते रहे। हरेक सवाल का यही प्रयास था कि स्मृति से क्या बातें हुई ? क्या कहा ? क्या पूछा ? गुस्सा तो बहुत आया पर अपर्णा से झूठ न बोला गया। मेरी बहुत तारीफ करती रही। बहुत अच्छी कहा मुझे। यह भी कहा कि 'इसी वजह से तुम्हारा दूल्हा इतनी जल्दी, इतना बदल गया है।'

यह बातें स्मृति ने सच ही कही थीं और जवाब में अपर्णा ने पलट कर पूछा था, 'बदल गया ? क्यों, कैसा था पहले ?' लेकिन यह अन्तिम भाग वरेन को बताने लायक बेवकूफ नहीं है अपर्णा।

शादी के छह-सात महीने बाद शरीर में अजीब से परिवर्तन होने लगे। किसी के आने की सूचनायें थीं ये। अपर्णा इतना चिढ़ी, इतना कुढ़ी कि जी में आया कि जो आने वाला है उसके साथ अपने को खत्म कर डाले। स्मृति इसके काफी दिन पहले ससुराल जा चुकी थी, फिर भी। वरेन, चोरी से, उसके साथ सम्पर्क रखने का प्रयास नहीं कर रहा जानती थी, फिर भी।

सातवें महीने में अपर्णा पीहर ले जाई गई। तबीयत उन दिनों काफी खराब चल रही थी। वरेन के प्रति उसका आचरण बहुत उग्र हो गया था। वरेन मूर्ख नहीं। उसने अनुमान लगा लिया था कि आचरण की इस उग्रता का कारण क्या है। उसका पिछला इतिहास अपर्णा को पता चल चुका है। लेकिन वरेन न अनुतप्त है, न लज्जित। उल्टे और भी उद्दण्ड, और भी उग्र। हर वक्त इसी ताक में कि कैसे फिर उस पर हक जमाये, उसे अपनाये। उसके निकट हो।

निकट होने का, सम्पर्क स्थापित करने का मौका वरेन को करीब साल भर बाद एक बार फिर मिला था। वह भी अपने घर में नहीं, समीरग दत्त के घर के निचले तले में रहने के दिनों में। नन्हीं सुपर्णा तब छह महीनों की थी। इसके करीब चार महीने पहले अपर्णा जब पीहर में थी, घीरा एक दिन आई थी। उसने एक नई बात बताई थी। कहा था, 'स्मृति की माँ की मृत्यु हो गई है। अन्धे, आतुर पिता की सेवा अब कौन करे ? इसलिये स्मृति जो आई तो यहीं रह गई। जाने का नाम ही नहीं लेती। सुनाई पड़ रहा है कि अब वह जायेगी भी नहीं। उसका पति छुट्टी पाने

पर आता है, छुट्टी खत्म होते ही चला जाता है। इधर मैया भी बदने जा रहे हैं। तुम चलो भाभी। हालचाल देख-सुन कर हमें डर लग रहा है।'

धीरा ही नहीं, सुपर्णा के दो महीनों की होते न होते अपर्णा के सास-ससुर उसे अपने घर ले जाने के लिये व्याकुल होने लगे थे। बहू के स्वास्थ्य में सुधार न हो पाता था, फिर भी। अपर्णा के पिता राजी न हुये। बोले, 'अभी नहीं। बेटी की सेहत ठीक हो जाये और बच्ची जरा बड़ी हो जाये तो ले जाइयेगा।'

अपर्णा के माता-पिता इतनी तुरत-फुरत बेटी की शादी करके अब पछता रहे थे। वे जान चुके थे कि बेटी को सम्पन्नता तो मिली है पर सुख-सन्तोष से वंचित है वह। बेटी के आत्मसम्मान पर दामाद ने जो चोट पहुँचायी है उससे वे दुःखी थे। धीरा ने जब नई आई विपदा की गाथा सुनाई, तब क्षुब्ध अपर्णा ने माँ से सब बता दिया। माँ सुन कर रोती हुई पिता के पास पहुँची। पिता रुष्ट हुये। वेदनाहत हुये। गम्भीर हो सोच में डूबे।

इसके करीब तीन महीने बाद अपर्णा को ससुराल से जब बुलावे पर बुलावे आने लगे तब अपर्णा ने कहलवाया कि उस मकान में तो उन्हें अब जाना नहीं। अगर सास-ससुर उनकी वापसी चाहते हैं तो दूसरा मकान लेना होगा। अपर्णा ने यह इसलिये कहलवाया क्योंकि उन्हें पता था कि स्मृति पीहर में ही बनी है।

अपर्णा का प्रस्ताव सुनते ही वरेन आगबबूला हो गये। नकाब उतर गया। असली स्वरूप प्रकट हुआ। बहुत किस्म की छोटी-बड़ी बातें कह डालीं। धमकाया भी। पर अपर्णा न गालियों से प्रभावित हुईं, न डराने-धमकाने से। वरेन सोम को पहली बार पता चला कि उनकी उन्नीस वर्षीया पत्नी अड़ना भी जानती है। वरेन सोम जब राजी न कर सके तब ससुर आये। सास भी आईं। पर अपर्णा अड़ी रहीं। उनका कहना था कि भलाई के लिये ही वे ऐसा चाह रही हैं। इसी में कल्याण है।

इस पर वरेन दुबारा आये। बोले कि पिता की आर्थिक स्थिति ठीक नहीं। उनकी पेंशन के रुपयों से घर नहीं चल सकता। वरेन की आमदनी भी इतनी नहीं कि दो गृहस्थियाँ चला सकें।

अपर्णा ने कहा कि जब तक स्थिति सुधरती नहीं, उनके पिता मकान का किराया तो देंगे ही, और भी खर्च देंगे।

वरेन सोम को मानना पड़ा। झुकना पड़ा। समीरण दत्त के मकान के निचले फ्लैट में गृहस्थी बसानी पड़ी। इस बात को ले मगर उनके मन में बहुत क्षोभ था। अब तक जो बात छिपी थी, अब खुल कर उसका सबके सामने आ जाना उन्हें बहुत खलने लगा। नई गृहस्थी बसाने की शुरुआत में ही बोले, 'अब तक तो आँखों के सामने रहता था मैं। अब मैं कहाँ गया या जहन्नुम में गया, तुम्हें पता कैसे चलेगा?'

अपर्णा ने भी कटुता से उत्तर दिया, 'तुम जहन्नुम में जा चुके हो, यह तो मुझे पता है। अगर तुम्हारे नाखून बिल्कुल गिर न गये होते तो इस बेशर्मी से बात न करते। रही बात पता चलने की, सो जा कर देखो, पता मुझे मिलता है कि नहीं।'

अपर्णा के चरित्र को इस दृढ़ता से वरेन परिचित थे। ऐसा हो सकता है, इसकी कल्पना भी न थी। नये सिरे से पत्नी के प्रति उनके मन में आकर्षण अंकुरित होने लगा। अपर्णा इस सत्य से अपरिचित नहीं। पर वरेन के चरित्र की उग्रता के कारण रोज ही खटर-पटर होती रहती। अपर्णा भी, झुकने के वजाये डट कर प्रतिरोध करतीं। इच्छा से हो या मजबूरी से, वरेन सोम को एकान्त के आचरण को वदलना पड़ा है। वहशीपन पर सौजन्यता का मुखौटा चढ़ाना पड़ा है। ऐसा न करने पर *अपर्णा निर्ममता से उन्हें प्रत्यार्पण करने को वाध्य करतीं।* 'सज्जनों की तरह आना है तो आओ। मैं कोई वह नहीं कि जो जी में आये करो....'

वासना के उफान के क्षणों में अपर्णा की यह अनमनीयता कई वार मजाक करने का मौका देती वरेन को। पूछते, 'सज्जनों की तरह नहीं आ सकूं तो कहाँ जाऊँ? वहां?'

घृणा से अपर्णा का मन इतना खट्टा हो जाता कि क्रमशः वे और भी व्यवधान का प्रयास करने लगीं। वरेन सोम इससे और भी कुढ़ने लगे। अपर्णा ने पहले ही एलान कर दिया था कि अव और वच्चों की जरूरत नहीं। कम से कम अपर्णा जव तक न चाहें तव तक नहीं। अगर कभी भी अपर्णा को शक हो जाता कि वरेन धोखाधड़ी के फेर में हैं तो अपर्णा और भी कठोर व्यूह की रचना करतीं। सजग रहतीं हर वक्त, इसलिये पता चल ही जाता। इस विकट स्थिति में फँस वरेन सोम को गुस्सा तो वहुत आता पर मजवूरी के मारे वेचारे कुछ कर भी न पाते।

नई गृहस्थी चल निकलने के वाद से वरेन सोम का हर वक्त यही प्रयत्न रहता कि खोया हुआ अधिकार उन्हें पुनः प्राप्त हो। वे जितना उग्र होते, अपर्णा उतनी ही संयत। दोतले तक वरेन सोम का चीखना-चिल्लाना सुनाई देता। जव वह सीमा छोड़ने लगता तव हँसते हुये समीरणजी नीचे आ कर वरेन से पूछते, 'क्यों रे, आज फिर तुझे पागलपन का दौरा पड़ा?' किसी-किसी दिन विचवई करने समीरणजी की माँ भी आ जातीं। उन्होंने सुपर्णा को धेवती और अपर्णा को वेटी वनाया था। इसलिये वे सिर पर, पीठ पर हाथ फेर दामाद वरेन को पहले शान्त करतीं; फिर चतुरा डिप्लोमैट की तरह दामाद की तरफदारी कर वेटी को झिड़कती रहतीं।

दोतले वालों के साथ वना यह स्नेह-सम्पर्क आगे चल कर एक नये वखेड़े की वजह वना। वहाँ जाने के छह महीने वाद अपर्णा ने फिर पढ़ाई शुरू की। वरेन सोम भली प्रकार जानते थे कि इसके पीछे किसका हाथ है, साहस और उत्साह कौन जुटा रहा है। दिन, महीने, साल वीतने लगे। अपर्णा इण्टर, वी० ए० कर चुकीं। एक दिन एम० ए० भी कर डाला। पत्नी का विदुषी होना खुश होने की वात है, क्षुब्ध होने की नहीं। छात्र जीवन में वरेन भी अच्छे छात्रों में गिने जाते थे। पर समीरण दत्त के प्रति पत्नी की वढ़ती श्रद्धा में उन्हें काला दिखायी देने लगा। वरेन के मन के इस कलुष के कारण एम० ए० की परीक्षा शुरू होने के पहले वाला दिन अपर्णा के लिये वहुत

थी न, केवल पहुँच मैंने तुम्हारे परीक्षा-संकट के समाधान में व्यवधान डाल दिया, न।'

अपर्णा ने तब तक खाना भी नहीं खाया था। सुनते ही खून खौल गया। बोलीं, 'बड़े नीच हो तुम।'

दाँत निपोर हँसने लगे वरेन। 'सो तो तुम ठीक ही कहती हो। शिक्षा की मर्यादा तो मैंने कभी जानी ही नहीं। इसे तो जानती हो तुम और जानते हैं तुम्हारे समीरणजी। अभी रात को साढ़े ग्यारह बज रहे हैं। बच्ची को ले बुढ़िया सो रही है। मैं नीचे। ऐसे अनुकूल परिवेश में भला कौन सी परीक्षा रुक सकती है? कौन रोक सकता है?'

'नीच, अति नीच हो तुम, समझे?' अपर्णा ने दुबारा कहा था।

गुस्से के मारे बिना खाये-पिये लेट गईं अपर्णा। एक ही कमरे के दो सिरों पर दो खाट बिछे हैं। वरेन सोम ने कमरे की बत्ती बुझा दी।........पाँच मिनट के अन्दर वही हो गया जिसकी अपर्णा को कल्पना भी न थी। अपनी खाट पर न जा वरेन इधर वाली पर आ गये। पता चलते ही अपर्णा ने सारी ताकत लगा उन्हें हटाने का प्रयास किया। धक्का दे गिराने की कोशिश की। सफल न हो सकीं। पढ़ाई की थकान और परीक्षा की चिन्ता से निढाल शरीर असुर की निर्ममता का शिकार हो गया। अपर्णा को लगा कि चक्की के पाटों के बीच फँसी हैं। जकड़न कसते-कसते वरेन को कहते सुना गया, 'मैं जब नीच, अति नीच ही हूँ तो फिर क्यों बेकार भलमनसाहत की नकाब ओढ़े रहूँ? क्यों न अपने सच्चे रूप में प्रकट हो जाऊँ? छीन लूँ जो मेरा प्राप्य है; मुझे जिस चीज की जरूरत है।'

अपर्णा निश्चेष्ट पड़ी रहीं। रोका नहीं। किसी प्रकार की बाधा नहीं दी। कमरे के घुप्प अन्धेरे में जलती आँखों से उस दानव की दानवीयता प्रत्यक्ष करती रहीं। कितना वीभत्स था वासना का वह आत्म-प्रकाश!

वरेन के छूट जाने के बाद भी बहुत देर तक तड़पती रहीं अपर्णा। उसी रात फैसला किया कि परीक्षा नहीं देंगी। सुबह तक संकल्प पर अटल रहीं। पर, वक्त के कुछ पहले समीरणजी सवारी लेकर आ गये। जाना पड़ा। परीक्षा भी देनी पड़ी। एक-एक कर सारे पेपर पूरे हो गये।

उस रात की नृशंसता मगर अपर्णा भूलीं नहीं।........उस रात फिर कहर टूट सकता था। दूसरी सन्तान के आगमन की सूचना आ सकती थी। बड़ी कृपा भगवान् की कि नहीं हुआ ऐसा। यह जितना उनका सौभाग्य, उससे अधिक सौभाग्य वरेन का, यह मानना ही पड़ेगा। क्योंकि अगर उस रात की घटना के फलस्वरूप सन्तान संभावना होती तो अपर्णा उसे निर्मूल तो करतीं ही, वरेन से भी सारे सम्पर्क तोड़ कर अलग हो जातीं।

नियत समय पर परीक्षा-फल निकला। अच्छे नम्बरों से पास हुईं अपर्णा। समीरण दत्त के चरणों पर झुक कर प्रणाम किया अपर्णा ने। बी० ए० का फल आने

के बाद भी किया था। परीक्षा पास होने का श्रेय अपर्णा अपने गुरु को दे इतराई होती हैं। मन से अब वरेन सोम को ऐसा ही लगता है। मनोरम अगर कुछ कहें या कोई सलाह दें तो वह अपर्णा के लिये वेदवाक्य के समान है। उसके विरोध में कुछ भी कहना सुनने को राजी नहीं।

दिन बीतने के साथ वरेन के मन में यह धारणा घर करती गई कि उनका व्यक्तित्व, उनकी शक्ति घटती जा रही है। वह सहन करने को वे तैयार नहीं। कार्डियोलॉजी में, इन दिनों शानदार उन्नति किया था उन्होंने। संसार के कोने कोने में उनकी ख्याति उजागर होने लगी थी। इस कारण कई लोग ईर्ष्यान्वित थे। अपर्णा ने इधर कभी जानने का प्रयास भी न किया कि भविष्य और कितना उज्ज्वल, कितना सुन्दर हो सकता है। यश। और कितना आगे जा सकते हैं। वरेन सोम के ज्योतिर्मय भविष्य के आगे कालेज के लेक्चरर मनोरम दत्त करुणा के पात्र हैं। पर अपर्णा ने अपनी सारी श्रद्धा उन्हीं के चरणों में समर्पित की। वरेन सोम के लिये यह बर्दाश्त कर पाना कहाँ तक मुमकिन है?

अक्सर ही वरेन टिप्पणी करते। ताने देते। अपर्णा हर बार जवाब न देती। चुप्पी द्वारा वरेन को यह सन्देश पहुँचाती कि वरेन की बातें ईर्ष्याप्रेरित हैं, अतः जवाब देने के योग्य नहीं। कभी जब जवाब देती तो वह भी सहा न जाता।

मनोरम शादी क्यों नहीं करते? अचानक ही एक दिन वरेन के मन में यह प्रश्न घुमड़ने लगा। अपना मकान है। रोजगार भी अच्छा-खासा है। कोई पारिवारिक झमेला भी नहीं। मनोरम की माँ का बहुत मन भी है कि बेटे की बहू आये, पोते-पोतियों से घर भरे। फिर भी मनोरम इतने निस्पृह क्यों?

मनोरम की माँ एक बार लड़की देखने गईं। अपर्णा भी साथ गई थी। लड़की पढ़ी तो बहुत थी पर सुन्दर जरा भी न थी। माँ को लड़की पसन्द नहीं आई। अपर्णा को जब बहुत सोचा गया तो मन मार कर कहना ही पड़ा कि उसकी समझ में यह लड़की मनोरम जी के काबिल नहीं। गड़बड़ मगर मची दूसरी तरफ से। वरेन ने नहीं, मनोरम ने बड़ा बखेड़ा मचाया। माँ लड़की देखने गई हैं जान कर वे माँ से इतने नाराज हुये कि दो दिन कहीं और रह आये।

बेचारी माँ, रो-रो कर बेहाल हुईं। वरेन सोम ने जब सुना कि लड़की पसन्द नहीं हुई तो अपर्णा को ताना दिया, 'यह तो मालूम ही था कि तुम्हें लड़की क्यों पसन्द नहीं आयेगी।' इस चिन्ता को पुष्टि मिलने लगी। मन में जहर घुलने लगे तो निगाह में बदलाव आना बहुत स्वाभाविक बात है। अपर्णा के प्रति मनोरम के सहज सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार की ओर सन्देह का बीज पनपने लगा। निहायत भोले मजाक की आड़ में उन्होंने मन की बात कह ही डाली एक दिन। अपर्णा से बोले, 'मनोरम का मामला क्या है? शादी करता क्यों नहीं? तुमसे कहे इतना तो किसी को— पता नहीं?'

समीरण जी ने सुन न लिया हो ! अपर्णा सहम कर दोतले की सीढ़ी की तरफ देखने लगीं। फिर दबी जबान से फुंफकारी, 'ढंग से बात करो। अगर सुन लिया तो याद रखना, तुम्हें मकान दुबारा तलाश करना पड़ेगा।'

अपर्णा को ज़रा भी गुस्सा आते ही वरेन को सौजन्यता की कमी और असौम्यता के ताने देती हैं। ये ताने सुनते ही वरेन तिलमिला जाते। 'मतलब यह है कि तुम्हारे समीरण जी ऋषिकल्प व्यक्ति हैं ?'

'तुम्हारे आगे तो बेशक हैं। वक्त से पहले तुम्हारी शादी कर देना जरूरी हो गया था। समीरणजी का अभी वक्त नहीं गया है।'

ठठा कर हंसने लगे वरेन। अपर्णा को लगा, उनकी हंसी जैसी कुत्सित वस्तु उन्होंने पहले कभी नहीं देखी थी।

'महाभारत पढ़ा है ?'

अपर्णा चुप।

'महाभारत में वर्णित महातपस्वी ऋषियों के कारनामे पढ़े हैं ?'

'जिसकी जैसी दृष्टि होती है उसे वैसा ही दिखाई पड़ता है। यही पढ़ने को मिला तुम्हें महाभारत में ?'

'तुम्हारे कहने का मतलब कि वह सब आर्य प्रयोग हैं, हमें उधर से निगाह हटा लेनी चाहिये ?'

अपर्णा ने उसी दिन से जान लिया कि अशान्ति के बादल घिर रहे हैं। तिक्तता से भर गया उनका मन।

सुपी जब करीब पांच बरस की थी तब की बात है। उसका नियम था कि सुबह दूध पी कर किताब-कापी ले चाचा से पढ़ने ऊपर चली जाती। उसका ख्याल था, चाचा के अलावा पढ़ाने की योग्यता और कोई नहीं रखता। घण्टे भर बाद समीरणजी उंगली पकड़ उसे नीचे ले आते।

वक्त-वक्त पर वरेन समीरण को भी ताने देते। एक दिन बोल पड़े, 'पहले मां का बेड़ा पार लगाया, अब बेटी का लग रहा है। अरे यार, बैल की तरह दूसरे की चीनी कब तक ढोता फिरेगा ?'

मुस्करा कर समीरणजी बोले, 'शुक्र भगवान् का चीनी का बैल हूं, तेरे जैसा आंखों पर पट्टी बंधी कोल्हू का बैल नहीं।'

'ढोने में ही सन्तुष्ट ? चखना नहीं है चीनी ?'

समीरण दत्त मुस्कराते रहे। मारे शर्म के अपर्णा गड़ गई। उन्हें मालूम है, समीरणजी अत्यन्त बुद्धिमान हैं। आज की बात का अर्थ क्या उन्होंने समझा न होगा ? आगे से उन्हें मुंह कैसे दिखायेंगी ?

समीरणजी के चले जाने के बाद बेटी को पार्क भेज अपर्णा ने कमरे की किवाड़ पर सिटकनी चढ़ाई। वरेन के सामने खड़ी हो बोलीं, 'इरादा क्या है तुम्हारा ?'

'कैसा इरादा ?'

'ऐसी गन्दी बात कहते शरम नहीं तुम्हें ?'

'उनके साथ ऐसी गन्दी बात तुम्हारे पैदा होने के पहले से करता आ रहा हूँ। बालपन का साथी है यह मेरा। अच्छा तो यही होता कि आगे से तुम्हीं जरा सोच-समझ कर बोलती।'

'मैं सोच-समझ कर बात करूँ ? तुम्हें मैं जानती नहीं ? तुम्हारे पवित्र चरित्र से मैं परिचित नहीं ?'

'अगर सोच-समझ कर न बोलोगी तो मेरे और मेरे चरित्र की और भी जानकारी हासिल करने को मजबूर की जाओगी।' उठ कर खड़े हुये वरेन। मजबूत हाथों से अपर्णा के कन्धों को झकझोरते हुये बोले, 'बताओ तो मुझे एक बात मेरी जान, उसे कुछ कहने से तुम्हें क्यों मिर्च लग जाती है ? यह सब निखालिस श्रद्धा ही है या और भी किसी चीज की मिलावट है इसमें ?'

'जानवर हो तुम।'

'बेशक। तुम्हारे सौजन्य के मापदण्ड में खरा उतरने वाला मलाई का पुतला नहीं मैं। जानवर ही हूँ। कमरा बन्द कर इस तरह धमकाने आने के पहले एक बात ध्यान में रखना। इस तरह तुम्हारे आने पर इस जानवर को बड़ा उल्लास होता है। क्या तुम देखना चाहोगी, कितना उल्लसित होता है वह ?'

छिटक कर अपर्णा हट गई। झटपट दरवाजा खोल दिया।

समीरणजी की माँ जब तक जीवित रहीं, तब तक अपर्णा पहाड़ की छाया में रही। वरेन कितना भी दुष्ट हो, कितना भी अत्याचारी, उन महिला को बहुत मानते। उनका महज उपस्थित रहना ही वरेन को संयमित करने के लिये काफी था। मगर वे बूढ़ी हो चली थीं। एक दिन चल बसीं। तूफान का संकेत उनके जाने के साथ ही मिलने लगा।

हर महीने दो-तीन बार तीन-चार दिनों के लिये दौरे पर जाते वरेन। आने का दिन बता कर जाते। शुरू में जिस दिन का कह कर जाते उसी दिन लौटते। फिर देखा गया, कहते किसी दिन का, लौटते किसी और दिन। बताये गये दिन के पहले ही आ जाते। एक दिन जब अपर्णा ने पूछा तो बोले, 'मेरे जल्दी आ जाने से तुम्हें खास परेशानी हुई ?'

अपर्णा ने पूछना बन्द कर दिया। शहर में रहने वाले दिनों में कई बार [illegible] से पहले ही दफ्तर से आ जाते। पैनी दृष्टि से क्या तलाशते, क्या देख पाने की [illegible] रखते यह अपर्णा जानती थी। वरेन के यह ढंग देख अपर्णा का भरा मन [illegible] जाता। इतनी घृणा होती कि सहा न जाता। उधर, माँ के मर जाने से [illegible] पड़े असहाय हो गये थे। वैसे ही स्वभाव के बड़े ढीले-ढाले हैं। किताब में [illegible] नहाने-खाने की सुध नहीं रहती। अब तक माँ को दहाड़ों से [illegible] [illegible] होता। अब कोई कहने वाला नहीं, तो काम भी वक्त से नहीं होता। [illegible]

चिन्ता भी नहीं थी। नौकर के सहारे दिन गुजर रहे थे। मतलब यह कि निहायत खस्ता हालत थी उनकी। आँखों के सामने उनका यह हाल देख अपर्णा निष्क्रिय कैसे रहें? आखिर कृतज्ञता नाम की भी तो कोई चीज है? अतः शालीनता से जितना होता है, करती हैं। दोनों वक्त खाने-पीने का पूछती हैं। जो कुछ बन पड़ता है बना कर ऊपर भेजती हैं। तबीयत ठीक नहीं रहती तो हाल पूछती हैं। इतना तो वे पहले भी किया करती थीं। इधर देख रही हैं कि वरेन को यही सब नागवार गुजर रहा है।

इस बात को समीरण भी समझ रहे हैं। अपर्णा जब ही कुछ करती या पूछती हैं तो विव्रत हो कर वे कहते हैं, 'मेरे कारण क्यों परेशान होती हो? और फिर वह बोड़म इसी पर झमेला करेगा।'

समीरणजी के चरित्र की इस सहजता ने उनके प्रति अपर्णा को सहज बना दिया है। इसी के कारण वरेन के प्रति इतनी कटुता आ गई है उनके मन में। अपर्णा का ख्याल है कि जब समीरण उन्हें गलत नहीं समझ रहे हैं, तब वरेन की गलतफहमी की परवाह करना मूर्खता है। समीरणजी से इस विषय पर बातचीत भी हुई है। उन्होंने समीरण से कहा है, 'झमेला जब उन्हें करना ही है तो मैं कहाँ तक रोकूँ? हो सके तो इनके पागलपन का कुछ इलाज कीजिये।'

मुस्करा कर समीरणजी ने कहा था, 'करने का मौका दो तो अभी करूँ। मगर तुम मानोगी मेरे इलाज को?'

'मेरे मानने न मानने का सवाल कहाँ से आ गया? पागलपन जो कर रहा है, इलाज उसका होगा। मेरा क्या?'

'नहीं तुम्हीं को मानना पड़ेगा।'

'ऐसा क्या इलाज है रे भाई कि मेरे मानने से ही होगा?'

'तुम ऊपर आना बन्द करो। ऊपर की तरफ देखो भी मत। मैं खाता हूँ या भूखा रहता हूँ इसकी चिन्ता छोड़ो और सुपी जब पास न हो तो उसके पिता से मेरी खूब बुराई किया करो।'

इतनी आसानी से समीरण ने यह बात कही कि अपर्णा खिलखिला पड़ीं। संयत होकर बोलीं, 'ठीक है, मुझे आपकी सारी शर्तें मंजूर हैं। मेरी भी एक शर्त मान लीजिये आप। चटपट शादी कर डालिये।'

समीरणजी अधलेटे से उठ बैठे, 'मेरी शादी की बात इसमें कहाँ से ला पटका?'

अपर्णा ने कहा, 'अगर आप शादी नहीं करेंगे और मैं भी ऊपर आना बन्द करूँगी तो आपका क्या होगा, सोचा है कभी? आपकी वह दशा जब आपकी माँ ऊपर से देखेंगी, तब क्या उनके उंसास मुझ पर नहीं बरसेंगे?'

समीरणजी ने अपना सुझाव वापस लेकर कहा था, 'तो फिर तुम उस पागल को और भी पगलाने दो।'

प्रसंग जब एक बार उठा ही है तो अपर्णा समीरणजी को इतनी आसानी से

मुक्त करने को राजी न थीं। उन्होंने फिर पूछा, 'बताते क्यों नहीं? क्यों नहीं करेंगे आप शादी?'

'शादी को मैंने कभी भी एक बहुत सुखदायक स्थिति नहीं समझा। और फिर तुम्हारी बात सुन रही-सही हिम्मत भी टूट गई। अभी तुमने कहा कि बिना देखभाल के मेरी हालत पतली हो जायेगी। मतलब कि मैं निहायत निकम्मा हूँ। ऐसे एक निकम्मे जीव को, आने वाली कितना सम्मान देगी?'

बिना सोचे ही अपर्णा ने तर्क आगे बढ़ाया, 'क्यों? क्या मैं आपकी इज्जत नहीं करती?'

आँखों में झाँकते हुये समीरणजी ने दहला मारा, 'तुम तो आ नहीं रही हो!'

अपर्णा मारे लाज के लाल हुईं। सरपट भागती नीचे आईं।

अपर्णा इस बात को अस्वीकार नहीं कर सकतीं कि एम० ए० पास होने के बाद और खास कर समीरणजी की माँ के चल बसने के बाद कई प्रकार की चिन्तायें उनके मन में आती-जाती रहती। यह भी वह अस्वीकार नहीं कर सकतीं कि कई बार उनके मन में यह भावना उठी कि जो उनके जीवन में आया है वह न आकर अगर समीरणजी आते तो जीवन का चित्र कैसा होता! यह जो समीरणजी शादी करने को तैयार नहीं हो रहे थे यह भी अपर्णा को चिन्तित कर रहा था। इस बात का उन्हें भली प्रकार ध्यान है कि समीरणजी उन्हें बहुत मानते हैं। कितना उदार है उनका हृदय! मित्र के जीवन में जरा-सी भी दरार न पड़े, इसके लिये कितने सचेष्ट!

अपर्णा ने सदा उनका कल्याण चाहा है। शुभकामनायें बरसाती रही हैं। सारे हृदय से चाहा है कि उनसे कहीं सुन्दर, कहीं गुणी पत्नी मिले समीरणजी को। एक बार झेंप जाने के बाद भी उन्होंने फिर इस प्रसंग का उत्थापन किया था।

उसी दिन शाम को वरेन दौरे पर गये थे। तीन दिन बाद आने को कह गये थे। आजकल दौरे पर जाने का दिन आते ही सुबह से चिड़चिड़ाने लगते हैं वे। उनके चिढ़ने की वजह जानती हैं अपर्णा और खुद भी सीमती-कुढ़ती हैं वरेन की नासमझी पर। वरेन आदमी जैसा भी हो, बेटी से बहुत स्नेह रखते हैं। जब वरेन चलने को हुये समीरणजी नीचे ही थे, सुपर्णा उनकी गोद में बैठी थी। चलते वक्त वरेन ने बेटी को प्यार करना तो दूर, उसकी तरफ एक बार देखा भी नहीं। बेटी बुलाने को हुई तो पीछे से पुकार अशकुन करने से रोकने के लिये समीरणजी ने उसके मुँह पर हाथ रख दिया।

गाड़ी निकल जाते ही सुपर्णा बिलखने लगी, 'पापा चले गये। मुझे प्यार नहीं किया।'

अपर्णा बोलीं नहीं। समीरणजी हँसने लगे। बोले, 'प्यार क्या करेगा तेरा पापा? अभी उसका दिमाग ठिकाने नहीं। गलती तो तेरी ही है। अगर जाने से क्यों रोका?'

अब अपर्णा भी हँस पड़ीं। बोलीं, 'बस, बहुत कह चुके, अब चुप हो जाइये। जो बावरा है सो तो है ही, आपको अब सोचने की जरूरत नहीं।'

वृन्दा तब तक यहाँ काम में लग चुकी थी। कुछ देर बाद सुपर्णा उसके साथ पार्क चली गई। समीरणजी सोच में डूब गये। काफी देर चुप रहने के बाद बोले, 'मेरी बात तो तुम आजकल मानती नहीं। एक बात कहूँ, मानोगी?'

भूमिका सुन अपर्णा शंकित हुईं। समीरणजी इतने उदार-मना हैं, इतने बड़े कि अपर्णा उनसे डरा करती भी हैं। बोलीं, 'मानने लायक बात हो तो कहिये, नहीं तो मत कहिये। क्या बात है?'

समीरणजी बोले, 'मुन्नी के पिता का तुम्हारे प्रति बहुत ही प्रबल आकर्षण है। इतना अधिक कि विकारग्रस्त हो गया है वह। क्या फायदा उसकी विकृति को बढ़ाने का! एक काम करो तो कैसा हो? ऐसा इन्तजाम करो कि वह जब दौरे पर जाये तब उसकी बहनें, या भाई या माँ किसी को अपने पास बुला लिया करो। रहते तो सब यहीं हैं, कोई दूर से तो आना नहीं है। यह स्थिति अगर किसी की आँखों में खटके तो हम उन्हें दोषी ठहरा नहीं सकते।'

क्रोध और लज्जा से अपर्णा लाल हो गईं। लेकिन जवाब देने का अवसर हाथ से निकलने न दिया। कुछ देर समीरणजी को देखती रहीं। फिर बोलीं, 'उससे काम कितना चलेगा? लेकिन आप अगर चाहें तो दोस्त का और अपना दोनों का ही कल्याण कर सकते हैं। सच बताइये, शादी करते क्यों नहीं आप?'

बात मजाक में बदल कर समीरण बोले, 'तुम कहती हो? तो फिर एक नहीं, कई कर डालूँगा।'

'नहीं भाई, कई नहीं। तब तो जेल जाना पड़ेगा। आप मेहरबानी करके एक ही कर डालिये।'

समीरणजी ने फिर मजाक में कहा, 'देखो, पागलपन पुरुष की ही मोनोपलि नहीं। ऐसी क्या गारण्टी है कि जो आयेगी वह तुम्हें लेकर समस्या नहीं खड़ी करेगी?'

अपर्णा शर्मा गईं। फिर बोलीं, 'मैं भी आपके लिये समस्या हो गई? अगर ऐसा ही लगता है आपको, तो मैं कहीं और रह लूँगी।'

उठ खड़े हुए समीरणजी। चलने को तैयार हो बोले, 'देखो अपर्णा, एक झूठ को ढंकने-छिपाने के लिये इतना झमेला क्यों मोल लिया है। अगर मैं यह कहूँ कि तुम बिल्कुल समस्या नहीं हो मेरे लिये तो बात सच नहीं होगी। अब यह बात जरा भी दकियानूसी नहीं लगती कि तुम इस घर में नहीं रह रही हो। लेकिन समस्या इतनी बड़ी नहीं या इतनी पेंचदार नहीं कि किसी के सरदर्द का कारण बने। तुम मुझे अच्छी लगती हो। इसमें कोई सन्देह नहीं। पर किस किस्म से अच्छी लगती हो यह बात अगर उस बोड़म के समझ में आ जाती तो नाराज होने के बदले खुशी ही होती उसे।'

समीरणजी चले गये। ख्यालों में डूबी बैठी रहीं अपर्णा। बहुत देर तक। वे

सोचती रहीं और मुग्ध होती रहीं यही सोच कर कि कितने महान् हैं समीरणजी। उनकी इस सरल स्वीकृति ने उन्हें अपर्णा के भावना-जगत् में और ऊपर उठा दिया था।

एक बहुत अदना-सी बात को ले कर एक दिन एक बहुत बड़ा धमाका हुआ। वरेन सोम को रविवार के अलावा खास छुट्टी नहीं मिलती। समीरण दत्त का मगर हफ्ते में दो-तीन दिन आफ रहता है। काम पर जाते भी हैं तो तीन-चार घण्टों के लिये। जमाने की हवा और छात्रों में नवजागरण की कृपा से इन तीन घण्टों की पढ़ाई पर भी प्रतिबन्ध लगे ही रहते। साल में दो लम्बे वेकेशन तो हैं ही। रविवार की दोपहर को खाना खा चुकने के बाद, इसी बात पर आलोचना हो रही थी।

शुरू से ही नियम बन गया है कि रविवार की दोपहर को समीरणजी नीचे खाना खायेंगे। रविवार एक ऐसा दिन है जिस दिन वरेन सोम खुद बाजार जाते हैं। अपने मन की खरीदारी करते हैं। खर्च की तरफ देखने की आदत नहीं उनकी। हफ्ते के और दिन या तो समीरणजी का नोकर, नहीं तो वृन्दा बाजार जाते हैं। उस दिन काफी सामान था, कारण दो दिन पहले सुपो की सालगिरह थी। बहुत सामान आया था। उस दिन वरेन खूब खुश थे। बाजार से लौट कर अपर्णा से बोले, 'समीरण से कहने अभी तक नहीं गई?'

वरेन की आदत है कि समीरण साथ न हो तो रविवार का खाना बेमजा होने लगता है। इसलिये अपर्णा से बार-बार उन्हें बुलाने का तकाजा करते हैं। खाने का इन्तजाम कर रही थी अपर्णा। बोली, 'उनके नौकर से कहा हुआ है। खाना बन जाने पर बुला लिया जायेगा।'

खुशी-खुशी खाना खतम हुआ। फिर गपशप की दौरान में छुट्टी का प्रसंग चल निकला। किसी कारण समीरणजी का कालेज सोम, मंगल और बुध को बन्द है। शुक्रवार और शनिवार उनके आफ-डे हैं। वे इस फेर में हैं कि किसी बहाने वृहस्पतिवार को अगर छुट्टी निकाल लें तो पूरे हफ्ते भर की छुट्टी मिल जायेगी। बड़े मजे से बीतेगा यह सप्ताह।

छुट्टी की लिस्ट सुनते ही वरेन का मन खट्टा हुआ कि नहीं, कहा नहीं जा सकता, पर हुआ जरूर खट्टा। मुंह बिचका कर बोले, 'इतनी छुट्टियाँ मिलती हैं फिर भी मन नहीं भरता तेरा? फिर भी छुट्टी बनाने की फेर में रहता है तू? लगता है तेरा मजा कुछ-कुछ दाल महारानी या नर्गिस कोफ्ते की तरह है।'

समीरण बाबू ने तरलता से कहा, 'अबे कोल्हू का बैल, छुट्टी के मजे तू क्या जाने?'

'तो आजकल घोनी का बैल छुट्टी के दिनों में चोंनी का समान कर रहा है क्या थोड़ा बहुत?'

समीरणजी बोले नहीं, हंस भर दिये। वरेन के मुख पर आते-जाते रंगों को देख अपर्णा सहम गई।

वरेन सोम बोले, 'तेरे भाग्य पर ईर्ष्या होती है यार।....बनाने वाले से प्रार्थना है कि अगले जनम में मुझे कालेज का मास्टर बनाये।'

अपर्णा पर कटाक्ष फेंक समीरण दत्त ने एक बहुत ही खुला मजाक कर डाला। बोले, 'अगर गधा न होता तू, तो ऐसी वाहियात ख्वाहिश कभी न पालता। मेरी तो बनाने वाले से यही प्रार्थना है कि अगले जनम में मुझे वरेन सोम बनाये।'

'अपर्णा लाभ की आशा में ?'

अपर्णा की परेशानी बढ़ती रही। मुख लाल होने लगा। समीरणजी को जवाब देना नहीं पड़ा। मजाक का तात्पर्य स्पष्ट था। वरेन सोम के मुख पर खिली मुस्कराहट मुरझाने लगी। पीड़ा-मिश्रित ईर्ष्या ने अपना विस्तार करना शुरू किया। रही-सही मुस्कराहट अब शोभा नहीं दे रही है। बोले, 'इरादा तो बहुत नेक है, फिलहाल, यह जनम तो यार छुट्टी के भरोसे ही काट ले।' पत्नी की ओर बोले, 'क्यों जान, क्या इसीलिये तुम बेटी को सुबह के स्कूल से हटा कर दोपहर के स्कूल में डालने के लिये हंगामा कर रही हो ? दोपहर को तुम्हें भी छुट्टी चाहिये क्या ?'

क्षण भर में कमरे का वातावरण बोझिल हो गया। ऐसा लगा कि जहरीली हवा का एक झोंका कमरे में भर गया। सांस लेना मुश्किल होने लगा। अपर्णा की अन्तरात्मा कांप उठी। समीरणजी शान्त रहे। फिर बड़ी ही शालीनता से बोले, 'देख वरेन, मजबूरी है। मेरे कालेज की छुट्टियां तेरी मरजी से होंगी नहीं। और छुट्टी मुझे इसी घर में काटनी पड़ेगी। अगर मेरी छुट्टियों से तेरी परेशानी बढ़ती है तब तो यार, तुझे ही दूसरा मकान देख लेना होगा।'

समीरणजी के प्रति उस क्षण से अपर्णा और भी श्रद्धाशीला हुई। अगर वे इस बात को और स्पष्ट कर कहते तो उन्हें और खुशी होती। वे लोग जब यहां आये थे तब जो किराया देते थे अब भी वही दे रहे हैं। वरेन सोम के प्रोमोशन के बाद अपर्णा ने एक बार किराया बढ़ाने की बात चलाई थी। तब समीरणजी ने कहा था, 'बढ़ाओ किराया जरूर, लेकिन आगे से यह जो सब खाने-पीने का सामान ऊपर जा रहा है, उसका दाम लेने को तैयार रहना।' फिर यह प्रसंग उठाने का साहस किसी ने नहीं किया।

समीरण की बात सुन वरेन सोम का मुख काला पड़ गया। उसी दिन से मकान की तलाश में निकल पड़े। शुरू में इस मकान का ऊपरी हिस्सा खाली मिला। उसी को ले लिया। मानी हुई बात है, यहां रहना उतना आरामदायक नहीं हुआ, खर्च भी बहुत बढ़ गया, क्योंकि यहां किराया ज्यादा था। और दूर, समीरण की दृष्टि से ओझल किसी जगह पर लेना चाहते थे वरेन सोम। लेकिन वह तो इतनी जल्दी मिलने वाला नहीं। इधर वरेन सोम इतने चिढ़े थे कि बस चलता तो उसी दिन

अन्यत्र चले जाते। खैर, कोई बात नहीं, अभी जो मिला ले लिया, फिर देख-सुन कर दूसरा ले लिया जायेगा।

बाद में जब वे दूसरा मकान देखने चले तो अपर्णा ने विद्रोह किया। बोलीं, 'उस मकान में रहने लायक नहीं हम। उन्होंने हमें निकाल दिया, अच्छा किया। लेकिन फिर तुम हमें यहाँ से हटने को मजबूर करोगे? हम कोई कुत्ता-बिल्ली हैं क्या कि जब चाहा उठा कर यहाँ-वहाँ कर दिया?'

बरेन सोम ने चुभने वाली बात कही, 'यहाँ से इसीलिये नहीं जाना चाहती हो कि फिर भी पास है, मिलना होता ही रहेगा?'

'हाँ, पास रहने की लालच से ही। तुम्हारा मन बहुत ओछा है, जो मन में आये सोचो। मगर यह भी याद रखना कि महीने में दस दिन तुम दौरे पर रहते हो। जरा-सी बच्ची को लेकर रहना पड़ता है मुझे। कब कौन-सी आफत आती है, पता नहीं। यह कभी सोचा है तुमने कि तब क्या होगा? कौन देखेगा?'

बरेन सोम मुस्कराये। ऐसी मुस्कराहट जो सारे शरीर पर जलन ला देती है। बोले, 'बहाना तो बढ़िया है। पास रहना जब इतना जरूरी है तब व्यर्थ में इतना खर्च बढ़ाने से फायदा क्या? चलो, समीरण के हाथ जोड़, पाँव पड़ वहीं रहें चल कर।'

जवाब नहीं दिया अपर्णा ने। बरेन की परवाह करना भी छोड़ दिया। कमरों में सामान जमा कर अगले ही दिन बेटी को साथ ले समीरण के घर गई। बेटी को आगोश में भर प्यार किया समीरण ने। इधर-उधर की बातें कर स्थिति सँभालने का प्रयास करते रहे। फिर रंगीन तस्वीरों वाली एक किताब उसे पकड़ा कर अपर्णा के करीब बैठ कर बोले, 'मेरे बर्ताव से तुम्हें बहुत दुःख पहुँचा है न?'

हँस कर अपर्णा बोलीं, 'आपका क्या ख्याल है?' फिर आन्तरिकता से कहा, 'आपको बहुत-बहुत धन्यवाद। आपने जो किया बहुत अच्छा किया। ऐसा करने से आपकी और मेरी दोनों की इज्जत रह गई।'

समीरणजी ने कहा, 'मैंने कई बार सोचा कि मुझे ऐसा नहीं कहना था। जाकर बरेन से माफी माँग कर कहूँ कि रह जा, जाने की जरूरत नहीं। फिर यह सोच कर चुप रह गया कि वह जिस मर्ज का शिकार हो रहा है उससे छुटकारा पाने का यही रास्ता है। यह सोच कर चुप रह गया मैं।'

'मर्ज छूटेगा या नहीं, यह कहा नहीं जा सकता। लेकिन आपने अगर कहा होता तो मुझे बहुत बुरा लगता, यह बात पक्की है।'

इसके बाद यह नियम बन गया कि पार्क से लौटते वक्त सुपर्णा 'चाचा' के घर जाती और उन्हें घसीटती अपने साथ ले आती। बरेन सोम का मुँह फूल जाता। पहले-पहले स्वागत-सत्कार तो दूर, दुआ-सलाम का जवाब भी न देते। फिर एक दिन बोल पड़े, 'फायदा इतना ही हुआ कि मेरा खर्च बढ़ गया!'

समीरणजी ने तपाक से उत्तर दिया, 'तेरे जैसे गदहे का घाटा नहीं होगा तो होगा क्या?'

वरेन सोम अब अपने घर में हैं। परवाह करने की जरूरत नहीं। डर भी किसका ? बोले, 'घाटा रुपयों तक ही सीमित रहेगा तो ?'

बड़ी आसानी से समीरणजी वरेन सोम के स्वभाव की कड़ुवाहट की उपेक्षा कर सके थे। इसी कारण अपर्णा के और उनके सम्बन्धों में कभी दरार नहीं पड़ी। बल्कि जैसे-जैसे दिन बीतते गये, वैसे-वैसे उनका निजी समझौता और विमल, और मधुर होता गया। कभी भी फुर्सत मिलते ही बेटी को लेकर अपर्णा समीरणजी से मिलने जाती हैं। उनके नौकर से घर-द्वार का, खान-पान का हाल पूछतीं, जरूरत पड़ने पर सलाह या निर्देश देतीं। जब जो बनातीं, वृन्दा के हाथों भेजतीं। सुपर्णा की पढ़ाई तो 'चाचा' की निर्देशना में चल रही थी, चलती ही रही।

दो-चार साल बाद अपर्णा वाले मकान का निचला माला खाली हुआ। तब तक वरेन सोम नौकरी में और उन्नति कर चुके थे। साथ ही सरकार से मिलने वाला मकान का किराया बाकी एलाउन्सों की तरह बढ़ा। निचला माला खाली होते ही अपर्णा ने उसे भी ले लिया। इस पर वरेन ने जो व्यंग्य किया उसकी परवाह न की। व्यंग्य का कारण यह था कि जब से उन्नति हुई, हाउस एलाउन्स बढ़ा, तब से वरेन कई बार मकान बदलने की बात कह चुके थे। अपर्णा राजी नहीं हुई थीं। उनका विचार था, मुफ्त में पढ़ाने वाला ऐसा मास्टर सुपर्णा को और कहाँ मिलेगा ?

यह लोग जब समीरणजी के घर में रहते थे, तब भी और अब भी, अपर्णा के ससुराल वाले यानी दोनों देवर और दोनों ननदें अक्सर आया करते। जब समीरणजी का मकान छोड़ यह लोग यहाँ आये तब अपर्णा ने ससुराल वालों के हाव-भाव में अजीब-सा बदलाव देखा था। इसलिये अपर्णा का विश्वास है कि वरेन ने समीरणजी के बारे में कुछ उल्टा-सीधा जरूर कहा होगा। अगर ऐसा नहीं, तो इस घर में समीरणजी उन्हें दिखाई पड़ जाते हैं तो वे लोग इतने चकित-विस्मित क्यों होने लगते हैं ? शादी के काफी दिनों बाद धीरा एक बार वर्धमान से पीहर आई थी। तब दो दिन वह अपर्णा के पास भी रही थी। उन दो दिनों में जब समीरणजी मिलने आये तो धीरा ने अफसोस जाहिर करते हुये कहा था, 'हाय बेचारे! यह जनम बेकार ही गया। न शादी किया, न घर बसाया!'

यह वरेन की बहन का कहना था और समीरणजी का क्वाँरापन वरेन के तो गले से उतरता ही न था।

निष्कर्ष यह कि वरेन के परिवार के हरेक का यही ख्याल था कि समीरणजी के शादी न करने का कोई कारण जरूर है। और इस कारण का नाम अपर्णा है। अपर्णा जब किसी के मुख पर यह भावना झूलते देखती हैं, देखती हैं उनकी दृष्टि की संशय-भरी जिज्ञासा, तो उन्हें बहुत बुरा लगता है। लज्जित होती हैं, क्रोधित होती हैं, घृणा और विद्वेष से भर जाता है उनका मन। मजे की बात मगर यह है कि यही संशय मगर अपर्णा को कभी नहीं हुआ, ऐसा भी कहा नहीं जा सकता। अक्सर उनका मन पूछ बैठता है—आखिर क्यों रह गये क्वाँरे समीरणजी ? क्यों नहीं की शादी ?

क्यों नहीं बनाया घर ? अपर्णा को दुःख भी होता है, पर उनका यह दुःख हर नीच-स्थूल-भावना के परे बहुत ऊपर विचरने वाला दुःख है।

एक बार एक बहुत बड़ी आफत आई। आफत क्या आई, भूचाल ही आ गया कहा जा सकता है। उस वक्त ऐसा लगा कि इस चोट से अपर्णा ही नहीं, उनका घर-परिवार, सब ही चूर-चूर होकर बिखर जायेगा।

सुपर्णा तब ग्यारह साल की थी।

दौरे पर से वरेन पाँच दिन बाद लौटे। मुख गंभीर, दृष्टि भयभीत। अक्सर चिन्तित, विमर्ष। जब से आये हैं, बाहर जाने का नाम नहीं लेते। कमरे में चुपचाप लेटे या बैठे रहते हैं। वापस आने के बाद तीन दिन दफ्तर भी न गये। अपने कमरे में बैठे दिन काट दिये। अपर्णा इतना तो समझ ही रही थीं कि कुछ अनहोनी हुई है। मगर उसका स्वरूप क्या है, यह वे जान नहीं पा रही थीं। पूछने गईं तो डाँट सुननी पड़ी। वह भी ऐसी डाँट, जिसमें शालीनता का नाम नहीं। उसके बाद ही अखबार की सुर्खियों में एक गजब ढाने वाला समाचार छपा। शरणार्थी विभाग के एक बड़े अफसर के जघन्य कारनामें। अट्ठारह वर्षीया एक मासूम शरणार्थी बालिका को लालच दिखा कर नष्ट करने की साजिश। उस बेचारी अनाथा के शीलहरण का समाचार। दो दिन और दो रात कैद रहने के बाद छूट पाई वह। छूटते ही एक राज-नैतिक दल के शरण में गई है वह। बड़े प्रयासों से इन समाजसेवियों ने जो तथ्य उद्घाटित किये हैं वह किसी को भी चौंकाने के लिये काफी हैं। सत्य उद्घाटित कर वे अब शोर मचा रहे हैं। न्याय की माँग में सोच्चार हो रहे हैं। दोषी जनों को दण्ड दिलवाने की माँग में जमीन-आसमान एक कर रहे हैं। उस अट्ठारह वर्षीया का चित्र भी छपा है अखबारों में।

अखबारों में सब कुछ छपा था, नहीं छपा था बस उस दोषी अफसर का नाम। वह तो अदालती कारवाई के दिनों में खुला। पर अखबार में समाचार पढ़ते ही अपर्णा का दिल धक् रह गया था। अखबार में नाम नहीं छपा तो क्या ? वे जानती हैं कौन है वह। क्या है उसका नाम। कोई पूछे तो अभी पहचनवा सकती हैं वे।

लाल होता मुँह और हाथ में अखबार थामे पहुँचीं उस कमरे में, जहाँ एक व्यक्ति ने तीन दिनों से अपने को कैद कर रखा है।

उन्हें सामने देखते ही वरेन ने मुँह फेर लिया।

आग बरसा रही थीं अपर्णा की आँखें। देखती रहीं। देखती रहीं। देखती रहीं। फिर जहर घोल कर बोलीं, 'मुँह फेर क्यों लिया ? बहुत शर्म आ रही है ?'

वरेन सोम और भी घूम कर बैठे।

घृणा से, क्रोध से जल-जल कर अंगार होती रहीं अपर्णा कई दिनों तक। वरेन की ओर देखते भी घृणा आती उन्हें। तमाम लोगों का आना-जाना लगा रहा। पुलिस भी आई। वरेन सोम नीचे आते। बातचीत होती। उनके साथ चले जाते। सुबह के

गये-गये शाम को आते। अपर्णा को पता चलता सब, पर न बोलतीं, न आँख उठा कर देखतीं।

उन्हें पता है, घर पर पत्र आया जिसमें वरेन की सामयिक बर्खास्तगी की सूचना थी। मुकदमा शुरू हुआ यह भी अपर्णा को पता चला। वकीलों का आना-जाना शुरू हुआ यह भी पता था उन्हें। इतना कुछ होता रहा, अपर्णा को पता चलता रहा, पर खुद कभी वरेन के सामने नहीं गईं, न आँख उठा कर देखा।

चिन्तित हो समीरणजी दौड़े आये। अपर्णा की तीव्र दृष्टि की कन्नी काट मित्र के कमरे में जा बैठे। घण्टे भर बाद निकल कर अपर्णा के पास पहुँचे। और कोई होता तो उन्हें देखते ही दरवाजा बन्द कर अपना क्षोभ, घृणा प्रकट करता। अपर्णा ने मगर ऐसा नहीं किया। आत्मा तड़प रही थी। आँखों से आग बरसा बोलीं, 'कैसे आये ? लग रहा है दोस्त की पैरवी करने आये हैं ?'

समीरण बाबू दुखी हो रुक-रुक कर बोले, 'नहीं। ऐसा तो नहीं। पर, विश्वास रख सकती हो, मैं मजा देखने या मज़ाक उड़ाने नहीं आया।'

अपर्णा को उन पर विश्वास था। उस दिन भी किया। समीरणजी के आने से उन्हें जरा निर्भरता मिली। उन दिनों की भयावह मानसिक स्थिति में समीरणजी की उपस्थिति से जरा थाह मिली। उन दिनों अगर उन्होंने हाथ पकड़ा होता, अगर कहा होता, 'बस, बहुत हो चुका नरक भोग, अब इस कीचड़ में नहीं रहना है तुम्हें, आओ अपर्णा, मेरे साथ चलो, तो क्षण भर के लिये भी वे द्विविधाग्रस्त न होतीं। फौरन चली जातीं। आज वे अस्वीकार नहीं करेंगी कि उन दिनों ऐसे ही आह्वान की आशा थी उन्हें। आया नहीं। यह दूसरी बात है कि सुपर्णा का भविष्य सोच उन्होंने मन बदला। दूसरा निश्चय लिया।

कुछ देर चुप बैठे रहे समीरणजी। फिर धीरे-धीरे कहने लगे, 'सब सुन कर यही लगता है कि कार्यक्षेत्र में उसके बहुतेरे दुश्मन हैं। उसकी द्रुत उन्नति से कइओं को ईर्ष्या है। यह तो होता ही है। उन्हीं लोगों ने जाल फैलाया था। इसे उस बात का अन्दाज़ न था। इसी कारण यह झमेला........'

समीरणजी के आगे अपर्णा ने संकोच नहीं किया था। लाजवश मुँह पर ताला भी नहीं लगाया था। पलट कर बोलीं, 'किस चीज का जाल ? लालच का ? कौन-सा प्रलोभन ? वह छोकरी ? अगर यह जाल न होता, अगर फँस न गये होते तो फिर ये दूध से सफेद ही रह जाते, यही कहना चाह रहे हैं न आप ?'

जवाब न सूझा। समीरणजी चुप रहे। फिर बोले, 'मगर पागलपन करने से भी क्या काम बनेगा ?'

'मैं जरा भी पागलपन नहीं कर रही। बिल्कुल स्वस्थ है मेरी बुद्धि।'

मुकदमे की कार्यवाही पूरी होते, फैसला निकलते पूरा एक साल लग गया। यह एक साल वरेन सोम को तनख्वाह के बदले सब्सिस्टेन्स एलाउन्स मिलता, यानी तनख्वाह का एक चौथाई। भाग्य से फैसला उनके हक में हुआ। अगर दोषी ठहराये जाते तो नौकरी तो जाती ही, जेल भी जाना पड़ता। अदालत में यह बात खुली कि जिसे नाबालिग और विपन्न शरणार्थी कन्या कहा जा रहा है, वह नाबालिग नहीं। उसकी आयु तेइस-चौबीस की है। वह शरणार्थी भी नहीं। सबसे अजीब बात यह थी कि वह विपन्न भी नहीं थी। यही उसका पेशा है। आक्षेप उठाने वालों ने उसे जिस सरल, सुन्दर जीवन की अधिकारिणी बताया था, ऐसा उसका जीवन कदापि नहीं। किसी प्रलोभन से उसे धोखा भी नहीं दिया गया था। ऐसे काम वह पहले भी कर चुकी थी। कहा गया था कि वरेन सोम के बंगले में वह दो रात 'कैद' थी, भाग कर जान बचाई है। जज साहब ने इस 'कैद' शब्द पर संशय प्रकट किया। क्या यह सच ही 'कैद' थी? फैसला सुनाते वक्त जज साहब ने कटघरे में खड़े अफसर पर दो-चार चुटीले मन्तव्य जरूर किये, पर सन्देह के अवकाश में उन्हें मुक्त भी किया।

नौकरी में वरेन सोम फिर से बहाल हुये। एक साल की बाकी बकाया तनख्वाह भी मिली। फिर भी, उनके सर्विस रिकार्ड का ब्लैक मार्क न घुला। आगे जो प्रोमोशन्स हो सकती थीं उनकी अब आशा कम ही है। उनकी दफ्तरी जिम्मेदारियों में भी रद्दोबदल किये गये। अब पहले की शान-बान दफ्तर में नहीं है उनकी।

मुकदमे के दौरान अपर्णा से कितनी बातें हुईं या कितने बार आमना-सामना हुआ यह तो उँगली पर गिन कर बताया जा सकता है। उन्हें चौथाई तनख्वाह में जो पैसे मिलते थे उसका चौगुना तो वकील के पीछे खर्च करते रहे। जमा-पूँजी जो थी वह भी निकालनी पड़ी थी। उस वक्त अपर्णा के पिता ने गृहस्थी चलाने का भार अपने ऊपर ले लिया था। नहीं, अपर्णा ने जा कर सहायता की माँग पेश नहीं की थी, वे ही आये थे। आप ही किया था जो उचित समझा। इस परेशानी के समय उन्होंने फिर से इस बात का अनुभव किया था कि बेटी की दुर्दशा के लिये वे ही जिम्मेदार हैं। इसलिये उस एक साल उन्होंने गृहस्थी ही नहीं चलाई, बेटी के भविष्य की सुरक्षा का भी अच्छा-खासा इन्तजाम किया।

नौकरी में फिर से बहाल होने के बाद जब बकाया रुपये मिले तब वरेन सोम पत्नी के कमरे में गये थे। पूछा था कि पिछले एक साल में ससुरजी से कितने पैसे लिये गये हैं।

तुनक कर अपर्णा ने जवाब दिया था, 'भीख भी कोई हिसाब लगा कर देता है? मेरे माता-पिता के पास इसका कोई हिसाब नहीं।'

दंभ से पाँव पटकते हुये वरेन सोम वापस चले गये थे। कम से कम अपर्णा को ऐसा ही लगा था। अपर्णा का ख्याल है कि वे सहनशीला हैं। इन मुसीबतों के बाद भी अगर वरेन अनुतप्त होते या अपने किये पर पछताते, परिताप की आग में आत्म-शुद्धि करते तो हो सकता है अपर्णा का हृदय अनुकूल होता, उन्हें पुनः स्वीकार

करतीं। लेकिन ऐसा कभी लगा नहीं। जो दिखा है वह क्षोभ था और थी असहिष्णुता। यदा-कदा उनकी घृण्य प्रवृत्ति को अधिकार विस्तार करने का प्रयास करते भी देखा है। अपर्णा ने हर बार निर्ममता से प्रतिरोध किया है। अशुचि स्पर्श से अपने को बचाती रही हैं। अशुचिता से सुरक्षित उन्हें रहना ही था; अतः निर्मम होते उन्हें जरा भी दुःख न हुआ।

वरेन सोम के मन की कन्दराओं में उफनते आक्रोश की बौछार अपर्णा पर आज भी पड़ती है। इसलिये उन्हें पता है कि वरेन के अन्दर कौन-कौन सी भावना घुमड़ रही है। घर पर जब तक रहते हैं, अकेले चुपचाप रहते हैं। वैसी कोई जरूरत होती है तो 'नन्हीं-नन्हीं' कर सुपी को पुकारते हैं। पत्नी से वार्तालाप भरसक नहीं करते। मित्र, यानी समीरण दत्त से मानसिक अलगाव बहुत दिन पहले ही हो चुका है। अब तो यह हाल है कि सामना भी हो जाये तो मुँह फेर कर हट जाते हैं। उन्हें अपमानित करने का हर संभव प्रयास करते हैं। ताज्जुब यह कि जिन दिनों कहर टूटा था, सारी दुनिया दुश्मन हो गई थी, समीरण दत्त ही एकमात्र व्यक्ति हैं जो उनके पास जाते, बैठते। अपर्णा जानती हैं, समीरण जी ने उन दिनों घृणा क्यों नहीं किया। क्यों नहीं मुँह फेर लिया। कारण था कि इन माँ-बेटी के प्रति ममता ने उन्हें बाँध लिया था। इसी कारण दोस्त को दिलासा देते, हिम्मत बंधाते, हौसला बढ़ाते। अपर्णा को यह भी पता है कि उन्होंने चोरी-चुपके पैसों से मदद करने की कोशिश भी की थी। यह दूसरी बात है कि रुपये लेने की जरूरत नहीं पड़ी। लेकिन, मुसीबत टलते ही वरेन ने दोस्ती का बदला अभद्रता से चुकाना शुरू किया। समीरणजी टाल जाते हैं। बुरा नहीं मानते। मानें भी कैसे? अपर्णा ने वरेन के बदले रुख को देखते ही समीरण जी से कहा था, 'आपको पता है कि ये सज्जन क्या हैं, कैसे हैं। आपकी परेशानी को मैं देख-समझ रही हूँ। फिर भी, हमें त्यागने के पहले एक बार हमारी बात भी सोच कर देखियेगा।'

नहीं त्यागा उन्होंने। बराबर आते हैं। सुख-दुःख में साथ देते हैं। सुपी की, उसकी माँ की, दोनों की मुसीबतों को बड़ी बारीकी से टाला। अगर समीरणजी न होते तो ईश्वर जाने सुपी ज्वार में बह कर कहाँ चली गई होती।

अपर्णा की इच्छा नहीं थी कि सुपर्णा को घर पर रखें। पिता के स्वभाव से उसका स्वभाव काफी मेल खाता है। कई बार सोचा, दूर कहीं किसी रेसिडेन्शल स्कूल में डालें। समीरणजी से इस पर काफी बातचीत भी की। सोच-समझ कर अन्त में सुपर्णा को अपने पास रखना ही ठीक समझा। इसका एक कारण था कि समीरणजी राजी नहीं हुये थे। उनका ख्याल है कि बेटी को अपनी आँखों के आगे रखना ही ठीक होता है। उसकी पढ़ाई के मामले में समीरणजी की कितनी मेहरबानी है, यह तो बताने की बात नहीं। उन पर यह जिम्मेदारी डाल शान्ति से रहती हैं वे। एक बात और भी है। अपर्णा का व्यक्तित्व बहुत ही विकसित है, उन्नत है। अपने चारों ओर उन्होंने कठोरता का जिरहबख्तर भी चढ़ा रखा है। फिर भी, सुपर्णा के बिना इस

विचित्र व्यक्ति के साथ एक ही मकान में रहने की बात सोचते ही दिल काँपने लगता है उनका।

उस भयानक घटना के बाद दस-ग्यारह साल बीत चले। मात्र एक मकसद सामने रख उन्होंने यह समय काटा है। मकसद है बेटी को यथा-संभव गुनी बना किसी योग्य वर के हाथों उसे सौंपना। यह समय उन्होंने आने वाले कल के दिन की प्रतीक्षा में काटा है। उसके बाद क्या होगा उन्हें मालूम नहीं। हो सकता है कलाई पकड़ने को समीरणजी आगे आयें। अगर ऐसा हो, उन्हें स्वीकार करना उचित होगा या अनुचित, इस पर ठण्डे दिमाग से समीरणजी से आलोचना भी की जा सकती है। इस परिणत आयु में ऐसा निर्णय लेने के कारण किसी के चोट खाने या न खाने का प्रश्न उठता ही नहीं। समीरणजी का आसन जहाँ है वहीं रहेगा, आगे चल कर जीवन का जो भी वास्तव रूप हो, इसका कोई परिवर्तन न होगा, यह अपर्णा का विश्वास है। यही उनकी कामना है। वे आगे आयें या न आयें, हाथ बढ़ायें या न बढ़ायें, लेकिन यह बात, यह सोच-विचार अभी नहीं। मुनी की शादी हो जाये, उसके बाद। कल का दिन बीत जाये, उसके बाद।

सात

पुरोहित जी ने हवन-सामग्री की बहुत लम्बी लिस्ट दी थी। सामान को लिस्ट के साथ मिलाते-मिलाते अपर्णा के मन में एक याद उमड़ी। विधिवत् बेटी की शादी कर रही हैं, अतः सारे अनुष्ठान ही विधिवत् करने का इरादा है। कन्या-सम्प्रदान भी विधिवत् ही करना है। पुरोहितजी के सामने यह प्रश्न उठा था। अपर्णा ने खुद कन्यादान करने की इच्छा व्यक्त की थी। पुरोहितजी एक तो बूढ़े, दूसरे, पूर्वी बंगाल के निवासी। सुनते ही उन्होंने कहा था, 'यह कैसे हो सकता है? बंगाल के देशाचार के अनुसार कन्यादान पुरुष करते हैं, महिलायें नहीं। पिता हैं, चाचा हैं दो, उन्हीं में से किसी से कहिये कि कन्यादान करें। उन्हीं का करना उचित होगा।'

पुरोहितजी की बात पर उस वक्त अपर्णा ने खास ध्यान नहीं दिया था। रूढ़िवादी पुरोहित तो ऐसा कहेगा ही। आजकल अक्सर ही महिलायें यह काम करती हैं, अपर्णा भी करेंगी। पर बाद में उन्होंने एक दूसरे दृष्टिकोण से इस बात पर गौर किया। कन्यादान में काफी समय और एकाग्रता चाहिये। अगर वे उसी में लग गईं तो बाकी काम कौन देखेगा? अतः उधर बवण्डर मचना क्या मुश्किल है? वरेन तो इसी मौके की तलाश में रहते ही हैं। इच्छा तो नहीं हो रही थी, पर सोच रही थीं कि देवरों को यह काम सौंपेंगी या नहीं। वे कहेंगी तो देवर मना नहीं करेंगे, पर उनकी इच्छा ही नहीं हो रही थी। सोचा था समीरणजी से सलाह करेंगी, पर भूल गईं।

काम तो न जाने कितना पड़ा है, पर कुछ भी हो नहीं पा रहा है। अब उन्हें अपने पर गुस्सा आ रहा है। क्या जरूरत थी इस फजीते की? रेजिस्ट्री शादी करना चाहता था रंजन। बेकार ही उसे मना किया। कर लेता तो इन झंझटों से तो मुक्ति मिलती। होनी है शादी, हो जाये, चाहे किसी भी नियम से हो। आचार से क्या फर्क पड़ता है, असल शादी तो हृदय की हृदय से होती है, एक दूसरे का मन-प्राण से स्वीकार करना ही तो विवाह है। वैदिक या आर्यसमाजी, धार्मिक या कानूनी से क्या फर्क पड़ता है?

घड़ी ने आठ बजाये। रात हो रही थी। सामान मिलाना छोड़ अपर्णा उठीं। एक फोन करना है। वरेन के कमरे में जाना है। देश-हित के लिये व्याख्यान दे रंजन लौटा ही होगा। शादी के मामले में लड़के पहले कैसा करते थे और अब कैसा कर रहे हैं! कितना बदल गया है जमाना, बदला है दृष्टिकोण! उनकी शादी के बाद उनकी दो छोटी बहनों की शादी हुई हैं। दो ननदों की भी शादी हुई हैं। हर बार ही उन्हें लगा है कि शादी के पहले वर लोग भी ललचाये रहते हैं। बहाना भर मिल जाये, जीभ लपलपाते हुये आ पहुँचते थे। ससुराल की हर चीज, हर व्यक्ति से असा-

धारण लगाव प्रकट होता था। बहनों की शादियों में पीहर में जा कर रहना पड़ा था अपर्णा को, ननदों की शादियों में जाने, रहने की तनिक भी इच्छा न थी, पर वह भी करना पड़ा था। उन्ही दिनों उन्होंने यह सब देखा-जाना था।

सुधी बरामदे में मिल गई। पिता के कमरे से लौट रही है। मुस्करा भी रही है, खिसियाई भी है। बोली, 'देखो न माँ, पापा भी क्या हैं! तब से कमरे में बैठे हैं। इतना भी नहीं होता कि जरा बाहर आयें या टहलने जायें।'

'क्यों?'

'क्यों क्या, ऐसे ही! देख तो रहे हैं कि इतने लोग आये हैं, इतना काम है बिखरा हुआ। देख-सुन सकते हैं, इन्तजाम कर सकते हैं, बातचीत कर सकते हैं, सो नहीं, कमरे में बैठे हैं तब से।'

'पापा निकलें बाहर और तू फोन से चिपक जा, यही मन्शा है न?'

हँस कर माँ से लिपटने लगी सुपर्णा। हँसी तो अपर्णा को भी आई पर खीजती हुई बोली, 'बस कर। अब परे हट। फोन करने मैं ही जा रही हूँ। पूछ लूँगी, कल कितने बजे गाड़ी भेजनी है। अभी तक यही पता नहीं चला कि कितने लोग आयेंगे? एक बस और एक गाड़ी से काम हो सकेगा या नहीं?'

लड़के के बाप से कुछ और बातें भी हैं जो सुपर्णा से बताने की नहीं। नकदी के तीन हजार कल ही देने हैं। साधारण तरीके से तो कल शाम द्वाराचार के बाद ये रुपये उनके हाथ पर रखना है, पर यह देखने में बहुत भद्दा लगता है। अतः कल सुबह जाकर उन्हें उनके घर पर दे आयें तो कैसा रहे, यही पूछना है।

अपर्णा ने कमरे [redacted] प्रवेश किया। वरेन सोम के आगे अखबार था। उनके आने की आहट पर अखबार हटा। अपर्णा ने ध्यान नहीं दिया। कुछ कहा भी नहीं। रिसीवर उठा नम्बर डायल करने लगीं। फोन की घण्टी बजने लगी। बजती ही रही। उठाने का कोई प्रयास नहीं। बहुत देर बाद किसी ने उठाया। रंजन के बड़े भाई की पत्नी बोल रही थी।

अपना परिचय दे अपर्णा ने कहा, 'कुशल तो है?'

'हाँ', जवाब कटा सा। बेजान सा।

'रंजन किस गाड़ी से आ रहा है?'

'अभी तक आया नहीं।'

बात करने का यह विचित्र तरीका अपर्णा को अत्यन्त नाराज और चकित कर रहा था पर उन्होंने उसे प्रकट होने न दिया। रंजन सामने होता तो उसे झिड़कतीं।

'अभी तक नहीं आया? देखो जरा! आज रात को और कोई गाड़ी है? कब आती है वह?'

जवाब में सुनाई दिया कि 'गाड़ी तो शायद एक और है पर उसका टाइम पता नहीं?'

बेकार, बेमतलब परेशानी बढ़वा देना किसे अच्छा लगता है? देयर ग

है, पर यह ऐसे बोल रही है जैसे कोई परदेसी या अजनबी हो। शादी के मामले में इसे कोई इण्टरेस्ट है ऐसा लगता ही नहीं। लग रहा है कि सारी जिम्मेदारी कन्यापक्ष की ही है !

अपर्णा ने पूछा, 'तुम्हारे ससुर जी घर पर नहीं हैं ?'

जवाब आया कि सास-ससुर कोई भी घर पर नहीं।

हो ही सकता है। उन्हें भी काम है। लोगों को निमंत्रण देना है।

क्षण भर चुप रह कर अपर्णा बोलीं, 'तुम्हारे ससुरजी के आते ही उनसे कहना कि मुझे एक बार फोन करें। याद तो रहेगी न ?'

फोन रख अपर्णा चलने लगीं।

'सुनो।'

मुड़ीं।

'कल वृद्धि-सम्प्रदान वगैरह कौन करेगा ?'

अपर्णा ने देखा। वरेन ने बात चलाई इसलिये जवाब न दे उन्होंने भी पलट कर सवाल ही फेंका, 'क्यों ? क्या तुम करोगे ?'

सोच कर ही मजा आया कि अपने पितृपुरुषों का वृद्धि श्राद्ध कर ये सज्जन रंजन बोस के हाथों बेटी को सौंप रहे हैं। बात उन्होंने कही तो थी सादगी से पर उसमें निहित व्यंग्य धार सा चुभ गया। बल पड़े वरेन सोम के माथे पर। 'मेरी बेटी का कन्यादान मैं नहीं करूँगा, तो क्या तुम्हारे समीरण दत्त आकर करेंगे ?'

अपर्णा को लगा कि नसें फट रही हैं। पर नहीं। आज वाद-विवाद नहीं। घर में मेहमान ही मेहमान भरे पड़े हैं, इतने दिनों तक यह भद्दापन सहती आई हैं, एक दिन और सही। कल का दिन निकल जाये। बर्फ सी शीतल दृष्टि से वरेन को बींधती चलने लगीं।

'रुको। सुनो, वृद्धि और सम्प्रदान दोनों मैं ही करूँगा। इन्तजाम ठीक कर रखना।' कहते-कहते वरेन सोम ने तकिये के नीचे से चाबी निकाल सेफ खोला। नोटों की बण्डलें सामने ही रखी थीं। दोनों हाथों से सारे नोट एक साथ उठा लाये। करीब आकर बोले, 'लो, पकड़ो।'

अपर्णा विमूढ़ सी देखती रहीं। यह कैसे रुपये, कितने रुपये, कुछ समझ कर कुछ बिना समझे ही अपर्णा ने हाथ बढ़ाये। सौ, दस, पाँच रुपयों की नोटों की बण्डलें उनके हाथों में आईं। उंगलियाँ छू गईं। अपर्णा को वरेन का हाथ तपता लगा। दस रुपयों का एक बण्डल जमीन पर गिरा। वरेन ने उठा कर दुबारा अपर्णा की हथेली पर रख दिया। 'नकद के तीन हजार और फ्रिज के चार हजार मिला कर तुमने खर्च का जो हिसाब बताया था क्या उतने से ही काम पूरा हो रहा है या उसके आगे भी बढ़ा है ?'

'पता नहीं, अभी हिसाब लगाया नहीं।'

वरेन सोम ने कहा, 'नकदी के तीन हजार घटा देने से रहते हैं सत्ताईस

हजार। जेवर के लिये चार हजार तुम्हें पहले दे चुका हूँ। तुम्हारे बताये तीस हजार के बाकी तेइस हजार इसमें हैं, गिन लो।"

अपर्णा ने सोचा शायद वरेन नकदी देना नहीं चाहते—जो दिया बहुत दिया। यह भी देंगे इसकी उम्मीद उन्हें न थी। हो सकता है कि प्राविडेण्ट फन्ड और जीवन बीमा के सारे पैसे निकाल कर आज अपर्णा को नीचा दिखाने की कोशिश की जा रही है। शायद क्यों, यही हकीकत है, नहीं तो इतने पैसे देते कहाँ से? फिर लगा, इतने रुपये ही दिये तो नकदी के तीन हजार न दे अपनी इज्जत घटाने वाले व्यक्ति तो ये हैं नहीं।

वरेन सोम ने कहा, 'नकदी के तीन हजार उन्हें दे दिये गये हैं।'

नकदी शब्द बार-बार सामने आ रहा था। हर बार अपर्णा के कानों में खटक रहा था। अन्तिम वाक्य सुन अपर्णा की हैरत का अन्त न रहा। हैरत ही नहीं, इतना अधिक चकित हुई वे कि विश्वास नहीं कर पा रही थीं। उनका विस्मय का सबसे बड़ा कारण था दहेज की नकदी देने का यह अभिनव तरीका। शादी के पहले, चुपचाप रुपये दिये भी गये, ले भी लिये गये? ऐसा भी होता है कभी?

'दे दिये गये हैं? किसे दे दिये गये हैं?'

'वृन्दा के घरवाले निरंजन को नहीं, ठीक जगह ही दिया गया है। यकीन न हो तो फोन से पूछ लो।'

अपर्णा के विस्मय का अन्त नहीं। अपर्णा को विश्वास है कि बिना वजह कुछ भी करने वाला आदमी यह नहीं। मगर इस आचरण का सर-पैर कुछ समझ में नहीं आ रहा था। फिर लगा, यह सब तैश है। महज तैश दिखाने के लिये किया जा रहा है यह सब। तैश के मारे ही उस दिन चार हजार जेवर के लिये दिये थे और आज इतने सारे रुपये भी उसी के चलते दे रहे हैं। और तैश दिखाने के लिये पहल कर उन्हें नकदी के रुपये भी दे आये हैं।

'कब दिया है?'

'कई दिन हो गये।' वरेन सोम लेट गये। अखबार का पन्ना फिर से खुल गया।

दोनों हाथों में नोटों की बण्डलें लिये अपर्णा कमरे के बाहर आई। रुपये के स्पर्श को सोख कर रहा था दो तप्त हाथों का स्पर्श। उनकी हथेलियाँ जल रही थीं।

सुपर्णा फिर मिली। खुशी से अंग-अंग दमदमा रहा था। कुछ कहते-कहते रुक गई। माँ के हाथों पर दृष्टि गई। 'यह क्या माँ? कैसे रुपये हैं ये?'

अपर्णा ने देखा उसे, बोलीं नहीं।

सुपी की खुशी में ज्वार आया हँसे। 'पापा ने दिये? शादी के लिये? सारे रुपये शादी के लिये?'

बुरा लग रहा था अपर्णा को। बोलीं नहीं, सिर हिला भर दि-

सुपर्णा और भी खुश हुई। 'बेकार ही तुम पापा को जब-तब

हो। कहती थीं तुम कि पापा एक दमड़ी भी नहीं निकालेंगे। देखो तो कितने अच्छे हैं पापा। इसके पहले भी चार हजार दे चुके हैं।'

अपर्णा को खूब अच्छी तरह से पता है कि बेटी का बाप से लगाव है। श्रद्धा-समीह हो या न हो, लगाव जरूर है। तनतना कर बोलीं, 'नहीं देते तो क्या व्याह तेरा रुक जाता ?'

सुपर्णा हँस दी। बोली, 'शादी रुकती तो नहीं माँ, पर पिता के होते नाना के रुपयों से शादी हो रही है यह किसे अच्छा लगता है माँ ?'

'अब खूब अच्छा लग रहा है, क्यों ?'

'सो तो लग ही रहा है।'

अपर्णा तिलमिला गईं। बेईमान कहीं की। भूल गई वे दिन, जब नाना के रुपये न होते तो भूखों मरना पड़ता।

नाराज हो अपने कमरे की ओर चलने लगीं अपर्णा। सुपी ने नीची आवाज में पूछा, 'फोन किया था माँ ? देश की समस्याओं को सुलझा नेताजी वापस आ गये ?'

चिन्ता के लोक से वास्तव में उतर आईं अपर्णा। हाथ में रुपये थे इसलिये बरामदे में न रुक कमरे में पहुँच कर ही रुकीं। बोलीं, 'नहीं, देख तो सही यह कैसी बुद्धिमानी है उसकी ?'

सुपर्णा की भौंहें तनीं। फिर हँस पड़ी। बोली, 'ऐसा ही है माँ वह। ऐसा अजीब ही है उसका स्वभाव।'

बाकी दुनिया के स्वभाव से उसका स्वभाव भिन्न है, इसी से सुपर्णा फूली नहीं समा रही है। पता नहीं, उसे क्या याद आया कि खिलखिलाती हुई वह माँ से लिपट गई। अचानक इस आलिंगन से अपर्णा के हाथों से नोटों के कुछ बण्डल गिर पड़े। सुपर्णा हँसती ही रही।

'अरे छोड़, लड़की', अपर्णा ने डाँट कर कहा, 'रात बीतते शादी है तेरी। अभी तक अक्ल नहीं आई। ऐसा भी क्या खी-खी ही-ही। चुप हो।'

'वाह माँ ! कल – कल नहीं, परसों सुबह जब ससुराल जाऊँगी, तब तो रोऊँगी, आज क्यों न हँसूँ ?'

'अच्छा हँस। परे हट कर हँस, जितना तेरा दिल चाहे।'

परे हटने के बदले सुपर्णा ने माँ को और जोरों से जकड़ लिया। और उफन-उफन कर हँसने लगी।

'क्या हो गया री, तुझे ?'

'अच्छा माँ', हँसी रोकने का व्यर्थ प्रयास करती सुपर्णा बोली, 'अगर ऐसा हो कि देश की भलाई में व्याख्यान देते-देते नेताजी भूल ही गये कि उनकी शादी है। आये ही नहीं। इधर हमारे घर में खचाखच मेहमान भरे, सारा इन्तजाम पक्का, मैं सज-धज कर मौर बाँधे बैठी, तब क्या होगा ?'

फिर ही-ही-ही की झड़ी लगी। सुपर्णा की बात की पहली प्रतिक्रिया अपर्णा के मन में जो हुई वह थी नाराजगी की। अशुभ की छाया का त्रास था उनकी नाराजगी से मिला हुआ। पर बाद में उन्हें भी हँसी आई। यह सोच कर कि यह कल्पना कितनी अवास्तव और कितनी असंभव है। वे खुद भी हँसने लगीं। बोलीं, 'कोई बात नहीं। तेरी शादी हम कल कर ही देंगे। रंजन नहीं आयेगा, तो वृन्दा का छोटा लड़का है न। उसकी शादी नहीं हुई है। उसी से कर देंगे तेरी शादी। अब तो खुश है न? छोड़ मुझे।'

माँ को झकझोर सुपर्णा भाग खड़ी हुई। नोटों की बिखरी हुई बण्डलों को समेट कर अपर्णा ने आलमारी खोली। सहेज कर बण्डलों को रखा। उनका मन आज बहुत चंचल है। यह चंचलता मन के किसी कोने में अब तक दुबकी पड़ी थी, सुपर्णा के जाते ही फैलने, पंख पसारने लगी। रुपये हाथ में लेने के साथ ही चंचल होने लगा था मन। इसमें शक नहीं कि अपर्णा को अपना तैश दिखाने के लिये ही वरेन ने ऐसा किया है। प्राविडेण्ट फण्ड का पैसा लिया। बीमा के पैसे निकाले। या शायद कर्ज लिया हो दफ्तर से। तैश के मारे अपनी जमा-पूँजी सारी फूँक डाली। वे पैसे दें तो अपर्णा कर क्या सकती हैं? माँगा भी नहीं था कभी। उनसे रुपयों की आशा भी नहीं की थी। सारे पैसे निकाल लाये। भविष्य के लिये अब शायद ही कुछ बचा होगा। खैर, अब भविष्य की चिन्ता भी क्या? बेटी अपने ठिकाने लग रही है। अपर्णा भी जल्दी ही अलग हो जायेंगी। वे न तो वरेन से कुछ लेंगी न कुछ माँगेंगी। अभी कई साल हैं रिटायरमेंट को। आगे खूब डट कर पैसे जोड़ेंगे और अपना भविष्य सुरक्षित करेंगे। रोकने वाला कौन है?

रुपये लेते समय हाथ छू गये थे। गरम लगी थी हथेली की पीठ। प्रेशर बढ़ा होगा। सुपर्णा ने एक दिन कहा था कि आजकल डाक्टर को घर बुला प्रेशर चेक कराया जा रहा है। दिन-रात तैश दिखाने और दूसरों को नीचा दिखाने के फेर में जो रहेगा उसका प्रेशर चढ़ेगा नहीं तो क्या होगा? जाने दो। मगर उन्हें यह क्या हो रहा है? मन में घुमड़ती इस चंचलता का, इस परेशानी का क्या कारण है? बँधे स्टॅन्ड के बाहर इस आदमी को आज उन्होंने काफी कुछ करते देखा है। भाइयों और बहनों को एक दिन पहले से बुला उनकी परेशानी बढ़ाने की चेष्टा करते देखा है। साथ ही रसोइया ठीक किया, बाजार जा खूब सारा सामान खरीद लाया, कि उन्हें तकलीफ न हो। देख ही रहा है कि पिछले दिनों से कितने पैसे खर्च हो रहे हैं। जब तक चुप था, सोचता होगा कि माँगे तो दूँ। आज मगर बिना माँगे ही सारा पैसा दे दिया। सुबुद्धि आई है उसमें? क्या यह सब सुबुद्धि जागने के लक्षण हैं? छोड़ो। हटाओ। सोच कर भी क्या होगा? सुबुद्धि-कुबुद्धि की आँखमिचौनी पूरी हो चुकी है। अपर्णा का अब किसी से कुछ फर्क नहीं पड़ता। खुश रहे, आबाद रहे। अपन बुरा नहीं चाहतीं। न कभी चाहेंगी। वे जो भी करेंगी, केवल अपनी करेंगी। अपने नरकवास का अन्त करने के लिये करेंगी। ग्यारह सम्

को पथरा देने के लिये काफी हैं। सिर्फ ग्यारह वर्ष क्यों ? प्रवृत्ति की लोलुप बलि-देवी पर बलि तो दी गई थी सत्रह साल की एक मासूम लड़की। आज की अपर्णा की पथराई भावनाओं के नीचे सत्रह साल की उस लड़की का आर्तनाद दबा पड़ा है।

अपर्णा के मन का खाना सूना पड़ा है। जितनी दूर निगाह दौड़ती है सूना ही सूना है। आशा संजोने लायक प्रकाश की एक रेखा भी कहीं बची नहीं है।

अब किसी मृगजल का स्वप्न देखने की गुंजाइश नहीं, जरूरत भी नहीं।

धड़ाम से एक शब्द हुआ। अपर्णा चौंकीं। फिर देखा, आवाज कमरे में ही हुई। अपने अनजाने ही उन्होंने आलमारी के पल्लों को पूरी ताकत से बन्द किया है। धमाका उसी का था।

कोई बात नहीं। इतना बड़ा काम सामने है, पूरा न होने तक तो परेशानी रहेगी ही। मन तो चंचल होगा ही। यह और कुछ नहीं। सुपर्णा की शादी हो जाते ही उनको शान्ति मिलेगी। आश्वस्त हो सकेंगी। दिल-दिमाग को तरावट मिलेगी।

सारे कामों से फुर्सत पाकर अपर्णा को जब आराम करने का मौका मिला तब रात के साढ़े दस बज चुके थे। कमरे में आ पलंग पर बैठी ही थीं कि शाम की तरह मन फिर परेशानी से घिरने लगा। अजीब सी दहशत् से भरने लगा। अपर्णा ने अपने को यह कह दिलासा दिया कि रात बीतते ही बेटी की शादी है। सहायता करने, कन्धा लगाने वाला कोई है नहीं। ऐसी विकट परिस्थिति में मन परेशान न रहेगा तो क्या बादलों में छलांग लगाता फिरेगा ? चलते वक्त समीरणजी कह कर गये हैं, बाकी रात चिन्ता छोड़ सोने का प्रयास करना। साधारण सी बात, पर इतना अच्छा लगा था सुन कर। दिल भर गया था। वृन्दा आ कर छोटे-बड़े सबको खाने के लिये नीचे बुला ले गई है। अगर अभी से खाना शुरू न होगा तो काम पूरा करते-कराते रात के डेढ़-दो बज जायेंगे। इसीलिये ऊपर इस वक्त जरा शान्ति है। अपर्णा का बड़ा मन था कि समीरणजी को अभी जाने न दें। कुछ देर और रोकें। अपने कमरे में ला कर बिठायें। शान्ति से आलोचना करें। साहस और सहानुभूति से भरी दो-चार बातें सुनें। वे ही जानती हैं, इस वक्त वे किस प्रचण्ड त्रासदी में जी रही हैं।

पर बुला न सकी थीं। पता नहीं कौन कब ऊपर आये, और फिर न जाने क्या सोच बैठे। इधर बहुत सालों से किसी के सोचने-बोलने की परवाह न की थी अपर्णा ने। आगे भी नहीं करेंगी। पर आज का दिन, आज की रात एक सम्पूर्ण भिन्न प्रकार की है। आज किसी की आँख अगर अस्वाभाविक ढंग से झपके तो वह भी बर्दाश्त के बाहर है। एक बात यह भी है, कि बुला कर समीरणजी से कहतीं भी क्या ? आलोचना भी किस विषय पर करतीं ? चलते वक्त समीरणजी ने जब कहा, 'अब चलूं, कल सुबह फिर आऊंगा', तो अपर्णा से एक शब्द भी कहा न गया। चुपचाप आँखें फाड़े देखती रह गई थीं।

समीरणजी अपर्णा के मन की दशा उन्हें देखते ही जान गये थे। अगर किसी

कि कहाँ का फोन है, क्योंकि जब वे फोन कर रही थीं तब कान खोल कर सुना जा रहा था। अपर्णा ने कहा था न कि जब भी आयें, ससुरजी से कहना फोन करें। यह भी पता है कि इस वक्त ऊपर कोई है नहीं, सभी नीचे खाना खाने गये हैं। इसीलिये चुपचाप पड़े हैं कि जिसका फोन है वही आ कर उठाये।

फोन बज रहा है। अपर्णा उठीं। बरामदे के कोने वाले कमरे की तरफ बढ़ीं। गुस्सा बहुत आ रहा था। कमरे में पाँव रखा। देखा श्रीमान् चित् पड़े हैं खाट पर। आँखें बन्द हैं। जी चाहा, आँखों से झरती आग से झुलस दें सोने वाले को। पर, न जाने क्यों हिचकिचाईं। आगे बढ़ कर फोन उठाया।

'हलो।'

उधर से पूछा गया, 'कौन ? सुपी ?'

पुरुष स्वर। पर रंजन की आवाज नहीं। सोचने लगीं। सोचने लगीं कौन हो सकता है। कठोर होने लगीं मुख की रेखायें, 'नहीं, मैं सुपी की माँ बोल रही हूँ। आप कौन बोल रहे हैं ?'

'जी, मैं विकास हूँ। सुपी के पिता से जरा काम था। घर पर नहीं हैं वे ?'

कठोर ही रहा अपर्णा का मुख। मुड़ कर खाट की ओर देखा। वह आदमी उसी तरह आँखें मूँदे पड़ा है। मुख बहुत ही लाल है। अपर्णा निश्चित रूप से जानती हैं कि नींद का बहाना बनाये पड़ा है।

अपर्णा की आवाज धीमी थी, पर शीतल और कठिन थी। बोलीं, 'हैं। सो रहे हैं।'

फोन के उस पार थमकने का आभास हुआ। स्वर में कुछ संकोच, कुछ संशय उभरा। 'सो रहे हैं....बहुत जरूरी काम था....बाहर से मेरे बड़े भाई आये हैं....सोम साहब ने कह रखा था कि उन्हें भाई साहब के आते ही बता दूँ।'

'लाइन रखो।' रिसीवर पर हाथ रख फिर मुड़ीं। आवाज में तेजी आई, 'तुम्हारा फोन।' लगा नींद ही खुली। चौंक कर उठ बैठे बरेन सोम। पलंग से उतर डगमगाते कदमों से फोन की ओर बढ़े।

फोन के रिसीवर को हाथ से दबा अपर्णा ने कठोरता से कहा, 'तो तुम सो नहीं रहे थे ?'

हाथ बढ़ा रिसीवर लेते वक्त बरेन सोम ने अपर्णा को पूर्ण दृष्टि से देखा। बोले नहीं। आँखें भी खूब लाल थीं।

रिसीवर लेते वक्त फिर हाथों का स्पर्श हुआ। अपर्णा चौंकीं। लगा हाथ तो नहीं छू गया, अंगार छू लिया था। रिसीवर पकड़ा उन्हें वहाँ से जाना था, पर जा न सकीं।

'विकास ?'

'आये हैं ? मेरी तबीयत ठीक नहीं है। कहना कल सुबह—नहीं, कल सुबह नहीं, वृष्टि आयी है, सुबह नहीं हो पायेगा...कल किसी वक्त मैं अवश्य ही उनसे मुलाकात करूँगा···हाँ, ठीक है।'

रिसीवर रख दिया। अपर्णा के सामने खड़े हुये। उनकी आँखों में देखते हुये बोले, 'क्या कह रही थीं तुम ?'

अपर्णा से कुछ कहा न गया। उन्हें पता चल चुका था कि या तो तेज बुखार, नहीं तो बड़े प्रेशर से अर्द्ध-चेतन पड़े थे।

भर्रायी हुई आवाज में वरेन सोम ने फिर कहा, 'फोन की घन्टी सुनी न थी मैंने, पर तुमने जब पुकारा तब सुना था मैंने। आई बात समझ में ?'

लाल होती आँखें अपर्णा को बींध रही थीं। स्नेह दृष्टि में था, बातों में भी। लगा, कह रही हैं आँखें, 'तुम्हारी पुकार मुझे हमेशा सुनाई देती है।' अपर्णा का जी जल गया। बीमार होने का यही वक्त मिला ? उन्हें लगा कि ऐन वक्त पर यह बीमारी भी उन्हें परेशान करने की साजिश का अंग है। जान-बूझ कर ठीक समय पर बीमार हो गये हैं। कल इतना बड़ा काम है घर में। तबीयत नासाज होने के साथ ही क्या इन्हें डाक्टर को बुलाना नहीं चाहिये था। न बुला कर इतना बड़ा लिया है।

वरेन सोम के कदम पलंग की ओर बढ़े, अपर्णा के किवाड़ की ओर।

'बत्ती बुझाती जाओ।'

अपर्णा वापस मुड़ीं। बत्ती बुझाते वक्त फिर वरेन के मुख पर निगाह पड़ी। लेटे हैं, आँखें मगर खुली हैं। देख रहे हैं। उन्हीं को। दृष्टि पलकहीन है।

खट से स्विच बुझा फिर बाहर की ओर बढ़ीं। अपर्णा के मन में वितृष्णा ही वितृष्णा भरी थी। सोचा, इस आदमी को पता चल चुका है कि अन्तिम फँसने का वक्त आ गया है, इसीलिये आज ऐसे हाव-भाव, ऐसी दृष्टि।

पता चला जरूर है, पर बहुत देर हो चुकी है। अपर्णा का अब करने को कुछ बचा नहीं है। उनका फँसना जो है सो है। उन्हें भुलावा देने लायक अब कोई मुगालता दिया नहीं सकते वरेन।

खाना खाने बैठीं, मगर खाया न गया अपर्णा से। इच्छा ही नहीं हो रही थी। वृन्दा बड़बड़ाने लगी, 'तुम्हारा यह हाल है, उधर बाबू ने भी कुछ नहीं खाया। देखा, कमरे की बत्ती बुझी है। बिटिया को भेजा कि पूछ कर आओ, वह वहाँ से देख कर आई तो बोलीं कि बाबू की तबीयत ठीक नहीं, खाना नहीं खायेंगे।'

पता नहीं क्यों, बेटी पर भी गुस्सा आ रहा था अपर्णा को। पता नहीं, क्या है उसकी तकदीर में। रंजन जितना भी अच्छा क्यों न हो, स्वार्थीपन कभी नहीं सहेगा वह। पता नहीं क्यों, आज उन्हें बेटी स्वार्थी लग रही थी।

इस ख्याल के साथ ही रंजन के घर का ख्याल आया। कैसे

वे लोग ? फोन करने को जार-जार होकर कहा, मगर फोन नहीं किया उन लोगों ने। रंजन के माँ-बाप अभी लौटे नहीं ? या उस बहू ने कहा ही नहीं ! भूल गई होगी। फिर से चिढ़ होने लगी। अब अगर फोन आये तो ? आयेगा तो जो कमरे में है उठ कर फोन उठायेगा जरूर। अपर्णा पर बदला लेने के लिये ही उठायेगा और सोती अपर्णा को जगा कर कहेगा, 'तुम्हारा फोन।'

इस वक्त अपर्णा सारे मन-प्राण से चाह रही हैं कि आज अब फोन न आये। बातचीत जो होनी है कल ही होगी।

आठ

अगला दिन।

पिछले ग्यारह वर्षों से जिस दिन की आतुर प्रतीक्षा थी, आ गया है यह दिन। पौ फटने के पहले कमरे से निकल अपर्णा बरामदे में आईं। उठी हैं और पहले। उषाकाल से पहले ही बुआ दोनों ने सुपी को दही-चूड़ा खाने को उठा दिया था।[1] दधि-मंगल के बाद सुपर्णा फिर सो गई थी। यह लड़की सो भी कितना सकती है!

अपर्णा जब बरामदे में आईं, दिन तब तक निकला न था। आकाश में हल्की लाली छाने लगी थी। अपर्णा के अन्तर्मन से कृपा-भिक्षा की प्रार्थना जागने लगी। हे प्रभु, आज का दिन शुभ हो, मंगलमय हो। आज का काम भले-चंगे पूरा हो जाये। आज के प्रभात के साथ जो दिन आयेगा उसमें इस जीवन के आधे-अधूरे हिसाब-किताब सब पूरे हो जायें।

बाईं आंख रह-रह कर फड़क रही है। सुना है बाईं आंख का फड़कना शुभ होता है। चौंक कर इधर-उधर देखा। कोने वाले कमरे का किवाड़ खुला है या बन्द, यह पहले ख्याल नहीं किया था। उस कमरे के अधिवासी भी बरामदे में आये हैं। एकटक देख रहे हैं अपर्णा को।

आँखें मिलीं। क्षण भर। मुख पर सलाई—केश बिखरे। रात भर की उनींदी से जैसा लगता है बिल्कुल वैसी शक्ल-सूरत। आज का यह दिन और दिनों से भिन्न है, यह सुबह भी भिन्न है। अपर्णा अगर चाहतीं तो क्या पूछ नहीं सकती थीं, 'रात भर जरा भी नहीं सो पाये?' मगर नहीं, यह पूछना बहुत अधिक इन्टरेस्ट दिखाना होगा। वहाँ से हट गईं वे।

बाईं आंख फड़क रही है, लेकिन साथ ही, दिन चढ़ने के साथ ही कल से पनपती परेशानी भी बढ़ने लगी। देवर बुला रहे हैं, ननदें बुला रही हैं, वृन्दा बुला रही है बार-बार। डेकोरेटर और बिजली मिस्त्री का काम पिछले दिन ही पूरा हो चुका था। आज वे भी बुला रहे हैं, यह पूछने को कि क्या और भी कुछ करना है। केटरर अपने दल-बल सहित आया है। उन्होंने भी किसी न किसी समस्या को सुलझाने के लिये दो-चार बार बुलाया। साँस फूलने लगी अपर्णा की। खीझ भी हो रही है। आखिरकार, वे भी तो बेटी की शादी पहली बार ही कर रही हैं, यह सब उनसे क्यों

---

१. विवाह, उपनयन आदि शुभ अवसरों पर जिसका विवाह या जनेऊ होता है, बंगाल के देशाचार के अनुसार उसका व्रत रहता है। अतः दिन निकलने से पहले शंख-नाद के बीच उसे दही-चूड़ा खिलाया जाता है। इसे दधि-मंगल कहते हैं।

पूछ रहे हैं ? बेटी की शादी का, रीत-रस्म का, केटरर-डेकोरेटर की समस्याओं का ये क्या जानें ? कौन दो-चार बेटियाँ ब्याहने का अनुभव है उन्हें।

नीचे जाते वक्त समीरणजी सीढ़ी के सामने मिले। अपर्णा ने जरा तेजी से कहा, 'अब आने की फुर्सत मिली आपको ? जरा देखिये, किसे क्या चाहिये। जो आपको उचित लगे वही करने को कह दीजिये।' वृन्दा पास ही में थी। उससे बोलीं, 'जो भी पूछना है इनसे पूछ लेना, जैसा कहें वैसा करना। मुझे अब मत बुलाना।' समीरणजी से फिर बोलीं, 'जरा रुकिये....'

कमरे में जा आलमारी से दस, पाँच और एक रुपये के नोटों के बण्डल निकाल कर एक रूमाल में लपेटती बाहर आईं। बोलीं, 'ये अपने पास रख लीजिये, जिसे जो जरूरत हो दे दीजियेगा। अब मुझसे नहीं होता।'

समीरणजी ने पूछा, 'कितने रुपये हैं यहाँ ?'

'लाख दो लाख होगा। आपको हिसाब नहीं रखना है।'

आगे बढ़ते कदम रुक गये। मँझली ननद धीरा सामने खड़ी है। उसकी दृष्टि से कुटिलता छलक रही थी। लगा, उसकी आँखें कह रही हैं, 'शादी किसकी बेटी की है और भरोसा किस पर किया जा रहा है, देखो भला !' वृन्दा का मुँह भी फूला हुआ है। आफत है ! यह लोग भी खूब हैं, क्षण भर को यह लोग अपनी बात भूल नहीं पातीं।

दिन काफी चढ़ चुका है। वृद्धि-श्राद्ध का सारा इन्तजाम कर चुके हैं पुरोहितजी। अब उन्हें वरेन का इन्तजार है कि आयें तो काम शुरू हो। अपर्णा का एक बार कोने वाले कमरे में जाना बहुत जरूरी हो गया है, क्योंकि मन बहुत परेशान होने लगा है। सुबह के साढ़े दस बज चुके हैं, लेकिन रंजन के घर से अभी तक फोन नहीं आया। पिछली रात उन्होंने फोन नहीं किया था। पता नहीं, रंजन किस गाड़ी से आया। क्या उन लोगों को चाहिये नहीं था कि एक फोन करें ? बेशक, अपर्णा की बेटी की शादी है, मगर उनके बेटे की भी तो शादी है। आखिर ऐसा भी क्या गरूर दिखाना ?

अपर्णा कोने वाले कमरे में गईं। वरेन सोम कमरे में ही थे। अपर्णा की निगाह क्षण भर को उन पर टिकी, फिर फिसल गई। वरेन ने शेव किया है। नहा चुके हैं। रेशमी धोती बाँधी है, अंगवस्त्र भी रेशमी है। रात भर के जागरण की थकान और आलस का नामो-निशान नहीं, पर मुख-मुद्रा बहुत ही गंभीर है। अपर्णा को लगा, बाईस वर्ष से परिचित मुख पर आज कुछ अपरिचित भावनायें चमक रही हैं। अगर जरा ध्यान से देखतीं तो जो कुछ अपरिचित लग रहा था, उसे वे आसानी से पढ़ लेतीं। पर उन्होंने देखा नहीं, ध्यान भी नहीं दिया।

अब तो अन्तिम फैसले का वक्त आ गया है, अब और विचार-विश्लेषण की क्या जरूरत ? वह सब तो पिछले बाईस वर्षों में बहुत हो चुका।

रिसीवर उठाया। डायल किया। धत् तेरे। एनगेज्ड !

रख दिया रिसीवर। वरेन की उपस्थिति में वे वहाँ इन्तज़ार करना नहीं चाहतीं। बाहर आईं। दस मिनट बाद फिर गईं। फिर रिसीवर उठाया। डायल किया। साथ ही कोफ्त के मारे नाक-मुँह पिचकने लगा। उसी वक्त, पिचके मुँह से वरेन से दृष्टि-विनिमय हुआ।

अभी भी एनगेज्ड! पटक दिया रिसीवर। तनतनाती कमरे से बाहर आ गईं।

तीसरी बार आईं। चौथी बार फिर फोन किया। एनगेज्ड-एनगेज्ड-एनगेज्ड! माजरा क्या? गुस्से से विस्मय अधिक। आखिरकार कोई भी कितनी देर तक फोन पर बात करता है? कर सकता है? कब तक एनगेज्ड रह सकता है नम्बर?

डायल किया। वन-नाइन-नाइन। आपरेशन एसिस्टेन्स। उन्हें नम्बर दिया। उन्होंने भी प्रयास किया। उन्हें भी एनगेज्ड मिला। वन-नाइन-नाइन ने कहा कि नम्बर में कोई खराबी है, कोई बोलता नहीं। रिंग होने पर एनगेज्ड सिगनल आ रहा है।

बहुत क्रोधित हुईं। सहनशीलता ने दम तोड़ दिया। उनकी ऐसी हालत और वे महाशय परम निश्चिन्तता से अखबार खोले बैठे हैं। अपर्णा को सन्देह हुआ कि उनके होठों के कोरों में हल्की सी मुस्कराहट थिरक रही है। उन्हें लगा कि महाशय उनकी परेशानी का आनन्द उठा रहे हैं।

अपर्णा ने स्वभाव-विरुद्ध तेजी से कहा, 'पुरोहितजी बड़ी देर से इन्तजार कर रहे हैं। क्या इरादा है तुम्हारा? क्या तुम्हें खास-तौर से पत्र लिख कर बुलावा भेजना पड़ेगा?'

वरेन सोम की आँखों के सामने से अखबार हटा। धीरे-धीरे उठे, अपर्णा को पूर्ण दृष्टि से देखा। बोले, 'व्यर्थ में इतना परेशान नहीं ही होओ तो बेहतर है।' कमरे से बाहर हो गये।

अपर्णा को एक बार चौंकना पड़ा। यह क्या देख रही हैं? कैसा स्वर सुन रही हैं आज? इतने वर्षों से परिचित मुख पर यह कैसी अपरिचित रेखायें? हटाओ। छोड़ो। अब ऐसी बातों पर सिर खपाने का न तो वक्त है, न धीरज। वे भी बाहर आईं। समझ नहीं पा रही थीं कि क्या करें, कैसे करें। बड़े आये हैं सान्त्वना देने वाले! परेशान होने को मना कर गये, ऐसे, जैसे कितना बोध है उन्हें अपर्णा की परेशानी का। जैसे अपर्णा जानती नहीं कि आज के काम में जरा भी गड़बड़ी मचे तो इन्हें कितनी खुशी होगी।

विभिन्न लोगों की फर्मायशें पूरी करते, तरह-तरह के काम निपटाते काफी वक्त निकल गया। फिर जब समय का ख्याल हुआ तब एक बजे थे। कानों के पीछे फटा जा रहा है, चक्कर भी आने लगा है रह-रह कर। उन लोगों का फोन अभी तक नहीं आया है। आयेगा क्यों भला? उनकी बेटी है, अतः जिम्मेदारी भी उ

'समीरण सा'ब। दो बार तकाजा भी कर चुके हैं, तुम्हें पकड़ ही नहीं पा रही थी।'

अपर्णा विस्मय से देखने लगीं। फिर शिकंजी का गिलास होठों से लगाया। खाली गिलास वृन्दा को पकड़ा कर जब चलने लगी तब उनके पाँव रुक गये। सामने वाले कमरे से धुँआ निकल रहा है। लगता है कुण्ड में और समिधा पड़ी। हवन हो रहा है। कुछ देर पहले उधर से निकलते समय उन्होंने देखा था, हवन कुण्ड के सामने बैठा वह आदमी आग की लपटों की गर्मी और धुँयें से परेशान हो रहा है। सुबह से उसका भी व्रत चल रहा है। इधर वृद्धि का काम देर से शुरू होने के कारण पता नहीं कितनी देर हो जाये। हाय-हाय! इधर उन्होंने तो शिकंजी पी, अपनी भूख-प्यास शान्त कर ली। वृन्दा पर गुस्सा आने लगा। क्या जरूरत थी उसको शर्बत का गिलास लेकर आने की? बात और कुछ नहीं, जैसे औरों की स्वार्थपरता अपर्णा को सह्य नहीं, वैसे ही अपनी स्वार्थपरता भी उन्हें बर्दाश्त नहीं।

समीरणजी आधे घण्टे में ही लौट आये। उन्हें देखते ही अपर्णा को खटका हुआ। करीब आकर बोले, 'वह....मतलब रंजन तो अभी वापस नहीं आया है....वे कह रहे थे।'

अपर्णा की चीख निकल गई, 'नहीं आया? मतलब क्या है आपका?'

'इतना घबराओ मत। कौन बहुत दूर गया है। मुहूर्त तो रात को आठ बजे का है। उसके बाद और भी मुहूर्त हैं। वह अपने वक्त से जरूर लौटेगा। आधुनिक युग का लड़का है, हमारी-तुम्हारी तरह दकियानूसी नहीं।'

अपर्णा बिफर उठी, 'आधुनिक है तो क्या अण्ट-शण्ट काम करेगा?'

बारात लाने के लिये गाड़ी भेजने की बात पर अपर्णा ने जो सुना, उससे वे भचकचा गईं। नाराज भी हुईं। रंजना के पिता ने कहा है कि सारी बातचीत कन्या के पिता से हो गई है। समीरणजी से व्यंग्य में उन्होंने कहा, 'उनसे न पूछ यहाँ क्यों आये हैं?'

अपर्णा की बोलती बन्द होने लगी। समझ न पाईं क्या सोचें, क्या नहीं। उन्होंने देखा कि समीरण जी भी असन्तुष्ट होकर लौटे हैं। मन में काँटा सा चुभने लगा। हो न हो, रंजन के पिता ने इनके विषय में कुछ ऐसा सुना है जिससे उन्होंने इनके साथ अच्छा बर्ताव नहीं किया है। किससे सुना होगा? किसने उगला होगा जरूर? रंजन ने कहा होगा? नामुमकिन बात। ऐसी बातों में दिमाग खपाने वाला नहीं है वह। कन्या के पिता से उनकी क्या बातें हुईं? कौन सी बातें हुईं? चल गये थे वे? अपर्णा ने पिछले दिनों की घटनाओं पर विहंगम दृष्टि दौड़ाई। उन्हें बिना बताये तीन हजार रुपये दे आये। बारात लाने का पक्का कर आये, यह सब क्यों? यह तो वह मानने को तैयार नहीं कि पलो का

घटाने के लिये स्वतः प्रवृत्त होकर उन्होंने यह सब किया होगा। वहीं खड़ी-खड़ी कोने वाले कमरे की ओर देखा। हवन कुण्ड से शिखायें उठ रही हैं।

आगे बढ़ीं। चौखटा पार कर कमरे में पाँव रखा। पालथी मारे बैठे हैं, रीढ़ एकदम सीधी। पुरोहित के साथ मंत्रोच्चार हो रहा है। धुँआ और गरमी से आँखें लाल, पसीने से तर-बतर।

घड़ी की सुइयाँ शाम के पाँच बजा रही हैं। घर में न जाने कितने लोग आये हैं। जाने कहाँ-कहाँ से। हर आदमी व्यस्त। चारों तरफ चीख-पुकार। दौड़-धूप। एक अज्ञात आशंका से काँप उठीं अपर्णा। सुबह वाली परेशानी बढ़ती ही जा रही है। सचेतन मन से उसे जितना हटाना चाह रही हैं, उतनी ही मजबूती से पलट कर जकड़ रही है वह। बाँई आँख फिर फड़कने लगी। बड़ी देर से मौके की तलाश में थीं। पाँच बजते ही काम छोड़ कर उठीं। कोने वाले कमरे की ओर चलीं।

उनके कमरे में पहुँचने से पहले उस कमरे से निकली सुपर्णा। किसी से फोन पर बात करने गई होगी। अप्रसन्न लग रही थी वह। बड़बड़ा उठी, 'सुबह से ही यह फोन खराब है। अभी तक ठीक नहीं हो सका।'

अपर्णा अवाक् रह गईं। 'आज भी तू वहाँ फोन करने गई थी?'

'क्यों घबराती हो माँ? मैं अपना नाम थोड़े ही बताती। उस नवाब की भाभी को बुलाती।'

अपर्णा ने देखा, बेटी चिन्तित है। अब तक अपने मन पर छाई आशंका को बे-सिरपैर की चिन्ता आख्या दे रही थीं वे। तो क्या रंजन अभी तक, पाँच बजे तक भी नहीं लौटा होगा? धत् तुम्हारे की! कैसी अपशकुन बात सोच रही हैं वे। बेटी की चिन्ता को तरह न दे बोलीं, 'जा बेटा, तैयार हो जा। तुझे तैयार करने के लिये सीमा वगैरह सामान सजाये कब से राह देख रही हैं। तेरे पापा कहाँ हैं?'

'दिखाई तो नहीं पड़ते। तुम पापा को ढूँढ़ रही हो माँ?' बेटी की आँखों में उत्सुकता छलकी।

जवाब न दे सिर हिलातीं अपर्णा ने कमरे में पाँव रखा। क्षण भर खड़ी सोचती रहीं। पूछने आई थीं गाड़ी भेजने की बात पर ये क्या तय कर आये हैं। साथ ही उनके हाव-भावों को पढ़ कर बाकी बातों का अनुमान लगाने का भी इरादा था। उन्हें मालूम नहीं, वे नीचे गये हैं या नहीं। किसी को भेज बुलवा तो सकती हैं, मगर जिससे भी कहेंगी वही सुपर्णा की तरह चकित होगा।

आहट पा घूम कर देखा, थाली लिये वृन्दा खड़ी है। उन्हें देख कहने लगी, 'मैं क्या करूँ? हवन पूरा होते न होते मैं ऊपर आई। बाबू थे ही नहीं। उसके बाद दो-तीन बार आई थाली लगा कर मगर एक बार भी नहीं मिले। नीचे जा कर पूछा तो सुना ऊपर आये हैं, थाली ले कर दौड़ी आई, यहाँ भी नहीं हैं।'

अपर्णा ने वृन्दा से कह रखा था कि हवन पूरा होते ही बरेन को कुछ खिला-पिला दे। मगर देखा जा रहा है कि अभी तक वैसे ही हैं। यह अपर्णा को नीचा दिखाने का एक और तरीका नहीं हुआ तो और क्या हुआ ?

बरामदे में आईं। थोड़ी ही देर में वृन्दा फिर आई। कहने लगी, 'मंझली बुआ कह रही हैं कि बाबू अभी कुछ देर पहले कपड़े पहन कर बाहर गये हैं ?'

घड़ी में पाँच बज कर पन्द्रह मिनट।

अपर्णा को चक्कर आ रहा है। मुख लाल, कान और भी ज्यादा लाल। दिमाग भन्ना रहा है। नीचे, ऊपर सर्वत्र शादी के घर का शोर-शराबा, मगर वह अब उन्हें स्पष्ट सुनाई नहीं पड़ रहा है। लग रहा है, दूर कहीं कुछ हो रहा है।

कमरा बन्द कर सुपर्णा तैयार की जा रही है। सहेलियाँ उसकी वहीं हैं। अभी घण्टे भर लगेंगे उसे तैयार होने में।

ख्यालों में खोई बैठी थी अपर्णा। अचानक चौंक कर वास्तव लोक में लौट आईं। समीरणजी सामने खड़े हैं। आँखों के इशारे से उन्होंने बुलाया। फिर, बिना कुछ बोले बरामदे के परले सिरे की ओर चलने लगे।

अपर्णा का दिल धक् से रह गया। लगने लगा कि अवश्य ही कोई अशुभ सूचना मिलने वाली है। वे आगे बढ़ीं।

पास पहुँचते ही समीरणजी ने बहुत धीरे से कहा, 'तुमसे जरूरी बात करनी है, मगर यहाँ तो....'

'आइये मेरे साथ।'

अपर्णा का दिल जोर-जोर से धड़क रहा है। पाँव भी सीधे नहीं पड़ रहे हैं। किसी की तरफ ध्यान नहीं उनका। समीरणजी को साथ ले सीधे कोने वाले कमरे में गईं, जिस कमरे में बिना वजह कोई पाँव नहीं रखता।

कमरे में पहुँच समीरणजी ने पूछा, 'बरेन कहाँ ?'

'सुना है बाहर गये हैं। क्यों ?'

समीरणजी को जवाब सुनने का मौका न मिला। दरवाजे से हँसने और चलने की आहट आई। खिसियाई अपर्णा ने पलट कर देखा। छोटी बहन सीमा और उसका पति प्रशान्त। शादी के घर के भम्भड़ में अकस्मात् दीदी और समीरणजी को एकान्त में बात करते देख वे भी झेंप गये हैं। फिर भी सीमा के मुख पर खुशी और आनन्दित होने का पूर्ण आभास। बोली, 'हाय माँ, तुम यहाँ हो दीदी, और मैं तुम्हें सारे जहाँ में खोजती फिर रही हूँ।'

'आ जा। मैं तो इधर अभी ही आई। कैसा है बेटे का बुखार? लाई है उसे या घर पर छोड़ आई ?'

'नहीं दीदी, घर पर नहीं छोड़ा। उसे भी ले आई हूँ। अभी भी थोड़ा बुखार है। बताओ न, कहाँ लिटाऊँ उसे ? मुझे तो कहीं जगह दीखती ही नहीं।'

'आ जा मेरे साथ', समीरणजी से बोलीं, 'आप यहीं ठहरिये। मैं अभी आई।'

बाहर आना पड़ा। सीमा के बेटे के लेटने का इन्तजाम पाँच मिनट बाद भी किया जाता तो कहर न टूटता। मारे आशंका के दिल फटा जा रहा था। शायद उसी कारण और डट कर धैर्य की परीक्षा दे रही हैं।

सीमा के बेटे के सोने का इन्तजाम पूरा होते ही चारों ही तरफ से लोगों ने घेरा। किसी को कुछ कहना था, किसी को कुछ और। वृन्दा बुला रही है, धीरा बुला रही है, दोनों देवर कुछ पूछने को आतुर हैं। लगा जैसे सारा इन्तजाम उन्हीं के हाथों में है, सारे सवालों की कुंजी उन्हीं की अण्टी में है। माथा फटा जा रहा था। सारा खून सिर पर चढ़ा जा रहा है। जी चाह रहा है कि सबको कस कर डाँट बतायें, शोर मचायें। उन्होंने लेकिन ऐसा नहीं किया। शान्त हो सबकी सुनती रहीं, सबको निर्देश देती रहीं। सारा काम पूरा कर शान्त चरणों से उधर ही चलीं, जिधर समीरणजी उनकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।

बाधा फिर आयी। इस बार प्रत्यक्ष नहीं, परोक्ष। सीमा दरवाजे के सामने खड़ी है। प्राणप्रण प्रयास से हँसी रोकती उनका जाना देख रही है। प्रशान्त उसके पीछे खड़ा, उसका पल्ला पकड़ कर खींच रहा है। उसके हाव-भाव से स्पष्ट है कि सीमा को वह किसी परम गोपनीय बात बताने से रोकने का विफल प्रयास कर रहा है।

अपर्णा के कदम रुक गये, 'क्या बात है रे ?'

प्रशान्त ने हड़बड़ा कर कहा, 'कुछ नहीं बड़ी दीदी। कुछ भी तो नहीं। आप जाइये अपना काम संभालिये।'

सीमा पर दृष्टि रख कर अपर्णा ने पूछा, 'तू हँस क्यों रही है ?'

अपने मन में फूटते लड्डुओं को बिखेरती सीमा बोली, 'देखो न दीदी, यह कितना शरारती और कितना बदतमीज हो गया है। कह रहा था उस कमरे में समीरणजी और दीदी को एकान्त में सलाह करते देख लग रहा था कि उन्हीं दोनों की बेटी की शादी है।'

अपर्णा के तो आग ही लग गई। बड़े प्रयास से अपने को काबू में रखा। नहीं, वे क्रोध नहीं करेंगी। आज के दिन क्रोध नहीं करते। नहीं करना चाहिये। एक बात और भी है। उनकी शादी में बड़ी दीदी ने बड़ी सहायता की थी। इस कारण उनकी कृतज्ञता का अन्त नहीं। आज उन्होंने जो कहा, वह उसी कृतज्ञता के कारण कहा। व्यंग्य से नहीं। वे बड़ी दीदी को सुखी देखना चाहते हैं। उन्हें अभी भी आशा है कि बड़ी दीदी के जीवन में सुख आयेगा।

अपर्णा डाँट कर बोली, 'कल फोन पर तू कह रही थी सीमू कि हमारा यानी तेरा जमाना लद गया, लेकिन अभी देख रही हूँ कि तू सुपी से भी बच्ची है।'

रुकी नहीं फिर अपर्णा। इस कमरे में पहुँच कर देखा कि समीरणजी अशान्त चरणों से कमरे में टहल रहे हैं। इस बार मगर उतने करीब खड़ी न हो सकी।

'क्या कह रहे थे आप ?'

कुछ कहते-कहते समीरणजी रुक गये। बोले, 'क्या बात है ? तुम्हारा मुँह इतना लाल क्यों हो रहा है ?'

समीरणजी के प्रश्न पर अब तक का संजोया धीरज टूट गया। क्षुब्ध हो बोली, 'तमाम कारण हैं मुँह लाल होने के। आपका क्या ख्याल है ? जाने दीजिये। आप बताइये, आप क्या कहना चाह रहे थे ?'

थोड़ा रुक कर समीरणजी बोले, 'हवन पूरा होने के बाद धरेन से कोई बात हुई है तुम्हारी ?'

'नहीं।' अपर्णा की उत्सुक दृष्टि तीव्र हुई।

पशोपेश में पड़ कर समीरणजी कहने लगे, 'मुझे बड़ी चिन्ता हो रही थी, इसलिये मैं रंजन के घर फिर गया था। मुझे लक्षण अच्छे नहीं लग रहे हैं।'

अस्फुट प्रश्न किया अपर्णा ने, 'रंजन आया नहीं है ?'

'नहीं' में गर्दन हिलाते समीरणजी ने कहा, 'फिक्र मुझे इस बात की नहीं। अभी से आठ बजे तक दो गाड़ियाँ और हैं। हो सकता है वह प्राइवेट कार से आये।....मुझे, इस बात ने नहीं, उसके पिता की बातों ने चिन्तित किया है।'

सुनते ही अपर्णा का रंग फक पड़ गया। करीब आई। इतने करीब कि इतने सारे लोगों में अगर किसी की भी निगाह पड़े तो बड़ी लज्जा की बात हो जायेगी। पर अपर्णा को होश नहीं। 'क्या कहा है उन्होंने ?'

समीरणजी ने जो बताया उसका सार यह है कि दुबारा वे जब गये तब रंजन के पिता ने कहा कि शादी का क्या होगा, गाड़ी भेजना है या नहीं, यह सब व्यर्थ के प्रश्न करने वे बार बार उनके पास क्यों आ रहे हैं ? क्या होना है, क्या नहीं यह तो कन्या के पिता से पूछने से एक ही बार में स्पष्ट हो जायेगा। समीरणजी का ख्याल है, फोन बिगड़ा नहीं है, बिगाड़ा गया है।

अपर्णा निर्वाक्-निस्पन्द हो सुनती रही। दिमाग में न जाने कैसी उथल-पुथल मची है। कहीं गिर न पड़ें, अतः खाट पर बैठी। बैठते ही लगा लेट पातीं तो सुकून मिलता। पथराई सी बैठी रही और समीरणजी को देखती रही।

घड़ी ने छह बजाये।

इस बीच में दस चार ऊपर गईं, नीचे आईं अपर्णा। बरामदे के इस सिरे से उस सिरे तक कई चक्कर काटे। कई बार खाली कमरे में आकर बैठी रहीं। मुग्ध

लाल। प्रतीक्षा कर रही हैं। एक-एक क्षण की प्रतीक्षा एक-एक युग की प्रतीक्षा सी लग रही है। घर भर सब उन्हें देख रहे हैं। सभी का ख्याल है उत्तेजना और अति परिश्रम से ऐसी लग रही हैं वे।

घड़ी में छह बजते ही साड़ी बदल नीचे आईं अपर्णा। समीरणजी से बोलीं, 'आइये मेरे साथ।' अनेक जोड़े आँखों की चकित विस्मित दृष्टि को नकारती हुई समीरणजी को ले सीमा की गाड़ी में जा बैठीं। बोलीं, 'ड्राइवर से कहिये रंजन के घर चले।'

राह में एक बात भी नहीं हुई। गाड़ी रंजन के घर के सामने रुकी। अपर्णा उतरीं। समीरणजी से कहा, 'आप गाड़ी में ही बैठिये।'

आगे बढ़ किवाड़ का कुण्डा खटखटाया। रंजन के पिता सुविमल बोस ने स्वयं दरवाजा खोला। उन्हें और गाड़ी में बैठे समीरणजी को देख दृष्टि अप्रसन्न हो गई।

'आइये', बैठक में पहुँच कर बोले, 'बैठिये।'

अपर्णा बैठीं। सुविमल बाबू भी। अपर्णा जिज्ञासा से देखती रहीं।

लगा, सुविमल बाबू अपर्णा की स्थिर दृष्टि से कुछ बेचैन होने लगे हैं। बोले, 'कहिये, क्या कहना है आपको।'

'आपने मुझे पहचाना ?'

'न पहचानने का सवाल ही नहीं उठता। मगर आप ही बताइये, इस स्थिति में मैं क्या कर सकता था ?'

'रंजन आया है ?'

'नहीं।'

अपर्णा की दृष्टि अपलक, 'शायद आपको यह भी नहीं मालूम होगा कि वह आज लौटेगा या नहीं ?'

'लौट सकता है। पर जो हुआ है उसके बाद उसकी क्या जरूरत ?'

'हुआ है ? क्या हुआ है ?'

सुविमलजी हिचकिचाने लगे। फिर मन मजबूत करके बोले, 'अगर बरेन बाबू ने आपसे कुछ बताया न हो तो इसमें मेरी कौन सी गलती है ? मगर यहाँ उन्होंने रंजन से क्या नहीं कहा और क्या नहीं किया !'

अपर्णा इन बातों को बुद्धि द्वारा ग्रहण करने का व्यर्थ प्रयास करने लगीं, 'उन्होंने जो कहा है वह मुझे बताने में कोई एतराज है आपको ?'

'एतराज किस बात का ? उन्होंने मेरे बेटे को कई तरह से इस शादी की ओर न बढ़ने को कहा। धमकाया। डराया। मैं क्रिमिनल कोर्ट का वकील हूँ, इन धमकियों

से मैं नहीं डरता, पर वहाँ बेटे की शादी करने की अब इच्छा भी नहीं। उन्होंने रंजन से कहा है कि सुपर्णा एकलौती सन्तान है, इस लालच से रंजन वहाँ शादी करना चाह रहा है। अगर रंजन मानेगा नहीं तो सुपर्णा के पिता की सम्पत्ति से उसे कानी कौड़ी भी नहीं मिलेगी। उन्होंने अपने चरित्र की बात भी बताई। यह भी कहा कि उनकी बेटी पहले दो बार शादी के लिये झुकी थी। यह भी वैसा ही मोह है। और यह भी कहा है कि बेटी की शादी के बाद आप उन्हें तलाक दे किसी दूसरे से....। जाने दीजिये, यह सब कहने का मन नहीं हो रहा है मेरा। असल बात यह है कि यह सब कच्चा-चिट्ठा खुलने के बाद रंजन अब राजी नहीं।'

अपर्णा को उठना है। उठीं। चल कर गाड़ी तक जाना है। चलीं। चलते-चलते एक बात याद आई। मुड़ कर कोने में मेज पर रखे फोन पर नजर दौड़ाई। रिसीवर क्रेड्ल के नीचे रखी है। मगर क्यों? किस डर से कायल हो इन्होंने आज सुबह से फोन बन्द कर रखा है? एक बात और याद आई। सुविमल बाबू के सामने जा खड़ी हुईं। 'सुना है आपने उनसे तीन हजार रुपये लिये हैं, क्या यह बात सच है?'

क्रोध से उफनता उत्तर आया, 'रुपये-पैसे की बात जो हुई या नहीं हुई, यह सब रंजन के साथ हुई है, मैं यह सब नहीं जानता, कुछ भी नहीं।'

चली आईं। समीरणजी ने गाड़ी का दरवाजा खोला। वे गाड़ी में बैठीं। गाड़ी चली। समीरणजी उन्हें देख रहे हैं। आँखें बन्द कर अपर्णा सीट से टिक कर बैठी रहीं।

चौंकीं। समीरणजी कन्धा हिला कर कुछ कह रहे हैं। गाड़ी घर के दरवाजे पर खड़ी है। शादी का घर। इस घर में आज शादी होनी थी। शादी का इन्तजाम चल रहा है पुरजोर। गाड़ी से उतरीं। घर के अन्दर पाँव रखे। किसी तरफ नहीं देखा। समीरणजी आ रहे हैं या नहीं, यह भी नहीं देखा। सीढ़ी चढ़ती सीधे उसी कमरे की तरफ चल पड़ीं जहाँ वे जानती हैं, वह व्यक्ति अवश्य मिलेगा।

मिला। एक नहीं दो। बाप और बेटी। सुपर्णा विवाह की साज-सज्जा में। बनारसी साड़ी, नये जेवर, चन्दन-चर्चित मुख ले पिता के तकिये में मुँह छिपा रो रही है सुपर्णा सोम।

बेटी से कुछ कह रहे थे वरेन। उनकी मुख-मुद्रा आषाढ़ के आकाश सी भारी। अपर्णा को देख रुक गये।

अपर्णा की आँखों से अंगार बरसने लगे थे। दिमाग से आग की लपटें उठने लगीं। आगे बढ़ीं। पलंग के एकदम पास। 'सुपी।'

माँ का कठोर तीव्र स्वर सुन रोती सुपर्णा हड़बड़ा गई। उठ बैठी। आँसुओं ने प्रसाधन धो डाला है।

'अपने कमरे में जा सुपी।'

कर रही हैं। एक-एक क्षण की प्रतीक्षा एक-एक युग की प्रतीक्षा सी
घर भर सब उन्हें देख रहे हैं। सभी का ख्याल है उत्तेजना और अति
ो लग रही हैं वे।

में छह बजते ही साड़ी बदल नीचे आईं अपर्णा। समीरणजी से बोलीं,
ाय।' अनेक जोड़े आँखों की चकित विस्मित दृष्टि को नकारती हुई
ले सीमा की गाड़ी में जा बैठीं। बोलीं, 'ड्राइवर से कहिये रंजन के

में एक बात भी नहीं हुई। गाड़ी रंजन के घर के सामने रुकी। अपर्णा
रणजी से कहा, 'आप गाड़ी में ही बैठिये।'

बढ़ किवाड़ का कुण्डा खटखटाया। रंजन के पिता सुविमल बोस ने
खोला। उन्हें और गाड़ी में बैठे समीरणजी को देख दृष्टि अप्रसन्न हो

ये', बैठक में पहुँच कर बोले, 'बैठिये।'

ीं बैठीं। सुविमल बाबू भी। अपर्णा जिज्ञासा से देखती रहीं।

, सुविमल बाबू अपर्णा की स्थिर दृष्टि से कुछ बेचैन होने लगे हैं। बोले,
कहना है आपको।'

ने मुझे पहचाना?'

पहचानने का सवाल ही नहीं उठता। मगर आप ही बताइये, इस स्थिति
र सकता था?'

न आया है?'

ें।'

र्णा की दृष्टि अपलक, 'शायद आपको यह भी नहीं मालूम होगा कि वह
। या नहीं?'

ट सकता है। पर जो हुआ है उसके बाद उसकी क्या जरूरत?'

ा है? क्या हुआ है?'

वमलजी हिचकिचाने लगे। फिर मन मजबूत करके बोले, 'अगर बरेन बाबू
छ बताया न हो तो इसमें मेरी कौन सी गलती है? मगर यहाँ उन्होंने
या नहीं कहा और क्या नहीं किया!'

र्णा इन बातों को बुद्धि द्वारा ग्रहण करने का व्यर्थ प्रयास करने लगीं,
कहा है वह मुझे बताने में कोई एतराज है आपको?'

तराज किस बात का? उन्होंने मेरे बेटे को कई तरह से इस शादी की ओर
कहा। धमकाया। डराया। मैं क्रिमिनल कोर्ट का वकील हूँ, इन धमकियों

रो मैं नहीं डरना, पर यहाँ बेटे की शादी करने की अब इच्छा भी नहीं। उन्होंने रंजन से कहा है कि सुपर्णा एकलौती सन्तान है, इस लालच से रंजन यहाँ शादी करना चाह रहा है। अगर रंजन मानेगा नहीं तो सुपर्णा के पिता की सम्पत्ति से उसे कानी कौड़ी भी नहीं मिलेगी। उन्होंने अपने चरित्र की बात भी बताई। यह भी कहा कि उनकी बेटी पहले दो बार शादी के लिये झुकी थी। यह भी वैसा ही मोह है। और यह भी कहा है कि बेटी की शादी के बाद आप उन्हें तलाक दे किसी दूसरे से....। जाने दीजिये, यह सब कहने का मन नहीं हो रहा है मेरा। असल बात यह है कि यह सब कच्चा-चिट्ठा खुलने के बाद रंजन अब राजी नहीं।'

अपर्णा को उठना है। उठीं। चल कर गाड़ी तक जाना है। चलीं। चलते-चलते एक बात याद आई। मुड़ कर कोने में मेज पर रखे फोन पर नजर दौड़ाई। रिसीवर क्रेड्ल के नीचे रखा है। मगर क्यों? किस डर से कायल हो इन्होंने आज सुबह से फोन बन्द कर रखा है? एक बात और याद आई। सुविमल बाबू के सामने जा खड़ी हुईं। 'सुना है आपने उनसे तीन हजार रुपये लिये हैं, क्या यह बात सच है?'

क्रोध से उफनता उत्तर आया, 'रुपये-पैसे की बात जो हुई या नहीं हुई, वह सब रंजन के साथ हुई है, मैं यह सब नहीं जानता, कुछ भी नहीं।'

चली आईं। समीरणजी ने गाड़ी का दरवाजा खोला। वे गाड़ी में बैठीं। गाड़ी चली। समीरणजी उन्हें देख रहे हैं। आँखें बन्द कर अपर्णा सीट से टिक कर बैठी रहीं।

चौंकीं। समीरणजी कन्धा हिला कर कुछ कह रहे हैं। गाड़ी घर के दरवाजे पर खड़ी है। शादी का घर। इस घर में आज शादी होनी थी। शादी का इन्तजाम चल रहा है पुरजोर। गाड़ी से उतरीं। घर के अन्दर पाँव रखे। किसी तरफ नहीं देखा। समीरणजी आ रहे हैं या नहीं, यह भी नहीं देखा। सीढ़ी चढ़ती सीधे उसी कमरे की तरफ चल पड़ीं जहाँ वे जानती हैं, वह व्यक्ति अवश्य मिलेगा।

मिला। एक नहीं दो। बाप और बेटी। सुपर्णा विवाह की साज-सज्जा में। बनारसी साड़ी, नये जेवर, चन्दन-चर्चित मुख ले पिता के तकिये में मुँह छिपा रो रही है सुपर्णा सोम।

बेटी से कुछ कह रहे थे वरेन। उनकी मुख-मुद्रा आषाढ़ के आकाश सी भारी। अपर्णा को देख रुक गये।

अपर्णा की आँखों से अंगार बरसने लगे थे। दिमाग से आग की लपटें उठने लगीं। आगे बढ़ीं। पलंग के एकदम पास। 'सुपी।'

माँ का कठोर तीव्र स्वर सुन रोती सुपर्णा हड़बड़ा गई। उठ बैठी। आँसुओं ने प्रसाधन धो डाला है।

'अपने कमरे में आ सुपी।'

सुपर्णा के कन्धे पर वरेन ने हाथ रख कर उसे रोका। उसे उठने को मना करने का इशारा था यह। अपर्णा से बोले, 'वह यहीं रहेगी।'

अपर्णा की इच्छा हुई कि मुँह झुलस दें इस आदमी का। उसी कठोरता से कहा, 'जा, अपने कमरे में जा।'

वरेन सोम का स्वर उनके मुख सा ही भारी था। बोले, 'मैंने उसे यहाँ बुलाया है। जो मुझे कहना है वह बात पूरी हो जाने दो, फिर चली जायेगी।'

अपर्णा के मन में उबलते क्रोध, घृणा और वितृष्णा के बावजूद भी उन्हें आश्चर्य हुआ। यह कैसा आदमी है? ऐसे हीन, घृण्य आचरण के बाद भी इतने आत्मविश्वास से बोलने का साहस इसे कहाँ मिला?

वरेन सोम का ध्यान बेटी पर गया। शान्त और आत्मविश्वास से पूर्ण स्वर में कहने लगे, 'बेटी, तूने अपनी माँ से सुना-जाना है कि मैं अच्छा नहीं, मैं बहुत बुरा हूँ। मैं बुरा हूँ, इसलिये कौन अच्छा है, कौन नहीं, इस बात को मैं बड़ी जल्दी पकड़ लेता हूँ। और किसी की नहीं, तो उस रंजन बोस की थाह तो मैंने पा ही ली। मैंने उससे जो कहा, उसे सुन अगर वह मेरा अपमान करता, मुझे घर से निकाल देता, यहाँ आ तुमसे और तेरी माँ से मेरी शिकायत करता, तो तुम दोनों ही मुझसे और घृणा करतीं, मगर मुझे खुशी होती। मैं समझ जाता, वह सच्चा हीरा है, तू जीवन भर सुखी रहेगी। उसने वह नहीं किया। मैंने जो तीन हजार रुपयों का जाल बिछाया, वह उसमें फँस गया। उतना ही फायदा मान तुझे छोड़ कर चला गया। तीन हजार की लालच में वह तो तुझे नीलाम पर चढ़ा देगा। मैं जैसा हूँ, सो हूँ, पर तू किसके पास जा रही थी?'

पिता को अपलक देख रही थी सुपर्णा। अपर्णा भी। जिससे इतनी घृणा है, इतनी नफरत करती हैं, जिससे, आज उसके मुख पर क्या देख रही हैं? क्या सुन रही हैं उसके मुख से? अपर्णा किसी निष्कर्ष पर पहुँच नहीं पा रही थीं।

उसी एकाग्रता से, उसी गंभीरता से वरेन सोम ने कहना जारी रखा। बेटी के मुख से दृष्टि हटाये बिना कहते रहे, 'और यह जो लड़का आ रहा है तेरे लिये, यह विकास सिन्हा, उसे तूने देख कर भी नहीं देखा। उसके न माँ हैं न बाप। रूखी-सूखी खाकर बड़ी तकलीफ से दो छोटे भाइयों को पाला है उसने। नौकरी करता था और रात को कालेज में पढ़ता था। उन दिनों भी दफ्तर के काम से मेरे पास आता था। उन दिनों मैंने उसे ध्यान से देखा नहीं था, उसमें क्या बड़प्पन है, उसे पहचानने का प्रयास नहीं किया था। बी० ए०, एम० ए०, पास कर वह मुझे प्रणाम करने आया। डिपार्टमेण्टल परीक्षायें एक-एक कर पास करता रहा। हर बार मुझे प्रणाम करने आया। आफिसर ग्रेड में आने के बाद प्रणाम कर मेरे सामने खड़ा हुआ। कहा, 'आप जानते हैं मैं क्या था। आपकी बेटी के लिये, उसे अपनाने की आशा में यह बना हूँ। अपनी योग्यता को और बढ़ाने का भरसक प्रयास करता रहूँगा। क्या आप मुझे अपनी बेटी देंगे?'

कहते-कहते वरेन सोम की आवाज भरने लगी। बोले, 'उस दिन मैंने पहली बार उसे देखा। एक सच्चा हीरा देखा। मुझे लगा, तेरे सुख का नीड़ तैयार है। मुझे लगा, तेरी माँ को कभी सुख नहीं मिला क्योंकि उसे योग्य घर-वर नहीं मिला। तू तो सुखी रहेगी। मगर दिक्कत यह है कि मैं अच्छा नहीं, मेरी बात मानेगा कौन? इस लिये उस दिन मैंने उसे वचन नहीं दिया। सिर्फ कहा कि कोशिश करूँगा। दो बार उस लड़के ने तेरी रक्षा की है। परछाई की तरह तेरे साथ रह कर तेरी सुरक्षा का इन्तजाम किया है। नाच के स्कूल के उस मास्टर का चिट्ठा उसी ने खोला। उसी ने उस शिल्पानुरागी व्यापारी की बात बता पत्र लिखा था। मैंने जो कुछ किया है, वह सिर्फ इसलिये किया है, क्योंकि मैं तुझे जानता हूँ। तेरा कल्याण ही चाहा है मैंने, और कुछ नहीं।' रुके। ध्यान से बेटी को देखा। फिर बोले, 'जा बेटा, तैयार हो ले। आठ बज रहे हैं। विकास आता ही होगा। इसी मुहूर्त में शादी है।'

सुपर्णा नहीं जानती कि उसे क्या करना है। फटी-फटी आँखों से पिता को देखती रही। प्रसाधन-चर्चित मुख पर आँसुओं का दाग बन गया था। कोमल-कमनीय मुख। उठी। चलने से पहले पिता के चरण छुये। माँ सामने खड़ी थी। उन्हें भी प्रणाम किया। फिर दरवाजे की ओर बढ़ी।

'सुपी!' अपर्णा पुकार उठीं। उनकी आवाज आर्तनाद सी थी। आर्तनाद क्रोध का था या हताशा का, या किसी और कारण, यह अपर्णा नहीं जानतीं।

सुपर्णा पलटी। आँसू के दाग लगे थे, किन्तु उदासी नहीं थी। प्यारा सा मुख, उज्ज्वल दृष्टि। प्रतीक्षा करती रही। पर माँ और कुछ बोलीं नहीं। सुपर्णा ने ही कहा, 'पापा ने जो उचित समझा है वही होगा माँ।'

सुपर्णा चली गई। अपर्णा वरेन के सामने खड़ी हुईं। एकदम आमने-सामने। अपर्णा को लगा, एक अपरिचित मुख देख रही हैं आज।

वरेन सोम चलने को हुये। दरवाजे के पास पहुँच कर रुके। अपर्णा को देखा। कैसी विचित्र दृष्टि! कितनी गहराई, कितनी अर्थपूर्ण। थोड़ी देर देखते रहे। जब बोले, तब स्वर में न कर्कशता थी न व्यंग्य। बल्कि इसके विपरीत था। बोले, 'एक मामले में तुम और मैं एकमत हैं। सुपी का कल्याण हम दोनों ही चाहते हैं। इसमें सुपी का अवश्य कल्याण होगा। तुम घबराओ मत।'

चले गये वरेन। मूर्तिवत् खड़ी रहीं अपर्णा। उधर ही देखतीं रहीं जिधर वरेन गये।

नौ

कन्यादान हो गया।

कन्या को विकास सिन्हा के हाथों सौंप दिया वरेन सोम ने। विवाह के मण्डप में स्वाभाविक मुखरता भी नहीं। देख सभी रहे हैं। सभी स्तब्ध। सभी निर्वाक्। कुछ दूर खड़ी हो अपर्णा भी देख रही हैं। देख रही हैं जो कन्यादान कर रहे हैं उन्हें। देख रही हैं जो दान स्वीकार कर रहा है उसे। देख रही हैं उसे जिसे दान में दिया जा रहा है।

कन्यादान के बाद कुछ देशाचार। फिर हवन। सप्तपदी। अनुष्ठान पूर्णता की ओर बढ़ रहा है। हवन के समय वर मंत्रोच्चार कर रहा है। मंत्र पढ़ाते-पढ़ाते बूढ़े पुरोहित एक-एक स्थान पर मंत्रों की व्याख्या कर रहे हैं। सभी लोग सुन रहे हैं। अपर्णा के कानों तक भी पहुँच रहा है। बाहर से वे बिलकुल शान्त हैं, पर अन्दर से काँप-काँप उठ रही हैं।

'ॐ सोमः प्रथमो विविदे, गन्धर्वो विविद उत्तरः
तृतीयो अग्निस्ते पतिः, तुरीयस्ते मनुष्यजा।'

(हे वधू! चन्द्र ने तुम्हें सबसे पहले अपनाया, इसी कारण तुम्हारा रूप चन्द्र-किरण सा है। उसके बाद तुम्हें स्वीकारा वाक् देवता गन्धर्व ने, इसी कारण तुम मधुर-भाषिणी हो। अग्निदेव तुम्हारे तृतीय पति हैं इस कारण तुम पवित्र हो। और, तुम्हारा चतुर्थ पति है मनुष्य, मैं।)

× × ×

'ॐ गृभनामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः
भगो अर्यमा सविता पुरन्धि मह्यं त्वादुर् गार्हपत्याय देवाः॥'

(हे वधू! तुम्हारे सौभाग्य-लाभ के लिये तुम्हारा हाथ मैं ग्रहण कर रहा हूँ—मैं तुम्हारा पति, ताकि तुम मेरे साथ जरा-प्राप्ति तक मिलित रह सको। भग, अर्यमा, सविता, पूषा, यह लोग तुम्हें मुझे दान करें जिससे तुम गृह और अपत्यधर्म का पालन कर सको।

× × ×

'ॐ अमोऽहमस्मि सा त्वं, सा त्वमस्यमोऽहम्,
सामाहमस्मि ऋक् त्वं, द्यौरहं पृथ्वी त्वम्।
तावेही विवहावहै, सहरेतो दधावहै,
प्रजां प्रजनयावहै, पुत्रान् विन्दावहै बहून्,
ते सन्तु जरदष्टयः। प्रियो रोचिष्णु सुमनस्यमानौ ॥'

(हे वधू ! मैं 'अम' तुम 'सा', तुम सा और मैं 'अम' अर्थात् हम भी वैसे ही अविच्छेद्य हैं। मैं साम और तुम ऋक् हो, मैं आकाश और तुम पृथ्वी। हम विवाह-सूत्र में बँध रहे हैं। हमारी सन्तान भी जरा-प्राप्ति तक जीवित रहे। हम एक अन्य के प्रिय, रुचिकर और मनोरंजनकारी हों। हम दोनों ही, एकत्रित होकर शत शरत् का दर्शन प्राप्त करें। हम ये शत शरत् आनन्द-मग्न हो जीवित रहें—और शत शरत् की वार्ता आनन्दित हो श्रवण करें।

अपर्णा थरथरा कर कांप उठी। लग रहा है कि दिमाग में न जाने क्या भरता चला जा रहा है। सिर बोझिल हो गया है। इतना बोझ सहा नहीं जा रहा। खड़े-खड़े पाँव कांप रहे हैं। अपने कमरे की दिशा में चल पड़ी। पता नहीं, पहुँच पायेंगी या नहीं।

पहुँची। कमरे के अन्दर गई। बैठी। बैठी ही रह गई।

अगले दिन सुबह।

बेटी की विदाई का दिन। आशीर्वाद की रस्म पूरी हो गई है। बुआ और मौसियाँ मंगलध्वनि से चारो दिशा तरंगायित कर रही हैं। गाड़ी खड़ी है। ट्रक में सामान चढ़ाया जा रहा है।

नव विवाहित दम्पति ने दुबारा प्रणाम किया। पहले अपर्णा को। फिर वरेन को। सुपर्णा रो रही है। अपर्णा से मगर रोया भी नहीं जा रहा है। उनका सारा ध्यान केन्द्रित है उस पर, जिसका नाम वरेन सोम है। उनकी दृष्टि आज मगर कन्या पर है, अपर्णा पर नहीं। उनकी आँखों में आँसू छलक रहे हैं। अपर्णा एक अपरिचित मुख देख रही हैं। कभी न देखा हुआ मुख देख रही हैं।

वे चले गये। बेटी-दामाद की विदाई पूरी कर धीर-शान्त कदमों से ऊपर चले गये वरेन सोम। अपर्णा ने देखा। देखती रही।

दोपहर।

खा-पी कर ननदें चली गई हैं। बहनें भी। दोनों देवर और देवरानियाँ भी। दोपहर शाम की ओर ढल रही है। वृन्दा को घवराई हुई आते देख और उसकी बात सुन अपर्णा को नये सिरे से एक और धक्का लगा। चिन्तित और कातर हो वृन्दा बोली, 'बाबू कहाँ जा रहे हैं माँ? टैक्सी खड़ी है। मधु को बुलाया है, सूटकेस और बिस्तरबन्द नीचे पहुँचाने के लिये! यह क्या होने चला है माँ?'

अपर्णा जैसी पथराई बैठी थीं, बैठी रहीं। हक्की-बक्की सी वृन्दा का मुँह ताकती रहीं।

'जाओ न माँ! देखो न! क्या हो गया तुम्हें? यों ही बैठी रह जाओगी या कुछ करोगी भी?'

अपर्णा उठीं। बहुत चक्कर आ रहा है। वृन्दा की बातें सुन तो रही हैं पर ठीक से समझ में नहीं आ रहा।

कमरे के बाहर आईं। धीरे-धीरे चल कर बरामदा पार किया, वही कमरा। चौखटे के सामने खड़ी हुईं। देखा। फिर अन्दर पाँव रखा।

सामने वाली दीवाल पर सुपी का बचपन का एक चित्र टँगा है। वरेन सोम की आँखें उसी पर लगी हैं। एक-टक। अपलक। ऐसा लग रहा है जैसे आखिरी बार के लिये देख रहे हों। आँखें सुबह-जैसी आँसू भरी।

देखती रहीं अपर्णा भी। उन्हें एक बार फिर लगा, एक अनजाना अपरिचित मुख देख रही हैं।

किसी की उपस्थिति का भान होते ही वरेन सोम ने मुड़ कर देखा। दृष्टि विनिमय हुआ। होता रहा। फिर मौन तोड़ वरेन ने कोमलता से कहा, 'कई सालों से हम दोनों को ही आज के दिन की प्रतीक्षा थी। मैं जा रहा हूँ। तुम्हारी यहाँ आने की जरूरत नहीं थी। जाने से पहले मैं तुमसे मिल कर ही जाता।'

अपर्णा निर्वाक्। यह कैसा अपरिचित मुख देख रही हैं?

'तुम से ही कह रहा हूँ। तुम समीरण से कहना कि इसके बाद तुम दोनों की जो भी राय होगी, मैं मान लूँगा। किसी प्रकार की बाधा मेरी तरफ से नहीं आयेगी। तुम्हें मुक्त करने की बात बहुत दिनों से सोच रहा हूँ। अपने मन को तैयार भी कर रखा है। इन्तजार नन्हीं की शादी का था। उसी के लिये रुका था। जीवन बीमा की तीन पालिसी हैं। पैसा पूरा दे दिया है मैंने। दो-तीन साल में उनकी अवधि पूरी हो जायेगी, रुपये मिल जायेंगे। तुम्हें जरूरत हो तो तुम्हीं ले लेना। न हो तो नन्हीं को दे देना। नौकरी छोड़ दी है मैंने। नन्हीं की शादी के लिये प्राविडेण्ट फण्ड से जो कर्ज लिया है वह सब काट-पीट लेने के बाद खास कुछ बचेगा नहीं। मैंने दफ्तर में

इन्स्ट्रुवशन दिया है, जो बचा-खुचा रहेगा वह सोम, वह रुपये नन्हीं को दे देंगे। उसके नाम लेटर आफ अथारिटी लिख कर दराज में रख दिया है। खर्च वगैरह के लिये मैंने दो हजार रुपये विकास को देने के लिये अलग रखा था। उसने लिया नहीं। उसी में से एक हजार मैं ले रहा हूं। एक हजार दराज में है। किसी के पैसे बाकी हों तो उस में से दे देना, अगर कुछ बचे तो नन्हीं को दे देना।'

रुके। जो कहना था, कह दिया। स्नेहसिंचित दृष्टि अपर्णा पर प्रसारित हुई।

'मुझसे तुम्हें कुछ पूछना है?'

निरुत्तर रहीं अपर्णा। मूक। निर्वाक्। देख रही हैं। इस अपरिचित मुख की एक-एक रेखा से परिचित होने का प्रयास कर रही हैं।

वरेन सोम के होंठों के बीच एक हल्की सी रेखा दिखाई पड़ी। या शायद नहीं पड़ी। अगले ही क्षण पहले जैसे निर्लिप्त, निरुत्ताप, गंभीर। बोले, 'लग रहा है इतने कुछ के लिये तुम तैयार नहीं थीं। मैंने जो किया, तुम्हारी करुणा को जगाने के लिये नहीं किया। मुझे मालूम है कि मैं अच्छा नहीं। बहुत बुरा हूं मैं। फिर भी, यहां रहते वक्त कई बार ऐसा लगता था कि तुम अगर इतनी अकरुण न होतीं, अगर जरा भी प्रयास किया होता तुमने तो शायद मैं किसी हद तक सुधर सकता। उस दिन जो हुआ था, जिससे कहर टूटा, हो सकता है वह न होता। यहां रहने पर अपना यह भिखारी रूप अक्सर सामने आ जाता है, और वही मेरे लिये सबसे अधिक असह्य होता है। इसीलिये यह किया मैंने। अच्छा....'

चले गये। कमरे से निकलते वक्त, बरामदा पार करते वक्त, एक बार भी पीछे नहीं देखा। सीढ़ी पर कदमों की आहट। टैक्सी स्टार्ट हुई—चली गई।

अपर्णा वैसी ही खड़ी रहीं। चित्रार्पित सी। चक्कर बहुत तेजी से आ रहा है। गिर तो नहीं पड़ेंगी? धीरे-धीरे चल कर बिस्तर के करीब आईं। यह वही बिस्तर है जिसे बहुत सालों से हाथ तक नहीं लगाया था। कमरा चक्कर खा रहा है। खाट, फर्श सभी कुछ उलट-पुलट रहा है। आंखों के आगे अन्धेरा छा रहा है।

मगर इन सबों के बावजूद भी वे अपने सामने खड़ा देख रही हैं—अपरिचित मुख वाले एक अति परिचित व्यक्ति को।

कल बाईं आंख बहुत फड़की थी। कहते हैं स्त्रियों की बाईं आंख का फड़कना शुभ होता है। क्या अभी भी फड़क रही है? कल के सुने मंत्र इस वक्त भी हथौड़े की चोट कर रहे हैं उनकी चेतना पर। उनकी अनुभूति पर। साथ ही अभी की सुनी बातें भी। पर अपर्णा न तो ठीक से कुछ समझ पा रही हैं न उनका अर्थ ग्रहण कर पा रही हैं। जो साफ है, जो स्पष्ट है, वह है एक अति परिचित का अपरिचित मुख।

दोपहर।

खा-पी कर ननदें चली गई हैं। बहनें भी। दोनों देवर और देवरानियाँ भी। दोपहर शाम की ओर ढल रही है। वृन्दा को घबराई हुई आते देख और उसकी बात सुन अपर्णा को नये सिरे से एक और धक्का लगा। चिन्तित और कातर हो वृन्दा बोली, 'बाबू कहाँ जा रहे हैं माँ? टैक्सी खड़ी है। मधु को बुलाया है, सूटकेस और बिस्तरबन्द नीचे पहुँचाने के लिये! यह क्या होने चला है माँ?'

अपर्णा जैसी पथराई बैठी थीं, बैठी रहीं। हक्की-बक्की सी वृन्दा का मुँह ताकती रहीं।

'जाओ न माँ! देखो न! क्या हो गया तुम्हें? यों ही बैठी रह जाओगी या कुछ करोगी भी?'

अपर्णा उठीं। बहुत चक्कर आ रहा है। वृन्दा की बातें सुन तो रही हैं पर ठीक से समझ में नहीं आ रहा।

कमरे के बाहर आईं। धीरे-धीरे चल कर बरामदा पार किया, वही कमरा। चौखटे के सामने खड़ी हुईं। देखा। फिर अन्दर पाँव रखा।

सामने वाली दीवाल पर सुपी का बचपन का एक चित्र टँगा है। वरेन सोम की आँखें उसी पर लगी हैं। एक-टक। अपलक। ऐसा लग रहा है जैसे आखिरी बार के लिये देख रहे हों। आँखें सुबह-जैसी आँसू भरी।

देखती रहीं अपर्णा भी। उन्हें एक बार फिर लगा, एक अनजाना अपरिचित मुख देख रही हैं।

किसी की उपस्थिति का भान होते ही वरेन सोम ने मुड़ कर देखा। दृष्टि विनिमय हुआ। होता रहा। फिर मौन तोड़ वरेन ने कोमलता से कहा, 'कई सालों से हम दोनों को ही आज के दिन की प्रतीक्षा थी। मैं जा रहा हूँ। तुम्हारी यहाँ आने की जरूरत नहीं थी। जाने से पहले मैं तुमसे मिल कर ही जाता।'

अपर्णा निर्वाक्। यह कैसा अपरिचित मुख देख रही हैं?

'तुम से ही कह रहा हूँ। तुम समीरण से कहना कि इसके बाद तुम दोनों की जो भी राय होगी, मैं मान लूँगा। किसी प्रकार की बाधा मेरी तरफ से नहीं आयेगी। तुम्हें मुक्त करने की बात बहुत दिनों से सोच रहा हूँ। अपने मन को तैयार भी कर रखा है। इन्तजार नन्हीं की शादी का था। उसी के लिये रुका था। जीवन बीमा की तीन पालिसी हैं। पैसा पूरा दे दिया है मैंने। दो-तीन साल में उनकी अवधि पूरी हो जायेगी, रुपये मिल जायेंगे। तुम्हें जरूरत हो तो तुम्हीं ले लेना। न हो तो नन्हीं को दे देना। नौकरी छोड़ दी है मैंने। नन्हीं की शादी के लिये प्राविडेण्ट फण्ड से जो कर्ज लिया है वह सब काट-पीट लेने के बाद खास कुछ बचेगा नहीं। मैंने दफ्तर में

इन्सट्रक्शन दिया है, जो बचा-खुचा रहेगा वह लोग वह रुपये नन्हीं को दे देंगे। उसके नाम लेटर आफ अथारिटी लिख कर दराज में रख दिया है। खर्च वगैरह के लिये मैंने दो हजार रुपये विकास को देने के लिये अलग रखा था। उसने लिया नहीं। उसी में से एक हजार मैं ले रहा हूँ। एक हजार दराज में है। किसी के पैसे बाकी हों तो उस में से दे देना, अगर कुछ बचे तो नन्हीं को दे देना।'

रुके। जो कहना था, कह दिया। स्नेहसिंचित दृष्टि अपर्णा पर प्रसारित हुई।

'मुझसे तुम्हें कुछ पूछना है ?'

निरुत्तर रहीं अपर्णा। मूक। निर्वाक्। देख रही हैं। इस अपरिचित मुख की

एक-एक रेखा से परिचित होने का प्रयास कर रही हैं।

वरेन सोम के होंठों के बीच एक हल्की सी रेखा दिखाई पड़ी। या शायद नहीं पड़ी। अगले ही क्षण पहले जैसे निर्लिप्त, निरुत्ताप, गंभीर। बोले, 'लग रहा है इतने कुछ के लिये तुम तैयार नहीं थी। मैंने जो किया, तुम्हारी करुणा को जगाने के लिये नहीं किया। मुझे मालूम है कि मैं अच्छा नहीं। बहुत बुरा हूँ मैं। फिर भी, यहाँ रहते वक्त कई बार ऐसा लगता था कि तुम अगर इतनी अकरुण न होतीं, अगर जरा भी प्रयास किया होता तुमने तो शायद मैं किसी हद तक सुधर सकता। उस दिन जो हुआ था, जिससे कहर टूटा, हो सकता है वह न होता। यहाँ रहने पर अपना वह भिखारी रूप अक्सर सामने आ जाता है, और वही मेरे लिये सबसे अधिक असह्य होता है। इसीलिये यह किया मैंने। अच्छा....'

चले गये। कमरे से निकलते वक्त, बरामदा पार करते वक्त, एक बार भी पीछे नहीं देखा। सीढ़ी पर कदमों की आहट। टैक्सी स्टार्ट हुई—चली गई।

अपर्णा वैसी ही खड़ी रहीं। चित्रार्पित सी। चक्कर बहुत तेजी से आ रहा है। गिर तो नहीं पड़ेंगी ? धीरे-धीरे चल कर बिस्तर के करीब आईं। यह वही बिस्तर है जिसे बहुत सालों से हाथ तक नहीं लगाया था। कमरा चक्कर लगा रहा है। खाट, फर्श सभी कुछ उलट-पुलट रहा है। आँखों के आगे अन्धेरा छा रहा है।

मगर इन सबों के बावजूद भी वे अपने सामने खड़ा देख रही हैं—अपरिचित मुख वाले एक अति परिचित व्यक्ति को।

कल बाँई आँख बहुत फड़की थी। कहते हैं स्त्रियों की बाँई आँख का फड़कना शुभ होता है। क्या अभी भी फड़क रही है ? कल के सुने मंत्र इस वक्त भी हथौड़े की चोट कर रहे हैं उनकी चेतना पर। उनकी अनुभूति पर। साथ ही अभी की सुनी बातें भी। पर अपर्णा न तो ठीक से कुछ समझ पा रही हैं न उनका अर्थ ग्रहण कर पा रही हैं। जो साफ है, जो स्पष्ट है, वह है एक अति परिचित का अपरिचित मुख।

आज कितने दिनों से उनकी आत्मा एक आत्मध्वंसी शून्यता से भरी थी। बाईस साल से रीती थी वह। लेकिन यह आज क्या हुआ? उस विशाल मरु-प्रान्तर के किस कोने से, किस सुरंग से धूल से लिपटा यह मणि कहाँ से आया? कैसे चमकने लगा? अति परिचित व्यक्ति का अपरिचित रूप!

उसे अपर्णा सोम कैसे नकारेंगी? उससे मुँह फेर कर कैसे रहेंगी?